Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृत मंथन

143
-A
82

Haridwar

167882

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम कथा—१

अमृत मंथन

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

गुरुदत्त

Central Library
167882
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

081
167882

हिन्दी साहित्य सदन, नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

राम कथा

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
089.9143
GUR-A

१. अमृत मंथन
२. परम्परा
३. अग्नि परीक्षा

आर्य साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Religious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web: aryabooks...com

© भारती साहित्य सदन, १९७०

Central Library
167882

मूल्य : 35 रुपये

AMRIT MANTHAN : (Novel) : GURU DUTT

प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सदन
३०/९०, पी. कनाट सर्कस
मद्रास होटल के नीचे
नई दिल्ली-११०००१
फोन ३३६३५५७

संस्करण : १९९७

मुद्रक :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web: aarshsahitya.com

प्राक्कथन

भगवान श्रीराम के जीवन की कुछ घटनाओं को आधार बनाकर यह उपन्यास लिखा गया है।

वैसे तो श्रीराम के जीवन पर सैंकड़ों ही नहीं, सहस्रों रचनाएं लिखी जा चुकी हैं, इस पर भी जैसा कि कहते हैं—

हरि अनन्त हरि कथा अनन्त।

भगवान राम परमेश्वर का साक्षात अवतार थे अथवा नहीं, इस विषय पर कुछ न कहते हुए यह तो कहा ही जा सकता है कि उन्होंने अपने जीवन में जो कार्य सम्पन्न किया वह उनको एक अतिश्रेष्ठ मानव के पद पर बैठा देता है। लाखों, करोड़ों लोगों के आदर्श पुरुष तो वह हैं ही। और केवल भारतवर्ष में ही नहीं बीसियों अन्य देशों में उनको इस रूप में पूजा जाता है। राम कथा किसी न किसी रूप में कई देशों में प्रचलित है।

और तो और तथाकथित प्रगतिशील लेखक जो वैचारिक दृष्टि से कम्यूनिस्ट ही कहे जा सकते हैं, वे आर्यों को दुष्ट, शराबी, अनाचारी, दशरथ को लम्पट, दुराचारी लिखते हैं परन्तु राम की श्रेष्ठता को नकार नहीं सके।

राम में क्या विशेषता थी, पौराणिक कथा 'अमृत मंथन' का क्या महत्व था, राम ने अपने जीवन में क्या कुछ किया, प्रस्तुत उपन्यास में इसी पर प्रकाश डाला गया है।

यह एक तथ्य है कि चाहे सतयुग हो, त्रेता-द्वापर हो अथवा कलियुग हो, मनुष्य की दुर्बलता उसमें उपस्थित पाँच विकार—काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार होती है और इन विकारों के चारों ओर ही मनुष्य का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन घूमता है। इन विकारों पर नियंत्रण यदि उसका आत्मा प्रबल है तो उसके द्वारा होनी चाहिए अन्यथा राजदण्ड का निर्माण इसी के लिए हुआ है। परन्तु जब ये विकार, किसी शक्तिशाली, प्रभावी राजपुरुष में प्रबल हो जाते हैं जो देश में तथा संसार में अशान्ति का विस्तार होने लगता है और तब श्रेष्ठ सत् पुरुषों को उसके विनाश का आयोजन करना पड़ता है और यही इतिहास बन जाता है। इन्हीं विकारों ने देवासुर संग्राम का बीज बोया, रावण तथा राक्षसों को अनाचार फैलाने की प्रेरणा दी, महाभारत रचा तथा आज के युग में भी देश के भीतर गृहयुद्ध तथा देशों में परस्पर युद्ध करा रहे हैं।

इन विकारों के प्रभाव में दुष्ट पुरुष सदा विद्यमान रहे हैं और आज भी प्रभावी हो रहे हैं। श्रेष्ठ जनों को संगठित होकर उनके विरुद्ध युद्ध के लिए तत्पर होना होगा। जो लोग, देश तथा जाति इस प्रकार के धार्मिक युद्धों से घबराती है वह पतन को ही प्राप्त होती है। दुष्टों के प्रभावी हो जाने से पूर्व ही जब तक उनके विनाश का आयोजन नहीं किया जाता, तब तक युद्धों को रोका नहीं जा सकता और ऐसे युद्धों के लिए सदा तत्पर रहना ही देश में शान्ति स्थिर रख सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम परिच्छेद

"कितने काल के उपरान्त आये हो अमृत ?" एक बयासी वर्ष के वृद्ध ने सामने बैठे युवक से पूछा। युवक वृद्ध का पौत्र था और उसकी पत्नी भी उसके समीप ही बैठी थी। युवक की माता सुन्दरी उस दम्पती के पीछे खड़ी बातें सुन रही थी।

युवक का नाम अमृतलाल था। उसने उत्तर में कहा, "बाबा ! पूरे ढाई वर्ष के उपरान्त ही यहाँ कुछ दिन रहने आया हूँ। बीच में एक बार विवाह कराने आया था, परन्तु उन दिनों विवाह की भाग-दौड़ में ही समय व्यतीत हो गया था। अब निश्चिन्त हो एक महीने का अवकाश लेकर आया हूँ। विवाह हुए भी डेढ़ वर्ष व्यतीत हो चुका है।"

"और बहू ! तुम सुनाओ, ठीक हो ?"

"हाँ बाबा !" युवती ने आँखें नीचे किये हुए कह दिया।

"पर तुम तो अकेली आयी हो ? डेढ़ वर्ष तक पति के पास रहते हुए क्या करती रही थीं ?"

"आपके पुत्र की सेवा ही करती रही।"

"उस सेवा का फल कुछ नहीं मिला ?"

महिमा इसका अर्थ समझती थी, परन्तु लज्जावश लाल मुख किये और आँखें झुकाये मौन बैठी रही। उत्तर देते हुए अमृत ने ही कहा, "बाबा ! आज के युग में सन्तान की इच्छा नहीं रही।"

"ओह !" वृद्ध के मुख से निकल गया, "तो तुम भी अज्ञान के अन्धकार में पड़े हुए अन्धकार का विस्तार कर रहे हो ?"

"वह कैसे बाबा ?"

"तो समझे नहीं ? अच्छा, यह बताओ, क्या वेतन लेते हो ?"

"ग्यारह सौ रुपया प्रति मास।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और कितना पढ़े हो ?"

"सिविल इन्जीनियरिंग की परीक्षा पास की है।"

"तुम सन्तान उत्पन्न करने से डरते हो। यह काम तुमने अनपढ़, मूर्खों और साधन-विहीनों के लिये सुरक्षित कर रखा है। अर्थात् मूर्ख साधन-विहीनों की मूर्ख सन्तान के लिये संसार सुरक्षित कर रहे हो।"

अमृत अभी इस कथन का अर्थ समझ ही रहा था कि उसकी माँ ने कह दिया, "अमृत ! अब चलो। इस बात को एकान्त में बैठकर विचार करना। चलो, सामान अपने कमरे में रख थोड़ा आराम कर लो। तब तक भोजन का समय हो जायेगा।"

अमृतलाल उठ पड़ा। महिमा अभी इस सबका अर्थ समझना चाहती थी, परन्तु सास के दोबारा कहने पर वह भी उठी और पति के साथ प्रथम मंज़िल पर अपने कमरे में चली गयी।

अमृत और महिमा का विवाह हुए डेढ़ वर्ष हो चुका था। दोनों की भेंट चण्डीगढ़ में एक पुस्तकों की दुकान पर हुई थी। महिमा की बी० ए० की परीक्षा हो रही थी और वह एक पुस्तक जिसमें से कुछ पृष्ठ लापता थे, वापस करने आयी थी। दुकानदार वापस नहीं कर रहा था कि तभी अमृतलाल, जो उन दिनों चण्डीगढ़ कॉरपोरेशन में चीफ इन्जीनियर था, वहाँ आ गया। उसे लड़की की युक्ति ठीक प्रतीत हुई थी, इसलिए वह लड़की की सिफारिश करने लगा। इस पर दुकानदार ने कह दिया, "श्रीमान् ! आप नहीं जानते। ये विद्यार्थी ऐसा ही करते हैं। पुस्तकें लीं, पढ़ीं और फिर किसी बहाने से वापस करने आ गये।"

लड़की सब विद्यार्थियों को बेईमान कहा जाता सुन क्रोध से लाल हो गयी और पुस्तक दुकान के काउण्टर पर पटक यह कहती हुई चल पड़ी, "बहुत बेईमान हो तुम !" यह कहते समय उसकी आँखों से आँसू छलक उठे थे।

अमृतलाल ने लड़की को बुलाकर पूछा, "कौनसी पुस्तक है और कितने दाम की है ?"

इसका उत्तर दुकानदार ने दिया और अमृत ने कहा, "पुस्तक की एक नयी प्रति इन्हें निकाल दीजिये। मूल्य मैं दे दूंगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़की ने कह दिया, "रहने दीजिये। मेरे पास इस समय पैसे नहीं हैं।"

"तो बाद में दे देना।"

"कहाँ दे दूँगी। मैं तो कल अपना अन्तिम पर्चा देकर घर चली जाऊंगी।"

"कहाँ की रहने वाली हैं?"

"बिलासपुर की।"

"मैं भी वहीं रहता हूँ। मैं ले लूंगा।"

"तब ठीक है। मैं पण्डित भृगुदत्त रिटायर्ड तहसीलदार की लड़की हूँ। आप अपना पता बता दीजिये। मैं पैसे वहाँ भेज दूंगी।"

"मैं पण्डितजी को जानता हूँ। उनसे ले लूंगा।"

अमृतलाल को यह लड़की अपनी पत्नी बनाने योग्य प्रतीत हुई। वह उसे सिंह-वाहिनी दुर्गा की मूर्ति जैसी ही दिखाई दी थी।

इस भेंट के परिणाम में ही दोनों का विवाह हो गया। लड़की बिलासपुर पहुँची तो उसने अपने पिता को बताया, "एक पुस्तक के लिये पैसे कम पड़ गये थे और एक सज्जन ने जो कि इस नगर के निवासी हैं, पच्चीस रुपये की पुस्तक खरीद दी थीं। वे कहते थे कि पैसे आपसे प्राप्त कर लेंगे। वे आपको जानते हैं।"

भृगुदत्त ने मुस्कराते हुए कहा, "उस बिलासपुर निवासी के पिता पैसे लेने आज ही आये थे और अपने पैसे ब्याज सहित माँग गये हैं। परन्तु ब्याज बहुत अधिक माँगा जा रहा है।"

"क्या माँगा है?"

"वे कहते हैं कि ब्याज में वस्त्र, भूषणों सहित महिमा मिलनी चाहिये।"

महिमा के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु शीघ्र ही जब वह उतरी तो उसका मुख लज्जा से लाल हो गया और आँखें झुक गयीं। तब वह एकाएक उठी और अपने कमरे में चली गयी।

इस प्रकार दोनों का विवाह हुआ। अमृतलाल अपने काम से पाँच दिन की छुट्टी लेकर आया था और विवाह के एक दिन उपरान्त ही काम पर चला गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों समझ-समझाकर सन्तान-निरोध के कृत्रिम उपकरणों का प्रयोग कर रहे थे और इतने काल तक सन्तान होने से बचते चले आ रहे थे। दोनों समझते थे कि वे एक बहुत बड़ी मुहिम तय कर आये हैं, परन्तु बाबा के कथन ने महिमा के मस्तिष्क में हलचल मचा दी थी।

पति-पत्नी नीचे अपने कमरे में आ अपना बिस्तर खोल और सूटकेस खाली कर सामान लगाने लगे। यह काम कुछ अधिक नहीं था, इस कारण वे शीघ्र ही इससे अवकाश पाकर बैठे तो पत्नी ने उन विचारों की चर्चा चला दी जो बाबा के कथन से उसके मन पर बोझा डाल रहे थे। उसने कहा, "बाबा के कहने से तो यही समझ में आया है कि हमें सन्तान की इच्छा करनी चाहिये थी ?"

"ओह ! तो तुम बाबा की बात पर विचार कर रही हो ?"

"हाँ।"

"छोड़ो इस बात को। एक बूढ़े एवं पिछली सदी के व्यक्ति की बात पर ध्यान नहीं देना चाहिए। मैं तो यह विचार कर रहा हूँ कि इस प्रकार की बातों से जीवन नीरस हो जायेगा। हम एक-दो दिन यहाँ रहकर मनाली चल देंगे।"

"मैं तो आपके माता-पिता से परिचय वढ़ाना चाहती हूँ और अपने माता-पिता से भी मिलना चाहती हूँ।"

"क्या लाभ होगा ? तुम्हारे माता-पिता और भाई-बहन तो अभी दो मास हुए चण्डीगढ़ आकर तुमको मिल गये थे।"

"मैं तो यहीं रहूँगी।"

"यह तो तुम मेरे साथ अन्याय करोगी।"

"डेढ़ वर्ष तक तो आपके ही साथ रही हूँ, उसके बाद भी एक मास की छुट्टी नहीं मिल सकता क्या ?"

"मैं अभी छुट्टी नहीं चाहता।"

"मैं अपने पिछले डेढ़ वर्ष के जीवन का अवलोकन करना चाहती हूँ। बाबा के कथन ने मेरे मस्तिष्क में हलचल मचा दी है।"

"तब तो बहुत कठिन होगा।"

"यहाँ आपकी अमृतसर वाली बहनजी भी आने वाली हैं। उनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी तो मिलना है।"

"न जाने वह कब आयेंगी। उनको लिखा तो था कि हम यहाँ आ रहे हैं।"

महिमा कुछ कहने ही वाली थी कि नौकर अमृतलाल की बड़ी बहन के अमृतसर से आने की सूचना लेकर आया। अतः दोनों उठ उसके स्वागत के लिए नीचे की मंज़िल पर आ पहुँचे।

प्रज्ञा अपने तीन बच्चों के साथ आयी थी। उसे एक पृथक् कमरे में ठहरा दिया गया। जब औपचारिक सुख-समाचार पूछा जा चुका तो महिमा और प्रज्ञा दोनों उठकर पुनः बाबा के कमरे में चली गयीं। वहाँ बाबा ने प्रज्ञा से पूछ लिया, "वेदप्रकाश नहीं आया?"

"वह कल या परसों आयेंगे। मैंने उनको कहा था कि मुझे ले भी जायें और आपके दर्शन भी कर जायें।"

"तुम्हें अकेला भेज दिया है। साथ ही चला आता तो वह भी कुछ दिन यहाँ रह जाता।"

"वहाँ बहुत काम रहता है।"

"क्या काम है?"

"वहाँ दो हायर सैकेण्डरी स्कूल, पाँच प्राईमरी स्कूल और एक कालेज के वे मुख्य प्रबन्धक हैं। घर का काम तो भगवान् भरोसे है, परन्तु इस सार्वजनिक कार्य से छुट्टी ही नहीं मिलती।"

"यह सब जल मथने के समान है। अच्छा, वेद आयेगा तो बात करूँगा।"

तभी महिमा ने पूछ लिया, "बाबा! क्या सन्तान उत्पन्न करना आवश्यक है?"

'यह समाज के प्रति मनुष्य का उत्तरदायित्व है। यदि सब ऐसा ही करने लगें जैसा कि अमृत ने बताया है तो भारतीय समाज दीन-हीन और मूर्ख हो जायेगा। ऐसा प्राचीन काल में घट चुका है और फिर श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करने के लिये समुद्र-मंथन करना पड़ता है।"

"इसका क्या अभिप्राय है?"

"वह बात मैं अमृत के सम्मुख करूँगा। वास्तव में वह उसके समझने की ही है। स्त्रियाँ तो बेचारी गौण भूमिका ही निभा सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। क्रियाशील तो पुरुष ही होता है।"

इस गौणत्व के उल्लेख से तो महिमा के मन में विद्रोह उठ खड़ा हुआ और वह अपने क्रियाशील बनने की योजना बनाने लगी।

बाबा ने बात बदल प्रज्ञा से पूछा, "प्रज्ञा ! अमृतसर से कैसे आयी हो ?"

"बाबा ! अम्बाला तक रेलगाड़ी से और वहाँ से चण्डीगढ़ और फिर यहाँ बस से।"

इस पर महिमा ने पूछ लिया, "बहनजी ! पहले कभी चण्डीगढ़ आने का कष्ट नहीं किया। इस छोटी बहन को मिलने,को जी नहीं किया न ?"

"जी तो बहुत करता रहा है, परन्तु भाभी ने कभी निमन्त्रण नहीं दिया। इस कारण बिन बुलाये जाने में संकोच होता था।"

"और यहाँ निमन्त्रण पर आयी हैं ?"

महिमा का विचार था कि वह बहुत ही युक्ति-युक्त बात कर रही है, परन्तु प्रज्ञा ने सहज स्वभाव कह दिया, "यह तो माता-पिता का घर है। यहाँ जन्म हुआ, खेली-कूदी, बड़ी हुई। यहाँ तो बिन बुलाये आने में संकोच नहीं हुआ।"

"तो यहाँ से अमृतसर क्यों गयी थीं ?"

"माता-पिता ने वहाँ किसी कार्य-विशेष से भेजा था। वह वहाँ यथा शक्ति सुघड़ाई से कर रही हूँ। यहाँ भी परमात्मा ने किसी कार्य-विशेष से भेजा है। वह कार्य भी कुशलतापूर्वक कर रही हूँ। यदि आप किसी कार्य के निमित्त बुलातीं तो मैं वहाँ भी अवश्य आती।"

महिमा इस परिवार में सबको युक्ति से बात करते सुन बहुत प्रभावित हुई थी। वह समझ रही थी कि इनके सम्पर्क में न आकर वह हानि ही उठा रही थी। इस समय सुन्दरी आ गयी और सबको भोजन के लिए चलने को कहने लगी।

ननंद-भाभी उठीं और नीचे खाना खाने के कमरे में चली गयीं। भोजन के समय महिमा गम्भीर भाव में बैठी इस नये वातावरण पर विचार करने लगी थी।

भोजन के उपरान्त वह अपने माता-पिता से मिलने चली गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृत अपने मित्रों से मिलने गया और प्रज्ञा यात्रा की थकावट दूर करने अपने कमरे में चली गयी।

: २ :

मध्याह्नोत्तर की चाय का प्रबन्ध बाबा के कमरे में ही कर दिया गया। यह विष्णुशरण की इच्छा थी। अमृत अपने मित्रों से और महिमा अपने माता-पिता से मिलकर लौट आयी थी। महिमा के साथ उसकी छोटी बहन गरिमा भी आ गयी था। महिमा को यद्यपि उसके साथ चले आने पर विस्मय हुआ था; इस पर भी उसे प्रसन्नता थी।

बाबा के कमरे में चाय के लिये बैठे तो विष्णुशरण ने पूछ लिया, "तो गरिमा भी अपने जीजाजी से मिलने आयी है ?"

"बाबा ! मैं बहन से मिलने आयी हूँ। आपके दर्शन तो फोकट में ही हो रहे हैं।"

विष्णुशरण ने बात बदलते हुए अमृत से पूछा, "तुम भी अपनी ससुराल गये थे ?"

"नहीं बाबा ! मैं मित्रों से मिलने गया था। कुछ से मिल आया हूँ और शेष से कल मिलूँगा।" अपने मित्रों को चर्चा का विषय न बनाने के लिये वह बात बदलकर बोला, "बाबा ! यह कौनसी पुस्तक चौकी पर रखी है ?"

बाबा के सामने चौकी पर एक मोटी-सी पुस्तक पड़ी थी। बाबा ने कहा, "यह बाल्मीकीय रामायण है।"

"पर बाबा ! यह पुस्तक तो मैं अपने बाल्यकाल से आपको पढ़ते देख रहा हूँ। यह समाप्त ही नहीं होती अथवा आप इसको बार-बार पढ़ा करते हैं ?"

"बार-बार पढ़ता हूँ।"

"क्या रस आता है एक बात को बार-बार पढ़ने से ?"

"पढ़ने में तो रस नहीं आता। हाँ, पढ़कर चिन्तन करने में रस भी आता है और लाभ भी होता है।"

"बहुत विचित्र है ?"

"हाँ। तुमने कभी किया प्रतीत नहीं होता। इसी से रस और लाभ को तुम नहीं जान सकते।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवक सबके लिये चाय और खाने के लिये पकौड़े ले आया था। अमृत का पिता सुरेश्वर बाबा के लिये चाय बनाने लगा। अन्य परिवार के लोग भी चाय बना-बना कर पीने लगे।

प्रज्ञा अपने चारों बच्चों को लेकर पृथक् बैठी थी और वह उनके लिये चाय बनाने लगी।

विष्णुशरण इस समय आँखें मूंदे विचार कर रहा था। एकाएक उसने आँख खोली और कहने लगा, "मैं चिन्तन को मंथन कहता हूँ और अमृत-मंथन की कथा का मंथन कर रहा था।"

"और मंथन से अभी विष निकला है अथवा नहीं?" सुरेश्वर ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

"हाँ, निकल चुका है। मेरे महादेव उसका पान कर हज़म भी कर चुके हैं।"

अमृत ने इसका कुछ भी सिर-पैर न समझते हुए पूछ लिया, "बाबा! पहेलियाँ मत डालिये। कुछ हमको भी समझा दीजिये।"

"कुछ धैर्य से सुनोगे तो समझ सकोगे।"

अमृत के लिये चाय उसकी पत्नी बना रही थी। उसने बाबा की बात सुन मुख ऊपर उठा कहा, "बाबा! इसी के लिये तो हम एक मास तक यहाँ रहने आये हैं।"

"तो मेरे चिन्तन के परिणामों को पूर्ण मास-भर सुनोगे?"

"हाँ बाबा! आपने कहा है न कि चिन्तन ही अमृत-मंथन है। परन्तु क्या चिन्तन से सदा अमृत ही निकलता है?"

"नहीं। यही तो अमृत के पिता ने पूछा है कि विष निकला है अथवा नहीं? और मैंने बताया है कि मेरे महादेव उसे पीकर अपने में धारण कर चुके हैं।"

"बस यही तो समझ में नहीं आया।" अमृत ने पुनः बातों का सूत्र अपने हाथ में लेते हुए कहा।

"तो सुनो।" बाबा ने कथा आरम्भ करते हुए कहा, "दिति और अदिति दो बहनें थीं। दोनों दक्ष प्रजापति की कन्यायें थीं। दोनों की ही सन्तान सबल और बुद्धिमान थी। कभी-कभी इनकी सन्तान में कोई असुर भी उत्पन्न हो जाया करता था और वह भी अपनी सृष्टि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता था । यही मंथन में विष होता है ।

"दिति का एक पुत्र हिरण्यकशिपु था । वह असुर हो गया था ।"

महिमा ने बात बीच में काटकर पूछ लिया, "कैसे असुर हो गया था ?"

"असुर का अर्थ है इन्द्रियों का दास । जो जीवन को केवल इन्द्रियों के विषय-भोग के लिए ही समझने लगता है, वह असुर हो जाता है । अच्छा महिमा ! ताडका का नाम सुना है ?"

"वही जिसे राम ने मार डाला था ?"

"हाँ, वही । वह एक भले और विद्वान् यक्ष की पुत्री थी ।"

"यक्ष का क्या अभिप्राय है ?"

"देवलोक में कृषि का कार्य करने वालों को यक्ष कहते थे । ये देवलोक के प्राणी देवराज इन्द्र से रक्षित व पालित थे । ताडका के पिता का नाम सुकेतु था और वह बहुत ही तपस्वी तथा सदाचारी जीव था । ताडका सुन्दर और अतुल बलशाली लड़की थी ।

"पिता ने उसका विवाह जम्भ के पुत्र सुन्द के साथ कर दिया । ताडका के मारीच नाम का एक बलशाली एवं योद्धा पुत्र उत्पन्न हुआ । सुन्द अति दुष्ट प्रकृति का मनुष्य था । वह यत्र-तत्र भले लोगों को कष्ट देता हुआ अपना जीवन चलाता था । एक दिन वह अगस्त्य ऋषि के आश्रम में जा पहुँचा और वहाँ के हिरण आदि पशुओं को मार भोजन बनाकर खाने लगा । अगस्त्य मुनि ने उसे मना किया । वह उनको ही मार कर खा जाने की धमकी देने लगा । तब मुनि ने सुन्द को मार डाला ।

"ताडका को जब पति के मारे जाने का समाचार मिला तो वह अगस्त्य मुनि को मारने दौड़ी । वह अपने साथ अपने पुत्र मारीच को भी ले गयी थी । अगस्त्य मुनि ने उन माँ-पुत्र के आने का आशय समझ उन्हें शाप दे दिया ।"

अमृत चाय पीते-पीते रुका और प्याला प्लेट में रख हँसते हुए बोला, "और माँ-पुत्र दोनों भस्म हो गये ?"

"नहीं । देखो बेटा अमृत ! शाप का अर्थ है कि उनकी निन्दा में प्रस्ताव कर दिया । इसे विरुद्ध निर्णय भी कहा जा सकता है ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परन्तु अगस्त्य को न्यायाधीश किसने बनाया था ? वह स्वयं ही तो दोषी था और स्वयं ही न्यायाधीश बन गया ?"

"न्याय करने का अधिकार तो उनकी विद्वत्ता और सद्चरित्र होने से उन्हें प्राप्त हुआ था। उस न्याय-युक्त निर्णय के पालन कराने का अधिकार इन्द्र को था। अगत्स्य का निर्णय सुन इन्द्र ने उनको दण्ड दे दिया। माँ-पुत्र दोनों को देवलोक से निकाल गंगा के दक्षिण में इन्द्र द्वारा बसाये गए दो सुन्दर जनपदों में इनको बन्दी बना दिया। यह एक प्रकार से देश-निष्कासन था। परन्तु उनके रहने का स्थान, मलद और करूष जनपद, अति सुख-सुविधा सम्पन्न और सुन्दर थे। इन्द्र समझा था कि ताडका और मारीच का कार्य सुन्द की हत्या करने से उत्पन्न क्रोध के कारण है। यद्यपि सुन्द की हत्या न्यायोचित ही थी, परन्तु सुन्द की पत्नी और पुत्र का भी कुछ अधिक दोष नहीं था। अतः उनको दण्ड तो दिया, परन्तु कष्ट नहीं दिया।

"ताडका इससे सन्तुष्ट नहीं हुई और वह अपने पुत्र के साथ इन दोनों जनपदों को उजाड़ने लगी। उसने अपने समान विचार वालों की एक बहुत बड़ी सेना तैयार कर ली थी और उससे इन दोनों जनपदों को लूटना आरम्भ कर दिया। ये मनुष्य और पशु दोनों को मार खा जाते थे। परिणामस्वरूप दोनों को ही असुर पदवी प्राप्त हो गयी।

"मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि असुर चरित्रहीन और स्वार्थी, लोभी और इन्द्रियों के दास व्यक्ति को कहा जाता है।

"ऐसे ही असुरों की सृष्टि होने लगी थी। देवताओं की सन्तान असुर और असुरों की सन्तान देवता हो रहे थे।"

चाय चल रही थी। बाबा विष्णुशरण ने एक चुस्की चाय गले के नीचे उतार कहा, "उस समय देवासुर संग्राम हुआ। इस देवासुर संग्राम में यक्ष, दिति के पुत्र दैत्य और अदिति के पुत्र आदित्य परस्पर नहीं लड़े थे। यद्यपि दोनों के संस्कारों और विचारों में भेद होने के कारण दोनों में मेल-जोल नहीं था, परन्तु यह देवासुर संग्राम इन परिवारों में न होकर आचार-विचार में भेद रखने वालों में हुआ था।

"असुर और देवता, दोनों ने, युद्ध में भारी शौर्य का प्रदर्शन किया था। परिणाम यह हुआ था कि दोनों ही बहुत बड़ी संख्या में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारे गये थे। इस देवासुर संग्राम के परिणामस्वरूप देवता न केवल संख्या में कम रह गये थे, वरन् उनमें उत्साह और शक्ति का भी भारी ह्रास हुआ था।

"देखो अमृत ! अधिकांश युद्धों में ऐसा ही होता है कि जो श्रेष्ठ विचार और धर्माचरण रखने वाले लोग होते हैं, वे युद्धों में भारी हानि उठाते हैं। यही बात उस समय देवताओं में हुई थी।

"ऐसे लोग बहुत बड़ी संख्या में रह गये जो निस्सन्तान हो संसार से विरक्त हो गये थे। नगरों-के-नगर युवकों से रहित हो गये थे और उनका स्त्री-वर्ग स्वेच्छा से असुरों के नगरों में जा-जाकर बसने लगा था। युवकों के अभाव में धन-संचय का साधन भी नहीं रहा था और बचे-खुचे देवता साधन-विहीन हो, जीवन चलाने में भी कठिनाई अनुभव करने लगे थे। इसके विपरीत असुर फल और फूल रहे थे। संख्या में ह्रास तो असुरों में भी हुआ था, परन्तु विवाहादि के नियमों के उदार रखने से और सांसारिक उन्नति में रत उन्होंने अपनी न्यूनताओं को बहुत ही न्यून काल में पूरा कर लिया था। एक-एक असुर पुरुष कई-कई स्त्रियों को घर में रख सन्तान उत्पन्न करने लगा था। बूढ़े युवतियों से विवाह करने लगे थे और युवतियाँ अल्प-वयस्क कुमारों से विवाह कर सन्तान उत्पन्न करने लगी थीं। इसके अतिरिक्त वे अपने युद्ध में क्षीण हुए साधनों को येन-केन-प्रकारेण पूरा करने में लग गये।

"असुरों ने न केवल आदित्यों की सम्पत्ति और स्त्री-समाज को आत्मसात करना आरम्भ कर दिया, वरन् दैत्यों के भी क्षेत्र पर हाथ आरम्भ कर दिया था।"

: ३ :

चाय लगभग समाप्त हो चुकी थी, परन्तु कथा सुनने के लोभ में परिवार के लोग बैठ, बाबा की बात सुन रहे थे। अमृत का मस्तिष्क एक भिन्न दिशा में कार्य कर रहा था। वह सोच रहा था कि किसी अज्ञात अतीत काल की बात में शक्ति और समय व्यर्थ गँवाया जा रहा है, परन्तु उसका उस दिन का कार्य समाप्त हो चुका था और उसे रात तक अन्य कुछ कार्य नहीं था। यदि वह अपने मन की करता तो अपने कमरे में बैठ अपनी पत्नी की संगत का लाभ प्राप्त करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा वह कर नहीं सकता था। उसकी पत्नी अपनी सास के साथ बैठी चाय समाप्त कर मन्त्र-मुग्ध की भाँति बाबा की बात को अमृत मान, पान कर रही थी।

अमृत ने वार्त्तालाप भंग करने के विचार से बाबा को बीच में ही टोक कर कहा, "बाबा! यह कब की बात है? इसे कितने वर्ष हो चुके हैं?"

"यह त्रेता युग के प्रथम चरण के अन्तिम दिनों की बात है।"

"बाबा! मैं तो ठीक-ठीक तिथि जानना चाहता हूँ। वर्ष, दिन एवं घड़ी, पल।"

"इस प्रकार तो ठीक-ठीक ज्ञात नहीं।"

"तो फिर यह इतिहास नहीं हो सकता। जो इतिहास नहीं, वह गल्प ही है और इसको सुनने से लाभ क्या?"

"देखो बेटा! तुम्हारी माँ का जन्म-दिन ज्ञात नहीं। पूछो, यदि उसे ज्ञात हो तो बताये।"

अमृत अपनी माँ का मुख देखने लगा था। सुरेश्वर का विवाह देहात की एक माता-पिता-विहीन लड़की के साथ हुआ था। उसके माता-पिता किसी घटनावश दोनों एक ही दिन मृत्यु का ग्रास हो गये थे। सुरेश्वर जेल से छूटकर आया था और उसने सुन्दरी को देखा और उसे विवाह कर घर ले आया था।

सुन्दरी ने पुत्र को भौंचक्का हो अपने मुख पर देखते हुए अपने परिवार से हुई दुर्घटना का वर्णन कर दिया। उसने बताया, "सन् १९३७ की बात है। वर्षा बहुत हुई थी और मेरे माता-पिता का मकान गिर गया। पूर्ण परिवार उसके नीचे दब गया था। यह तो मेरे पूर्व-जन्म के कर्मों का फल था कि पूर्ण परिवार में मैं अकेली बची थी। माता-पिता और मेरे तीन भाई-बहन सब-के-सब समाप्त हो गये थे। मकान की एक धन्नी ऐसी गिरी कि उसके नीचे मैं सोयी रह गयी। गिरने के शब्द से मेरी नींद खुली, परन्तु अन्धेरे में कुछ जान नहीं सकी कि क्या हो गया है। उठने लगी तो मेरी खाट पर गिरती छत को रोकने वाली धन्नी से सिर टकराया और मैं पुनः खाट पर लेट गयी। मैंने माँ को आवाज़ दी, परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समय लोगों ने मकान का मलबा हटाया। परिवार के अन्य के तो शव निकले और मैं मज़े में खाट पर बैठी मिली।

"मलबा हटाने वाले लोगों में तुम्हारे पिता भी थे। ये गाँव वालों को कहकर मुझसे विवाह कर यहाँ ले आये। मेरा अनुमान है कि विवाह के समय मेरी आयु पन्द्रह वर्ष की थी, परन्तु यह निश्चय से नहीं कह सकती।"

आज पच्चीस वर्ष पुरानी हो गयी बात की चर्चा होती देख सुरेश्वर ने भी घटना में अपना भाग बता दिया। उसने कहा, "मैं जेल से छूटकर आया था और जेल की निष्क्रियता को दूर करने के लिये पर्वतों पर भ्रमण के लिये घर से निकल पड़ा। कुण्डा ग्राम का दृश्य देखने के लोभ में वहाँ जा पहुँचा। एक ब्राह्मण के घर में अतिथि रूप में ठहरा हुआ था कि एक रात ज़ोर की वर्षा होने लगी। रात के दो बजे के लगभग गाँव में ज़ोर का धमाका हुआ और हम लोग हरीकेन लालटैनों को ले घरों से निकल आये।

"कुछ ही अन्तर पर एक मकान गिर गया था और उसमें से किसी के भी बोलने का शब्द सुनाई नहीं देता था। सबका विश्वास था कि घर के सब प्राणी दबकर मर गये हैं।

"दिन चढ़ने तक वर्षा बन्द हो गयी और गाँव के सब युवक फावड़े, कुदाल ले, मकान का मलबा हटा, मकान वालों के शव निकालने लगे।

"पाँच शव निकले थे और तुम्हारी माँ खाट पर बैठी मिली। सब का संस्कार करने के उपरान्त गाँव के मुखिया ने कहा, 'इस अनाथ लड़की का विवाह कर देना चाहिये।'

"उजड़े परिवार की लड़की के विवाह की बात सुन सब मौन रहे। मेरे मन में विचार आया—आखिर विवाह तो करना ही है, फिर क्यों न इसी से कर लिया जाये। मैंने ध्यान से तुम्हारी माँ को देखा और इसे पसन्द कर मुखिया की इच्छानुसार विवाह कर यहाँ ले आया था।

"बाबा और माँ को भी विवाह के समय मैंने बुला लिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्होंने पहले तो आपत्ति की कि अज्ञात कुल की लड़की से विवाह ठीक नहीं होगा, परन्तु मेरे हठ को देख इन्होंने स्वीकार कर लिया और तब से यह यहाँ है।"

अब विष्णुशरण ने अमृत से पूछा, "इस बेचारी की जन्म-तिथि ज्ञात नहीं तो क्या यह है ही नहीं ? इसके विवाह की घटना क्या हुई ही नहीं और तुम लोग अविवाहित संयोग की सन्तान हो ?"

अमृत मुख देखता रह गया। बाबा ने कहा, "देखो अमृत ! तिथि और काल इतिहास का एक अंग मात्र हैं। यह पूर्ण इतिहास नहीं। तिथि और काल से भी अधिक आवश्यक और हितकर इतिहास का अंग तथ्य और घटनाओं का कारण होते हैं। यह देवासुर संग्रामों से ज्ञात है। इस कारण ये भी इतिहास हैं।

"देखो बेटा ! घटनाओं में कारणों के मिथ्या ज्ञान से अथवा उनके ज्ञान के अभाव से तो घटनाओं का कुछ अर्थ ही नहीं रह जाता। उनको स्मरण रखना न केवल व्यर्थ हो जाता है, वरंच अहितकर भी हो जाता है।

"उदाहरणस्वरूप यदि हम भारत में मुसलमानों के राज्य में कारण नहीं जानते अथवा उस कारण को मिथ्या जानते हैं तो पूर्ण मुसलमानों का इतिहास पर न केवल एक बोझा हो जाता है, वरंच यह हानिकर भी होगा। ऐसा हुआ है। कई कारणों से मुसलमानों के आक्रमणों के सफल होने और उनके इस देश में सात सौ वर्ष तक धींगा-मस्ती चलाने के इतिहास को अशुद्ध कर बताया जा रहा है और यह विधर्मियों के लिये एक नीरस भार रूप हो रहा है और राजनीतिक और समाजशास्त्रियों के लिए मिथ्या पथगामी बन गया है। तिथि काल के ठीक ज्ञान न होने से कई प्रकार का अभाव तो खटकता है, परन्तु इससे मानव-लाभ में कुछ विशेष कमी नहीं होती।

"यदि घटनाओं का क्रम विदित हो जाये। कौनसी घटना किससे पहले और कौनसी किससे बाद में हुई, तब तिथि-काल के ठीक ज्ञान न होने से विशेष हानि नहीं रहती।"

"परन्तु ऐसा आजकल के इतिहासकार नहीं मानते।

"और उनके कथनानुसार तुम अपने माता-पिता के विवाह और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे अपने जन्म को नहीं मान सकते। यही कह रहे हो न?"

इस पर बच्चे तक हँसने लगे। अमृत को यह भला प्रतीत नहीं हुआ। वह एक इन्जीनियर, ग्यारह सौ रुपया वेतन-भोगी, एक राज्य की राजधानी में माननीय अधिकारी और ऊपर से भारी आय कर सकने की सामर्थ्य रखने वाला यहाँ अशिक्षित तथा अर्द्ध-शिक्षितों में हँसी का पात्र बन रहा था। उसे क्रोध आ रहा था। वह उठा और कमरे से बाहर निकल गया। विष्णुशरण ने कह दिया, "सत्य का तेज सह सकने की सामर्थ्य बहुत कम लोगों में होती है। अमृत भी उन बहुसंख्यकों में एक है।"

इस पर महिमा ने कह दिया, "बाबा! इनकी बात छोड़िये। आप बताइये कि तब क्या हुआ? जब देवता दीन-हीन संख्या में क्षीण हो गये तो उन्होंने क्या किया?"

"महिमा बेटी! तुम्हें अपने बालक पति का क्रोध शान्त करने की चिन्ता करनी चाहिये। कथा तो फिर भी बतायी जा सकती है।"

"वह मैं कर लूँगी। उसके लिये उपयुक्त समय अभी नहीं है।"

बाबा मुस्कराया और अन्य सज्ञान उपस्थित गण भी मुस्कराने लगे। सुन्दरी ने कह दिया, "महिमा, चलो नीचे। मुझे अमृत का कान पकड़ कर कुछ सभ्यता का पाठ पढ़ाने की आवश्यकता अनुभव हो रही है।"

सुन्दरी उठ पड़ी। महिमा को भी अनिच्छा से उठना पड़ा। इस पर सब बच्चे भी उठ खड़े हुए। पीछे रह गये सुरेश्वर और उसकी लड़की प्रज्ञा। प्रज्ञा का तो कहना था, "बाबा! मैं तो एक-दो दिन में जा रही हूँ। इस कारण इन दिनों में मैं आपकी संगत का अधिक-से-अधिक लाभ उठाना चाहती हूँ।"

"ठीक है। माँ, पुत्र और पुत्र-वधू को निपटने दो। तुम बताओ कि काम-काज कैसे चलता है?"

"हाँ, बाबा! आज के युग में दो बातें हो गयी हैं। एक तो मकान भाड़े पर लें तो मालिक मकान उसे खाली नहीं करा सकता। भाड़ा न भी दें तब भी किरायेदार को निकालने में वर्षों व्यतीत हो सकते हैं। दूसरी सुविधा यह हो गयी है कि एक बार नौकरी लग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी तो पैंशन लेने के काल से पहले कोई निकाल नहीं सकता। यदि कर्मचारी काम में प्रमाद भी करे तब भी कठिनाई है और कहीं मालिक ने आवेश में आ किसी कर्मचारी को निकाल दिया तो हाई कोर्ट में दावा दायर हो सकता है और प्रायः मालिक को कर्मचारी के तलवे चाटने पड़ते हैं। इस कारण इस दिशा में हमें भारी चिन्ता रहती है। हमारे दस-बारह मकान हैं और उनका भाड़ा एकत्रित करना एक समस्या बन गयी है। दूसरी ओर इनके प्रबन्ध में दस-बारह स्कूल और एक कालेज है। इनके कर्मचारी उच्छृंखल होते जाते हैं और हम उनको निकाल नहीं सकते।

"परन्तु इससे भी बढ़कर चिन्ता बच्चों की है। उनकी पढ़ाई का प्रबन्ध बहुत कठिन हो रहा है। वे सेण्ट मेरी स्कूल में भरती कराये हुए हैं। उनके विषय में चिन्ता बनी रहती है।"

"इस छोटे को भी उसी स्कूल में पढ़ाती हो?"

"बाबा! इसको नर्सरी स्कूल में दाखिल कराया है।"

"इसको तो तुम घर पर भी पढ़ा सकती थीं? नर्सरी स्कूल तो प्रत्येक माँ घर पर चला सकती है।"

"परन्तु माँ पर बच्चों के पिता का विश्वास भी तो नहीं। वह संस्कृत पढ़ी पत्नी को अनपढ़ मानते हैं।"

"और वह आर्यसमाज के प्रधान हैं?"

"वह तो वे अपनी दान-दक्षिणा के कारण हैं।"

"अच्छा, उसे आने दो। समझाने का यत्न करूँगा, परन्तु तुम एक बात तो कर सकती हो?"

'क्या कर सकती हूँ?'

"नित्य घर पर हवन, यज्ञ और स्वाध्याय किया करो।"

"वह तो करती हूँ, परन्तु उसका कुछ प्रभाव प्रतीत नहीं होता।"

"एक प्रभाव तो हो रहा है। तुम्हारी बुद्धि ठीक दिशा में कार्य कर रही है।"

"यह तो मैं नहीं जानती। हाँ, एक बात स्वयमेव हो रही है। जब ज्ञान के पिता कोई ऐसी बात कहते अथवा करते हैं जो मैं ठीक नहीं समझती तो मैं उनसे विरक्त हो अपने मार्ग पर चलती रहती हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R 089.9143
GUR-A
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
167882

"यह भी बहुत कुछ है । तुम कम-से-कम अपना कल्याण तो कर रही हो ।"

अब सुरेश्वर ने बातों का सूत्र अपने हाथ में लेकर कह दिया, "पिताजी ! आपको अमृत की माँ की बात चर्चा में नहीं लानी चाहिये थी ।"

"क्यों ? वह कोई दूषण है ?"

"अमृत को यह पसन्द नहीं आयी ।"

"नहीं सुरेश्वर ! वह अपनी माँ की बात पर नाराज़ होकर यहाँ से नहीं गया, वरन् वह मेरी युक्ति का उत्तर न दे सकने के कारण गया है । वह भी मानता होगा कि मैं संस्कृत पढ़ा एक अनपढ़ हूँ और उससे ऐसी बात कह रहा हूँ जिसका वह उत्तर नहीं दे सका ।

"देखो सुरेश्वर ! यह आधुनिक शिक्षा की जड़ में है कि वह पढ़ने वाले को जड़-बुद्धि बना देती है और कोई भी युक्ति की बात उसकी समझ में नहीं आती । निरुत्तर होने पर आजकल के विद्वान् दूसरों को गाली देने लगते हैं ।

"इतिहास के विषय में सबका हठ है । वह अमृत का भी है । वास्तविकता यह है कि आदि काल से आज तक देवासुर संग्राम चल रहा है ।"

"बाबा ! आज असुर कौन है ?"

"जो शारीरिक भोग-विलास को उन्नति मानते हैं ।"

"देखो बाबा ! भोग-विलास तो तकनीकी उन्नति का प्रतिफल है । तकनीकी उन्नति के बिना तो सुरक्षा हो नहीं सकती । इस कारण भोग-विलास तो फोकट में मिल रहा है ।"

"परन्तु मैं तकनीकी उन्नति का विरोध नहीं कर रहा । मैं उससे उपलब्ध भोग-विलास गौण मानता हूँ और उससे अध्यात्म का अमृत प्राप्त करना चाहता हूँ । वह कहीं दिखायी नहीं देता ।

"मैं बीस मंज़िल के मकान बनाने का विरोध नहीं करता, परन्तु उनमें हवन, यज्ञ होता देखना चाहता हूँ । मैं नवीनतम शस्त्रास्त्र-निर्माण में लाभ समझता हूँ, परन्तु उनका प्रयोग भले लोगों की रक्षा में चाहता हूँ । मैं साधन तो चाहता हूँ, परन्तु साधनों से शुभ उद्देश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सिद्धि चाहता हूँ।"

: ४ :

मकान के नीचे की मंज़िल पर अमृत और उसकी पत्नी में विवाद हो रहा था। महिमा अपनी सास और बहन के साथ नीचे आयी तो उसने देखा कि उसका पति बाहर जाने की तैयारी कर रहा है। सुन्दरी ने पूछ लिया, "अमृत ! कहाँ जा रहे हो ?"

"महिमा के पिताजी को मिलने।"

"मैं भी साथ चलती हूँ।" महिमा ने कह दिया।

"तुम तो अभी होकर आयी हो ?"

"तो फिर दोबारा नहीं जा सकती क्या ?"

"अब तुम कल जाना।"

"तो आप भी कल जाइयेगा। आप मेरे साथ चलियेगा। कल सब लोग मिल जायेंगे। आज बड़े भैया चण्डीगढ़ गये हैं। छोटे भाई स्कूल में ड्रामा देखने जा रहे थे। कल चलियेगा तो दिन-भर वहाँ रहेंगे।"

अमृत तो इस कारण जा रहा था कि महिमा बाबा के कमरे से आ नहीं रही थी। अब वह आ गयी थी तो वह जाने का विचार छोड़ कर बोला, "ठीक है। कल सही।"

सुन्दरी गरिमा को लेकर प्रज्ञा के कमरे में चली गयी। इस प्रकार पति-पत्नी अकेले रह गये तो महिमा ने पूछा, "आप नाराज़ क्यों हो गये हैं ?"

"मुझे बाबा की बात रुचिकर नहीं थी।"

"तो इसमें नाराज़ होने की बात क्या है ? आपको कोई बाँध कर तो नहीं रखे हुए था। आप बिना क्रोध प्रकट किये आ सकते थे।"

"पर तुम जो वहाँ बैठी थीं। तम मेरे साथ उठकर नहीं आ रही थीं।"

"तो मुझे वहाँ से उठाने के लिये आप क्रोध का नाटक कर रहे थे ?"

"हाँ।" उसने महिमा की कमर में हाथ डाल अपने अंग से लगा लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात के भोजन का प्रबन्ध ऊपर की मंज़िल पर बाबा के बगल वाले कमरे में किया गया था। चाय तो बाबा के कमरे में हो गयी, परन्तु भोजन के लिये मेज़ वहाँ नहीं लगायी जा सकी। इस प्रबन्ध से विष्णुशरण को बहुत प्रसन्नता हुई। वह परिवार के साथ बैठकर भोजन करना चाहता था।

भोजन के समय अमृत ने बाबा को सम्बोधित कर पूछ लिया, "बाबा ! महिमा कहती है कि चाय के समय मेरे उठकर जाने के कारण आप सब मुझे बालक-मात्र समझने लगे थे ?"

"क्यों महिमा ! तुमने यह कहा है ?"

"हाँ, बाबा ! मुझे आप सबके मुख देख यही प्रतीत हुआ था।"

"बात यही थी।" उत्तर अमृत के पिता सुरेश्वर ने दिया।

"पिताजी !" अमृत ने कहा, "मुझे महिमा ने समझा दिया है कि उस समय मेरी भूल थी ?"

"सत्य ? तब तो महिमा को बहुत ही समझदार लड़की मानना पड़ेगा जो अपने इन्जीनियर पति को भी समझा सकती है।"

महिमा ने बात बदल दी। उसने कह दिया, "पर बाबा ! मैं यह समझ नहीं सकी कि देवताओं का ह्रास हुआ तो वह ह्रास उन्होंने पूरा कैसे किया ?"

"यही तो बताने वाला था। उन्होंने समुद्र-मंथन कर अमृत प्राप्त कर लिया था। उस अमृत से उनकी जनसंख्या बढ़ी और उनके साधन बढ़ गये।

"वैसे ह्रास तो असुरों का भी बहुत हुआ था, परन्तु असुरों ने अपनी वृद्धि ऐसे ढंग से की कि देवता पिछड़ गये। देवता तो अपनी जनपूर्ति कर नहीं सके। कारण यह कि इनकी विधवा स्त्रियाँ दूसरा विवाह नहीं कर सकीं। इनके वृद्ध व्यक्ति अपार जन-हत्या को देख विरक्त हो घरों को छोड़ वनों को चले गये। असुरों ने जब कुछ शक्ति प्राप्त की तो आदित्यों की युवा विधवाओं अथवा कुमारियों का अपहरण करना आरम्भ कर दिया।

"जनसंख्या स्त्रियों के द्वारा बढ़ती है और आदित्य अपने स्त्री-समाज का प्रयोग नहीं कर सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परिणाम यह हुआ कि पंचम देवासुर संग्राम के उपरान्त बीस वर्ष के भीतर ही असुर तो जनसंख्या में और धन-दौलत में उन्नत हो गये और आदित्य तब भी पिछड़े ही रहे।

"असुर झुण्डों-के-झुण्ड आदित्यों के देश में घुस आते थे और उनके गाय, बैल, धन, सम्पद् और स्त्री-वर्ग को लूटकर ले जाते थे। इससे भी आदित्यों की भारी हानि हो रही थी।"

इस पर महिमा ने पूछ लिया, "पर बाबा! क्या असुरों की सन्तान असुर ही होते हैं?"

"इसमें माँ-बाप का प्रश्न नहीं अपितु संस्कारों का प्रश्न है। देवों के घरों के संस्कार जब छिन गये तो जो बच्चे उत्पन्न हुए वे सब असुर होने लगे।

"ऐसा सदा होता है। एक हिन्दू-परिवार मुसलमान हो जाता है और कुछ वर्ष के उपरान्त उस परिवार के घटक हिन्दुओं के ही विरोधी और हत्यारे हो जाते हैं। मनुष्य संस्कारों की देन होता है और संस्कार परम्पराओं से उत्पन्न होते हैं।

"पुराने काल में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब देवों के घर में असुर उत्पन्न हो गये थे और असुरों के घर में देवता हो गये।

"पुराणों में यह कथा आती है कि प्रजापति कश्यप महर्षि मरीचि के पुत्र थे और कश्यप की सन्तान में इन्द्र, विष्णु इत्यादि आदित्य थे और हिरण्यकशिपु भी था। विष्णु दैवी-स्वभाव का था और हिरण्यकशिपु असुर था।

"हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद देवता था। इस प्रकार के अन्य भी अनेक उदाहरण मिलते हैं कि हिन्दुओं के घरों में अहिन्दू उत्पन्न हो पड़ते हैं।"

इस पर अमृत ने पूछा लिया, "संस्कारों से यह कैसे हो जाता है? यहाँ तो आर्यसमाजियों के अतिरिक्त हिन्दू यह मानते हैं कि भले और बुरे पूर्व-जन्म के कर्मों से उत्पन्न होते हैं।"

"यह ठीक है, परन्तु अमृत! बुरे संस्कार रखने वाली आत्मायें बुरे घरों में ही उत्पन्न होती हैं। उनके अपने खोटे कर्मों से ही ऐसा होता है। कभी-कभी श्रेष्ठ व्यक्तियों के घर में भी उलटे संस्कार व्याप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाते हैं तब उनके घरों में उत्पन्न बच्चे असुर बनने लगते हैं। मुख्य बात व्यक्ति के आचार एवं विचार की है, न कि जन्म की।

"मैं बता रहा था कि एक देवासुर संग्राम के उपरान्त देवता अति हीन और दीन दशा में हो गये। तब उन्होंने देवताओं का एक सम्मेलन बुलाया। वह सम्मेलन मेरु पर्वत पर किया गया। यह पर्वत देव-भूमि के मध्य में था और यहाँ देवताओं का निवास-स्थान था।

"जब सब देवता एकत्रित हो विचार करने लगे तो विषय यह उपस्थित हुआ कि अमरत्व कैसे प्राप्त किया जाये ?

"देवताओं ने उस सम्मेलन में नारायण हरि का आह्वान कर उसे बुलाया।"

अब फिर अमृत ने बात रोक कर कहा, "बाबा ! यह नारायण हरि कौन था ?"

"देखो अमृत ! आदित्य सब-के-सब आस्तिक थे और आस्तिकों की यह प्रथा है कि प्रत्येक शुभ कार्य में सबसे पहले परमात्मा की स्तुति की जाती है। अत आस्तिक आदित्यों ने भी परमात्मा की स्तुति की और उसका चिन्तन कर यह प्रार्थना की कि इस कठिन घड़ी में वह उनको सुमति दे।

"ऐसा लिखा हुआ मिलता है कि परमात्मा ने आदित्यों के पुरोहित ब्रह्मा को यह आदेश दिया कि सागर का मंथन कर अमृत प्राप्त किया जाय। उसके पान से देवता अमर हो जायेंगे।

"आदित्यों ने सागर को मथ डाला और उसमें से कई पदार्थ प्राप्त हुए। उनमें अमृत भी था। अमृत पान कर आदित्य देवता हो गये।"

"परन्तु बाबा ! क्या यह एक महान् गल्प नहीं है ?" अमृत ने पूछ लिया।

"क्या गल्प है ?"

"यह सागर, यह मथना, यह देवता और दैत्य। सब कुछ गप्प नहीं हाँकी गयी क्या ?"

"मुझे तो इसमें कुछ भी अनृत प्रतीत नहीं होता। देखो अमृत, सागर का अर्थ है कि सामान्य जनता। मथने का अर्थ है कि जनता का पढ़ाया-सिधाया जाना। मन्दराचल का अर्थ है कि जनता का वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंश जो अपने पूर्व-ग्रहों, विश्वासों और आचरणों में जड़वत् हो गये थे; अर्थात् वे लोग जो रूढ़िवादी जनता से दैत्यों और देवताओं ने मिलकर सामान्य जनता को मथ डाला। जब विद्वानों के रूढ़िवत् ज्ञान को जनता में ले जाकर मथा गया तो ज्ञान-विज्ञान में अपार उन्नति हुई।

"पहले जनता के उस अंश को पृथक् किया गया जो विश्वासों और विचारों में जड़ हो गये थे। इसे पृथक् कर नाग जाति के कलाकारों से इनको शिक्षित-दीक्षित किया गया और फिर जनता में से रत्न उपलब्ध किये गए।"

"परन्तु जनता का कौनसा भाग जड़-रूप अपने संस्कारों से ग्रसित था?" यह प्रश्न महिमा का था।

"जो भी वर्ग अपने को आचार-विचार में स्थिर कर चुका था। उदाहरण के रूप में आज भी भारत में एक ऐसा वर्ग है जो जड़त्व को प्राप्त हो चुका है। वह अपने विचारों में इतना स्थिर है कि नयी परिस्थितियों में नये उपाय विचार ही नहीं सकता।"

"बाबा! बात स्पष्ट नहीं हुई। आपने एक सैद्धान्तिक वक्तव्य दे दिया है, परन्तु उसका विवरण नहीं बताया।"

"तो तुम विस्तार से सुनना चाहती हो?"

"हां, बाबा।"

"अब तो देर हो गई है। कल मध्याह्नोत्तर भोजन के उपरान्त मैं तुम्हें एक जड़वत् प्राणी की कथा बताऊँगा। मैं समझता हूँ कि तुमको उससे यह सब इतिहास स्पष्ट हो जायेगा।"

: ५ :

रात सोने के समय महिमा और अमृत में विवाद आरम्भ हो गया। दोनों पति-पत्नी सन्तान-निरोध के कृत्रिम उपाय प्रयोग में लाते थे और इस बात में यत्नशील थे कि उनके सन्तान न हो। इस रात महिमा ने इस विषय में पति का कहा मानने से इन्कार कर दिया।

"यह आज ऐसा क्यों हो रहा है?"

"मैं देवताओं की भांति हीन-दीन और निराश्रय नहीं रहना चाहती। मैं तो अमृत-मंथन की इच्छा करने लगी हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अमृत तो मैं हूँ।"

"जी। आप में अमृत प्रतीत होता है और आपका ही मंथन कर उसमें से रत्न प्राप्त करना चाहती हूँ। इस समय तो आप सागर और उसमें मंदराचल बन रहे हैं।"

"परन्तु देखो न! अभी केवल डेढ़ वर्ष विवाह को हो चुका है और यदि अभी सन्तान उत्पन्न करने लगे तो यह यौवन-काल बच्चों की चीं-चीं में व्यर्थ चला जायेगा। अभी इसके लिये बहुत समय है।"

"मैं समझती हूँ कि हम भूल कर रहे हैं। अभी मैं बीस-इक्कीस वर्ष की वयस की हूँ और यदि सन्तान की सृष्टि अब करने लगूँगी तो चार-पाँच सन्तान करते-करते मेरी आयु छत्तीस-सैंतीस वर्ष की हो जायेगी। यदि अन्तिम सन्तान सैंतीस वर्ष की वयस में हुई तो उसके पढ़-लिखकर योग्य बनने में बीस वर्ष लगेंगे ही। तब तक मैं सत्तावन-अट्ठावन वर्ष की हो जाऊँगी और आप तब इकसठ-बासठ वर्ष के हो जायेंगे। तब सब बच्चों के योग्य हो जाने पर हम सुख से अपनी वृद्धावस्था का भोग कर सकेंगे।"

अमृत हँस पड़ा। हँसते हुए कहने लगा, "तुम वृद्धावस्था के भोग में भी सुख की आशा करती हो? वृद्धावस्था का शरद्-काल तो भयानक होता है। उसमें सुख की आशा तो बबूल के पेड़ से आम की आशा के समान है।

"देखो प्रिय! जब तक यौवन की दोपहरी है तब तक ही आनन्द और सुख की आशा की जा सकती है।"

"परन्तु यह भी तो हो सकता है कि किसी दुर्घटना से मैं सन्तान-निर्माण के योग्य ही न रहूँ और हम वृद्धावस्था में रुण्ड-मुण्ड की भाँति शाखाओं और पत्र-पल्लवों से रहित ही रह जायें। जब तक इसकी सामर्थ्य है, फिर क्यों न इसका प्रयोग किया जाये?"

बहुत देर रात तक विवाद चलता रहा और जब दोनों सहमत नहीं हो सके तो एक-दूसरे से असन्तुष्ट और अतृप्त ही सोने का यत्न करते रहे। दोनों एक-दूसरे से मुख मोड़े हुए सो रहे थे। बहुत रात व्यतीत हो गयी थी। कदाचित् रात के ढाई-तीन बजे होंगे कि महिमा ने करवट ली और मुख मोड़ा तो पति का पलंग खाली देख चौंक पड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह उठी और यह विचार कर कि कमरे की 'ग्रीन लाईट' में कहीं भूल तो नहीं कर रही, उसने दूसरी बत्ती जला दी। कमरा रिक्त था। वह विचार करने लगी थी कि उसका पति किधर गया होगा ?

जब कुछ समझ नहीं सकी तो कमरे से निकल मकान के अन्य कमरे और नीचे मकान का मुख्य द्वार देखने चल पड़ी। उसके सास-श्वसुर एक कमरे में सोते थे। उसकी ननंद अपने बच्चों के साथ दूसरे कमरे में सोयी हुई थी। सास-श्वसुर का कमरा भीतर से बन्द था और ननंद के कमरे का द्वार भिचा हुआ तो था, परन्तु भीतर से बन्द नहीं था। उसकी अपनी बहन उसके बगल वाले कमरे में सो रही थी। वह भी भीतर से बन्द था। नीचे मकान का मुख्य द्वार भीतर से बन्द था।

वह ऊपर की मंज़िल पर बाबा के कमरे में जाने का साहस नहीं कर सकी। इस कारण हताश हो वह अपने कमरे में आ अपने पलंग पर बैठ विचार करने लगी कि कहाँ जा सकता है उसका पति ?

रात-भर न सो सकने के कारण उसे दिन चढ़ते-चढ़ते झपकी आने लगी। वह पलंग पर लेटी तो सो गयी। उसकी आँख खुली तो दिन के सात बज चुके थे। वह जागी तो उसे रात की बात स्मरण आ गयी। उसने घूम कर पति के पलंग पर देखा। वह गहरी नींद सो रहा था।

महिमा विचार कर रही थी कि वह रात कहाँ था ? विचार कर कि उससे ही पूछेगी, वह शौचादि के लिये चली गयी।

स्नान कर वह अपने कमरे में आयी तो अमृतलाल 'ड्रैसिंग टेबल' के सामने बैठा दाढ़ी की हजामत बना रहा था। उसने लापता होने की बात करने के लिये पूछ लिया, "बहुत देर कर उठे हैं ?"

"हाँ।" अमृत ने एक ही शब्द में उत्तर दे दिया और हजामत बनाने में लीन रहा।

"बहुत गहरी नींद आयी है आपको ?"

"हाँ।" अमृत ने अभी भी संक्षेप में ही उत्तर दिया।

"गहरी और लम्बी।"

"हाँ।"

"मुझे तो रात-भर नींद नहीं आयी और कमरे में उठकर घूमती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही हूँ।"

"सत्य ?" अब उस्तरा चलते-चलते रुक गया और अमृत घूमकर पत्नी के मुख पर देखने लगा। फिर कुछ विचार कर बोला, "परन्तु मुझे तो सोते ही गहरी नींद आ गयी थी और मुझे होश ही नहीं रहा कि मैं बिलासपुर में हूँ।"

"तो आप बिलासपुर में थे क्या ?"

"इसमें भी सन्देह है क्या ? मैं यहाँ बैठा हूँ या नहीं ? और यह बिलासपुर है अथवा नहीं ?"

"अच्छा, आप जल्दी तैयार हो जाइये। माताजी अल्पाहार के लिये बुला रही हैं।"

इस प्रकार बात टलती देख अमृत ने पुनः हजामत बनानी आरम्भ कर दी।

महिमा स्नान कर चुकी थी। उसने वस्त्र बदले और ऊपर बाबा के कमरे के बगल में भोजन के लिये जाने को तैयार हो गयी। अमृतलाल 'बाथ रूम' में गया हुआ था। इस समय गरिमा कमरे में आ गयी। महिमा ने उसे अल्पापार के लिये तैयार देख पूछ लिया, "नाओ, गरिमा ! रात कैसी रही ?"

"ठीक रही है। बहुत अच्छी प्रकार सोयी हूँ। मैं एक उपन्यास पढ़ने लगी तो रात के दो बजे तक पढ़ती ही रही। जब घड़ी में समय देखा तो सो गयी। बस एकदम सात बजे उठी हूँ।

"दीदी ! अल्पाहार का समय हो गया है। ऋचा आयी थी और ऊपर वाले कमरे में ही आने के लिये कह गयी है।"

"बस तुम्हारे जीजाजी स्नान कर निकलते हैं तो चलेंगे।"

"मैं तो चल रही हूँ। बाबा आयेंगे तो उनकी बातें सुनूँगी।"

"तो तुमको उनकी बातों में रुचि हो रही है ?"

"मुझे उनमें रस आ रहा है।"

"क्या रस आ रहा है ?"

"बता नहीं सकती। इस पर भी उनकी बात में रोचकता तो है।"

"अच्छा चलो, मैं भी आ रही हूँ।"

गरिमा अभी कमरे से गयी नहीं थी कि अमृत आ गया। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरिमा को देख पूछने लगा, "तो गरिमा भी तैयार है ?"

"सब आपकी भाँति 'लेट लतीफ' नहीं हैं ।"

"तुम दोनों चलो, मैं भी आ रहा हूँ ।"

महिमा ऊपर चलने को तैयार हो उठी तो गरिमा ने कह दिया, "जीजाजी चल रहे हैं । इकट्ठे ही चलेंगे ।"

अमृत ने जल्दी वस्त्र पहने और फिर तीनों अल्पाहार के लिये चल पड़े । ऊपर चलते हुए अमृत ने महिमा को स्मरण कराया, "आज आपके पिताजी के घर चलना है न ?"

"हाँ । अल्पाहार के उपरान्त चलेंगे और फिर मध्याह्न का भोजन वहीं करेंगे ।"

"पर तुमने तो कहा था कि दिन-भर वहीं रहेंगे ?"

"हाँ, परन्तु अब बाबा ने कहा है कि वे अमृत-मंथन की कहानी सुनायेंगे ।"

"यह मिथ्या कल्पना की बातें सुनना माता-पिता से मिलने की तुलना में अधिक रोचक है क्या ?"

"हाँ । गरिमा कह रही है कि रात उपन्यास पढ़ते-पढ़ते दो बज गये थे । वह भी तो मिथ्या कल्पना ही होती है ।"

"क्यों गरिमा ?" अमृत ने खाने के कमरे में प्रवेश करते हुए पूछ लिया, "कौनसा उपन्यास पढ़ रही थीं ?"

"फिर बताऊँगी । अब बाबाजी बैठे हैं । उनको नमस्कार कर लूँ ।"

प्रज्ञा के बच्चे बाबा को घेरे हुए बैठे थे और बाबा ज्ञान से पूछ रहे थे, "ज्ञान ! क्या पढ़ते हो ?"

"हिन्दी, अंग्रेज़ी, गणित, भूगोल, समाजशास्त्र और राजनीति ।"

"अरे, इतना कुछ ! तब तो तुम बहुत ही योग्य हो जाओगे ।"

"हाँ बाबा ! पर माताजी कह रही हैं कि मैं किसी भी विषय में योग्य नहीं हो सकूँगा । क्योंकि एक साथ इतनी बातें मेरी छोटी-सी खोपड़ी में समा नहीं सकेंगी ।"

"क्यो प्रज्ञा !" बाबा ने ज्ञान की माँ को सम्बोधन कर पूछ लिया, "तुम्हारे पुत्र की खोपड़ी क्या बहुत छोटी है ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रज्ञा अपनी माँ से ज्ञान के पिता की बात बता रही थी। इस कारण बाबा के बुलाने पर चौंककर पूछने लगी, "हाँ, बाबा ! क्या है ?"

"ज्ञान कह रहा है कि तुम इसकी खोपड़ी को बहुत छोटा समझती हो ?"

प्रज्ञा को बातों का प्रसंग ज्ञात नहीं था। इस कारण वह मुख देखती रह गयी। एकाएक वह ज्ञान की किसी बेहूदा बात पर यह टिप्पणी हुई समझ बोली, "हाँ, बाबा ! यह लड़कियों और वह भी अपनी वयस से कम वालियों से बहुत हेल-मेल रखना चाहता है।"

"क्यों ज्ञान ?"

"बाबा ! हमारे पड़ोस में एक माधुरी रहती है। वह बहुत मीठी-मीठी बातें करती है। मुझे बहुत प्यारी लगती है।"

इस समय सुरेश्वर आया तो सब मेज़ के चारों ओर बैठ गये। सेवक सबके लिये पूरी, चटनी और साग रख रहा था कि बाबा ने गरिमा से पूछ लिया, "सुनाओ, गरिमा ! तुम क्या पढ़ती हो ?"

"मैं विज्ञान पढ़ रही हूँ।"

"संस्कृत भाषा भी पढ़ती हो अथवा नहीं ?"

"नहीं बाबा ! संस्कृत और विज्ञान का 'कम्बीनेशन' नहीं है।"

"वह क्या होता है ?"

"जो विषय परीक्षा के लिये पढ़ने होते हैं, उनको 'कम्बीनेशन' कहते हैं। संस्कृत और विज्ञान का संयोग नहीं है।"

"यह तो ठीक नहीं। देखो गरिमा, तुम संस्कृत घर में पढ़ा करो। इससे तुम्हारी खोपड़ी में भी कुछ तो प्रकाश होने लगेगा।"

"बाबा ! अब परीक्षा समीप आ रही है और उन विषयों के अतिरिक्त कुछ अन्य पढ़ने को समय ही नहीं है।"

"पर बाबा !" महिमा, जो बाबा के दूसरी ओर बैठी दोनों की बातें सुन रही थी, कहने लगी, "इसको, उपन्यास पढ़ने से अवकाश नहीं तो यह भला संस्कृत कब पढ़ सकती है ?"

"वह तो मैं रात सोने से पहले पढ़ती हूँ।"

"और रात के दो बजे तक सोने की तैयारी में उपन्यास पढ़े जाते हैं ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबा हँस पड़ा। उसने कहा, "यह भी ठीक है। परन्तु उपन्यास में वास्तविक बात घटना-चक्र में इतनी लिपटी रहती है कि प्रायः दिखायी ही नहीं देती। इस वास्तविक बात को समझने वाले ही उपन्यास पढ़ने का फल उठा सकते हैं। शेष तो समय ही व्यर्थ गँवाते हैं।

"एक बात अवश्य है।" बाबा ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "उपन्यास पढ़ने वालों की कल्पना-शक्ति बढ़ जाती है। कल्पना यदि युक्तियुक्त हो तो उसे मार्ग-दर्शक भी माना जा सकता है। इससे कल्याण ही होता है।"

पूरी आनी आरम्भ हो गई थीं और सब खाने लगे थे।

महिमा ने कहा, "बाबा! आपने रात कहा था कि अमृत-मंथन की कथा सुनायेंगे। मैं अभी तो माँ के घर जा रही हूँ, परन्तु मध्याह्न का भोजन यहीं करूँगी और तब कथा सुनूँगी।"

"बाबा!" गरिमा ने कह दिया, "कथा आरम्भ तो अब ही हो सकती है और शेष मध्याह्नोत्तर हो जायेगी।"

"हाँ, यदि महिमा कहे तो वृत्तान्त आरम्भ कर सकता हूँ।"

"तो बाबा, हो जाये। मैं भी सुनने के लिये उत्सुक हूँ।"

विष्णुशरण ने आँखें मूँद कुछ देर विचार किया और फिर कथा आरम्भ कर दी।

: ८ :

"मेरु पर्वत की तलहटी में अमरावती नामक एक नगर था। वहाँ इन्द्र का राज्य था। इन्द्र अपने बारह भाईयों सहित उस नगरी और उसके आस-पास के क्षेत्र पर राज्य करता था।

"सबसे बड़ा भाई धाता था। उसकी पत्नी माया और छाया थीं। इन दोनों की बीस सन्तान थीं। इन्द्र की बहुत पत्नियाँ थीं। सबसे बड़ी शचि थी। इन्द्र के भी कई सन्तानें थीं। सब मिल-मिलाकर सात भाईयों के विवाह हो चुके थे और उन सबकी कई सौ सन्तानें थीं। ये सब अमरावती पर शासन करते थे। अमरावती के चारों ओर धन-धान्य एवं फल-फूलों से भरे क्षेत्र और उद्यान थे। मेरु पर्वत के शिखर पर स्वर्ण की खान थी और कृषक वर्ग तथा अन्य सेवा-कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने वाले नाग कहलाते थे ।

"कितने ही काल से नागों, यक्षों और सिंहों के शौर्य और देवताओं के प्रति निष्ठा के कारण असुर इनसे दूर-दूर ही रहते थे । कश्यप की द्वितीय पत्नी दिति की सन्तान दैत्य, अब देवताओं से मेल-मुलाकात तो रखते थे, परन्तु उनका परस्पर सहयोग नहीं था ।

"दिति के पुत्र हिरण्यकशिपु का संहार इन्द्र के छोटे भाई विष्णु ने किया था । इससे दोनों परिवारों में एक खाई बन गई थी और उनमें कुछ अधिक प्रेम नहीं था । इस पर भी दोनों लड़ते नहीं थे ।

"हिरण्यकशिपु और प्रह्लाद का भी बहुत लम्बा-चौड़ा परिवार हो चुका था और वह करणावती में राज्य करता था ।

"एक दिन करणावती की ओर से एक विमान उड़ता हुआ अमरावती के ऊपर मँडराता दिखाई दिया । यद्यपि विमान तो देवताओं के पास भी थे । विष्णु के विमान का नाम गरुड़ रखा गया था । इसी प्रकार अन्य देवताओं के पास अपने-अपने विमान थे, परन्तु वे सब बड़े-बड़े और बहुत शोर करते हुए उड़ते थे । उदाहरण के रूप में शिव का विमान जब उड़ता तो वह वृषभ की भाँति शब्द करता था । इसी कारण उसका नाम वृषभ पड़ गया था ।

"परन्तु यह मँडराने वाला विमान तो बहुत छोटा-सा था । ऐसा प्रतीत होता था कि उसमें एक ही व्यक्ति बैठकर उड़ान कर सकता है । उस पतंग की भाँति मँडराते विमान को देख अमरावती के लोग घरों से बाहर निकल आये । इस विमान के उड़ने का शब्द नहीं हो रहा था, परन्तु उदय होते सूर्य के प्रकाश में और आकाश साफ होने के कारण उसका श्वेत कलेवर चाँदी की भाँति चमकता दिखाई देता था । जब बहुत ऊँचा था तो वह एक कपोत की भाँति दिखाई दिया था, परन्तु जब वह नीचे आने लगा तो लोग समझ गये कि यह विमान है ।

"सब लोग अनुमान लगाने का यत्न कर रहे थे कि यह किसका विमान हो सकता है ? विमान-चालक भी उतरने के लिये कोई उपयुक्त स्थान देख रहा प्रतीत होता था । लोगों के देखते-देखते गंगा

—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदी के तट पर वह विमान ऐसे उतरा जैसे कि कपोत उतरने के समय पंख समेटकर उतर पड़ता है। विमान ने पंख समेटे और आजकल के हैलीकॉप्टरों की भाँति नदी के तट पर उतर पड़ा।

"नदी के तट पर महामुनि नारद और देवराज इन्द्र बैठे भगवत्-चर्चा कर रहे थे। उन्होंने भी एक नन्हा-सा विमान कुछ अन्तर पर उतरते देखा तो चर्चा छोड़ उसकी ओर चल पड़े। वे यह जानने के लिये उत्सुक थे कि यह कौन व्यक्ति हो सकता है? वे भी अनुभव कर रहे थे कि वह विमान उनके राज्य का नहीं। ऐसा छोटा और चुपचाप उड़ने वाला विमान उनके राज्य में अभी तक नहीं बना था।

"इन दोनों के मनों में विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब उन्होंने उस विमान में से एक युवा कुमारी को उतरते देखा। बढ़ी हुई उत्कण्ठा से वे लम्बे-लम्बे पग बढ़ाते हुए विमान के पास पहुँचे।

"वह कुमारी भी इनको आते देख वहीं खड़ी हो प्रतीक्षा करने लगी।

"जब समीप पहुँचे तो दोनों ने कुमारी को नमस्कार किया और प्रश्न-भरी दृष्टि में देखते हुए नारद ने पूछ लिया, 'देवी! हमें किसके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है?'

'और मुझे किनसे वार्त्तालाप करने का श्रेय प्राप्त हो रहा है?' कुमारी ने उत्तर देने की अपेक्षा प्रश्न कर दिया।

'देवी! मेरा नाम नारद है और मेरे पास खड़े हुए यहाँ के राजा इन्द्र हैं। यह देवलोक है।' और नारद ने हाथ से समीप बसे नगर की ओर संकेत कर कहा, 'यह नगर है अमरावती। वह जो इस नगर में सबसे ऊँचा मकान दिखायी देता है और जिसमें एक सहस्र से ऊपर झरोखे हैं, वह इन्द्र का निवास-स्थान है।'

'तब तो मैं ठीक स्थान पर पहुँची हूँ। मैं देवलोक को ही ढूँढती हुई आयी हूँ। मेरा नाम पद्मा, श्री एवं पद्मालिनी है। मेरा जन्म सूर्य-ताप से विकसित कमल से हुआ है। मैं दैत्यों के यहाँ रहती थी, परन्तु देवताओं के गुणानुवाद सुन दैत्यों को छोड़ यहाँ आयी हूँ और यहाँ रहना चाहती हूँ।'

'भगवती!' नारद ने पूछा, 'किसलिये दैत्य बन्धुओं को छोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ चली आयी हो ? वैसे आप जैसी शुभलक्षणा के देवलोक में रहने में हम अपना सौभाग्य ही मानेंगे।'

"इन्द्र देख रहा था कि यह कुमारी अति सुन्दर, प्रभायुक्त और ओजमयी है। वह विचार कर रहा था कि यह कुमारी तो किसी देश की महाराज्ञी बनने योग्य है। यहाँ वह राजा है और उसकी कई स्त्रियाँ पहले थीं। इस कारण वह यह सुनते ही विचार करने लगा था कि इतनी सुन्दर और ओजस्विनी कुमारी के लिये कौन-सा पति उपयुक्त रहेगा ? वह उसके सौन्दर्य से चकित और वाणी पर मुग्ध-सा खड़ा था। नारद ही उससे वार्त्तालाप कर रहा था।

"यह कुमारी लक्ष्मी थी। नारद के प्रश्न के उत्तर में उसने कहा, 'यह लम्बी कहानी है। यदि आप मुझे यहाँ रखने की सामर्थ्य रखते हैं तो रखिये और अपना वृत्तान्त मैं समय पर बता दूँगी।'

"नारद ने कहा, 'चलो देवी ! आओ, हम आपको उस सुन्दर प्रासाद में चलने का निमन्त्रण देते हैं।'

"लक्ष्मी पुनः अपने विमान में बैठ इन्द्र के भवन की छत पर जा पहुंची। नारद और इन्द्र भी प्रासाद में पहुँचे और छत पर पहुँच लक्ष्मी को नीचे एक सुसज्जित आगार में ले आये।

"आदित्य-परिवार के सभी प्रमुख व्यक्ति वहाँ उसके स्वागत के लिए आ पहुँचे। सभी लक्ष्मी के सौन्दर्य और ओजमय स्वरूप से प्रभावित हुए थे। लक्ष्मी को एक श्रेष्ठ आसन पर बैठाने के बाद नारद ने कहा, 'देवी ! हमारे यहाँ की प्रथा है कि अतिथि को सदा आदर और सम्मान का पात्र माना जाय। दैत्य हमारे बन्धु हैं और उनके परिवार की लड़की का उनकी इच्छा के बिना यहाँ चला आना तो घोर युद्ध का कारण हो सकता है। अतः इस बात के जानने की हमारी इच्छा स्वाभाविक ही है कि आपके यहाँ आने का प्रयोजन क्या है।'

"लक्ष्मी ने आसन पर सुखपूर्वक बैठे-बैठे कहा, 'देव गण ! मैं दैत्यों की कन्या नहीं। मैं उनके परिवार में उत्पन्न नहीं हुई। मेरा जन्म आदि तत्वों के संयोग से वैवस्वत भगवान् की कृपा से ही हुआ है। मेरा जन्म-स्थान कमल-पुष्प है। दैत्य नगर करुणावती अपने जन्म-स्थान के समीप होने से मैं वहाँ चली गयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'यह मेरा स्वभाव है कि मैं उन लोगों में वास करती हूँ जो धर्म का पालन करते हैं, धैर्यवान हैं, कठिन-से-कठिन परिस्थिति में भी विचलित नहीं होते और इस संसार को तुच्छ समझ कर इसे छोड़ स्वर्ग-प्राप्ति में यत्नशील रहते हैं।

'मुझे दैत्य वर्ग के लोग कुछ ऐसे ही लगे थे। वे दान, अध्ययन, यज्ञ-याग में संलग्न रहते थे। वे देवता, गुरु, पितर और अतिथि की पूजा करते थे। वहाँ सदा सत्य का पालन होता था। उनके निवास-स्थान साफ-सुथरे, लिपे-पुते थे। उनका स्त्री-समाज उनसे सन्तुष्ट और प्यार से ही उनके अधीन रहता था। किसी पर बल प्रयोग नहीं होता था। वहाँ प्रति-दिन घर-घर में अग्निहोत्र, गुरुजनों, ब्राह्मणों और सत्यवादियों का मान होता था।

'वे सदा श्रद्धा से भरे रहते थे। कभी क्रोध नहीं करते थे। दूसरे के दोष न देख सदा गुण देखने का उनका स्वभाव था और वे ईर्ष्यालु नहीं थे।

'उन दिनों दैत्य लोग धन-संग्रह करते थे, परन्तु मुक्त-हस्त दान देते थे। प्रायः सब-के-सब सन्तोषी जीव थे। दूसरे की उन्नति देख मन में सन्ताप नहीं करते थे। सब परिश्रमी और आर्यजनोचित आचार-विचार रखते थे।

'मैं वहाँ प्रसन्न थी और मेरे साथ मेरी सखियाँ आशा, श्रद्धा, धृति, शान्ति, विगिति, संनति, क्षमा और जमा भी वहाँ सुखपूर्वक रहती थीं।

'महामुने ! यह सब वहाँ ईश्वर-भक्त प्रह्लाद के काल में था और मैं वहाँ विराजमान रही। परन्तु उस सम्राट् के निधन के उपरान्त सब-कुछ विपरीत होने लगा है।

'अब वे सूर्योदय होने तक सोते रहते हैं। अनायास धन पाने की लालसा उत्पन्न हो गयी है। स्त्रियाँ पतियों को डाँटती हैं, पुत्र माता-पिता से झगड़ा करते हैं और सब अपने-अपने सुख-भोग की इच्छा करने लगे हैं। यदि स्त्री-समाज कुलटा और सुलभ हो गया है, तो पुरुष अनाचारी एवं बलात्कारी हो गए हैं।

'पिता पुत्रों से डरते हैं और अपना धन दान-दक्षिणा में न देकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रों में बाँटने पर विवश हो जाते हैं। कोई सत्य भाषण नहीं करता और किसी को किसी के भी कथन पर विश्वास नहीं। सब एक-दूसरे पर सन्देह करते हैं।

'मेरी सखियाँ तो उस देश को छोड़ वहाँ से पहले ही चली आयी हैं और मैं इस देश के रहने वालों की प्रशंसा सुन यहाँ रहने की इच्छा करती हुई आयी हूँ।'

'भगवती ! किसने और क्या प्रशंसा की है हमारा ?' नारद मुनि का अगला प्रश्न था।

'उस नगर में यह विख्यात है कि सत्य बोलने वाले बुद्धिविहीन होते हैं। परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार करने वाले भीरु और प्रमादी होते हैं। अग्निहोत्रादि, यज्ञ-याग करने वाले मूर्ख हैं और जो परिश्रम से अर्जित घी, सामग्री को व्यर्थ भस्म करते हैं, वे अज्ञ हैं। अन्य का हित-चिन्तन करने वाले वास्तव में अपना दूसरों से हित कराने की इच्छा रखते हैं और स्वयं वह दुर्व्यसनों में फँसे हुए अपना हित-साधन नहीं कर सकते।

'वहाँ यह विख्यात है कि ऐसे मूर्ख, भीरु, आलसी, प्रमादी और स्वार्थी इस लोक के रहने वाले देवता लोग हैं। आपकी ऐसी प्रशंसा सुन और उनके व्यवहार को देख मैं वहाँ से चली आयी हूँ।

'यों तो वहाँ प्रत्येक व्यक्ति बाल, युवा और वृद्ध नर-नारी सब मुझे अपने घर में रखने के लिये लालायित रहते थे, परन्तु मुझे वहाँ कोई भी ऐसा व्यक्ति दिखायी नहीं दिया, जिसे मैं अपने योग्य समझूँ। अब बताइये कि क्या मैं यहाँ रह सकती हूँ ?'

'देवी !' अब इन्द्र ने अपना मुख खोला, 'आप यहाँ सहर्ष रह सकती हैं और स्वेच्छा से विचर सकती हैं। परन्तु हम लोग कुछ ऐसा अनुभव करते हैं कि स्त्री पर किसी पुरुष का संरक्षण रहना चाहिये। बालिका हो तो पिता का, युवती हो तो पति का और वृद्धा हो तो पुत्र का। स्त्री एक ऐसा प्रलोभन है कि जिसे किसी भले, श्रेष्ठ आचार-विचार के पुरुष का संरक्षण मिलना ही चाहिये। यदि आप यहाँ रहना चाहें तो सुविज्ञ, सुन्दर, यश और कीर्ति की स्वामिनी होने पर भी धर्म से किसी पुरुष के साथ रहना होगा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मुझे यहाँ रहकर आप सबके सद्‌गुणों का परिचय प्राप्त करने दीजिये, तब यथा समय मैं अपने पतिदेव का निर्वाचन कर लूँगी।'

"लक्ष्मी को देवताओं ने अमरावती में निवास दिया और समय पाकर आदित्यों में सबसे छोटे विष्णु से उसका विवाह हो गया।

"इस पर तो दैत्यों में भारी रोष फैल गया और एक समय तो ऐसे लक्षण प्रतीत होने लगे कि देवासुर संग्राम की भाँति का, दैत्यों और आदित्यों में लक्ष्मी के लिये युद्ध हो जायेगा। यह घटना अमृत-मंथन की घटना से पूर्व की थी। इस समय लक्ष्मी इनके नगर में आयी और वहाँ वास करने लगी थी।"

अल्पाहार समाप्त हुए बहुत देर हो चुकी थी। सब बाबा के मुख से लक्ष्मी के आगमन की कथा मन्त्र-मुग्ध की भाँति बैठे सुन रहे थे। अब बाबा ने बात समाप्त करते हुए कहा, "अब तुम लोगों को अपने-अपने काम-काज में देर हो रही होगी। इस समय जाओ, अमृत-मंथन के विषय में मध्याह्नोत्तर बताऊँगा।"

इस प्रकार बात समाप्त होने पर जब समय देखा तो दिन के दस बज चुके थे। अमृतलाल को भी स्मरण हो आया कि उसे अपने श्वसुर के घर जाना है। उसने महिमा से कहा, "माताजी को मिलने नहीं चलोगी ?"

महिमा को भी चेतना हुई तो वह लपककर उठ खड़ी हुई और बोली, "जल्दी चलिये। बहुत देर हो गयी है।"

महिमा ने गरिमा को कहा, "चलो गरिमा ! शीघ्र तैयार हो जाओ।"

गरिमा ने बहन के मुख पर देखते हुए एक क्षण तक विचार किया और कह दिया, "मैं समझती हूँ कि मैं न जाऊँ।"

"क्यों ?"

"जाऊँगी तो माँ आने नहीं देंगी और बाबा की अगली कहानी सुनने से वंचित रह जाऊँगी।"

"माँ को कहकर चली आना।"

"वे आने नहीं देंगी ! कल भी माँ कह रही थीं कि मेरे यहाँ आने की कुछ आवश्यकता नहीं है। अब तो वह आने ही नहीं देंगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर अमृत ने कहा, "तुम चलो तो। हम तुम्हारी सिफारिश कर देंगे।"

गरिमा ने मुस्कराते हुए अपने जीजाजी की ओर देख कह दिया, "सत्य ! तब तो चल सकती हूँ।"

: ६ :

महिमा के माता-पिता, बहन-भाई सब उत्सुकता से अमृत और महिमा की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनका विचार था कि वे अल्पाहार से पहले आयेंगे, परन्तु वे अल्पाहार के समय के बहुत अनन्तर ही आये।

इससे भृगुदत्त उद्विग्न हो रहा था। जब ये लोग आये तो उसने महिमा को व्यंग के भाव में कहा, "महिमा ! सास का प्यार बहुत रसमय रहा है जो बीस वर्ष के माता-पिता के प्यार को भूल गयी हो ?"

"भापा !" महिमा ने देर से आने की सफाई देते हुए कहा, "इनकी नींद नहीं खुली और फिर अल्पाहार का समय हो गया। इनकी माताजी ने देर हो जाने के कारण अल्पाहार वहीं करने का आग्रह किया तो टाल नहीं सकी। अल्पाहार के समय इनके बाबा एक पुरातन इतिहास की कथा बताने लगे और इसमें इतनी देर हो गयी है।"

"तो कहानी इतनी रुचिकर थी कि माता-पिता भूल गये थे ?"

"भापा ! भूली नहीं। तभी तो वहाँ से अवकाश पाते ही भागी आयी हूँ।"

"बिल्कुल गलत।" बैठक-घर में बैठते हुए अमृत ने कह दिया, "भापा ! यह तो बाबा की बातें सुनने में इतनी लीन थी कि यह यहाँ आना भूल ही गयी थी। इसे तो मैंने स्मरण कराया था।"

महिमा ने मुस्कराते हुए कहा, "भापा ! हम मध्याह्न का भोजन यहीं करेंगे और उसके उपरान्त ही लौटेंगे।"

"परन्तु तुमने तो कहा था कि सारा दिन यहाँ रहोगी।" महिमा की माता भगवती ने कह दिया।

"माँ ! कल फिर आ जाऊँगी। आज तो वहाँ बहुत मजेदार इतिहास की कथा हो रही है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भृगुदत्त सरकारी नौकरी से अवकाश पा चुका था। इस कारण उसके लिये रविवार अथवा सप्ताह का कोई अन्य दिन समान ही थे। अत: वह चुप रहा, परन्तु महिमा का बड़ा भाई शम्भुदत्त कहने लगा, "महिमा! कल पुन: चण्डीगढ़ सरकारी काम से जाना है।"

"और हमने," ब्रह्मदत्त और शिवदत्त ने कहा, "अपने कालेज और स्कूल जाना है।"

"तब हम बाबा का कपोल-कल्पित इतिहास सुनने नहीं जायेंगे।" अमृत ने अपने मन की बात कह दी।

इसका प्रतिवाद किया गरिमा ने। उसने कहा, "भापा! मैं तो जाऊँगी। कपोल-कल्पित कहो अथवा कुछ कहो, मुझे वह कथा बहुत रसमय प्रतीत हुई है।"

"तब तो बहुत कठिन है।" भृगुदत्त ने कह दिया।

"क्या कठिनाई है?" गरिमा ने पूछा।

"कठिनाई यह है कि तुम वहाँ गयी तो छोड़ने कौन आयेगा?"

"मैं दूध-पीती बच्ची हूँ जो मुझे कोई छोड़ने आना चाहिये और यदि मैं रात को वहीं रह भी जाऊँ तो क्या जीजाजी की माँ आपत्ति करेंगी?"

इस पर भगवती ने इस विवाद का सिर-पैर न समझते हुए कहा, "गरिमा! इसमें मुझे आपत्ति है।"

"क्या?"

"बताना नहीं चाहती और तुम्हें बिना पूछे मान लेना चाहिये।"

"नहीं माँ! यह तानाशाही है।"

"यह तुम्हारे हित में ही है।"

भृगुदत्त ने बात बदल दी। उसने कहा, "मैं एक प्रस्ताव रखता हूँ। मध्याह्न का भोजन यहाँ किया जाये और हम सब अमृतजी के घर इनके बाबा की कथा सुनने चलें। एक पंथ दो काज वाली बात हो जायेगी। बहुत दिन से अमृतजी के पिता तथा बाबा से मिले नहीं। मिल भी आयेंगे और इनके बाबा की कथा भी सुन आयेंगे।"

अमृत ने कह दिया, "आप चलिये। यह तो बहुत अच्छी बात है, परन्तु मैं आपको सचेत किये देता हूँ कि बाबा की बातों में रस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं आयेगा। उनका कथन तो अतीत के किसी गहरे कुएँ से निकली गूंज-सा प्रतीत होता है।

"आज वह कमल में से लक्ष्मी का जन्म बताते रहे हैं।"

"सत्य ! परन्तु यह तो सबका होता है। माँ का पेट एक प्रकार का कमल ही होता है और उसके खिलने से उसमें बच्चे का बीज पड़ता है और फिर कालान्तर में बच्चे का जन्म होता है।"

"पर भापा ! बाबा तो कुछ दैत्य, दानव और नागों की बात कर रहे थे।"

"तब तो अवश्य सुनने चलना चाहिये।"

अमृत ने मुस्कराते हुए पूछा, "अवश्य क्यों ?"

"इसलिये कि आज भारत में पुनः दैत्य और दानवों की संख्या बढ़ रही है।"

"और लक्ष्मी भी कमल में से पैदा हो रही है ?"

"हाँ। अभी तक वह फ्रांस और इगलैंड में रह रही थी और ऐसा प्रतीत होता है कि वह उन देशों को छोड़ पश्चिमी जर्मनी और जापान में आ रही है। इसका एक निवास-स्थान संयुक्त राज्य अमेरिका भी रहा है, परन्तु वहाँ रहने में इसकी अरुचि होती जा रही है।"

"और भारत में यह नहीं है क्या ?"

"भारत के तो दर्शन से भी इसे घृणा प्रतीत होती है।"

"इस महात्मा गांधी के देश से भी ?"

"नहीं अमृत ! यह देश महात्मा गांधी का कभी भी नहीं रहा। यह नेहरुओं का देश है। जब गांधी जीवित थे और उनकी खूब चलती थी तब भी यह देश नेहरू-परिवार का ही था। गांधी स्वयं उनके थे।"

अमृत ने कभी भी राजनीति में रुचि नहीं ली थी। इस कारण वह इस सब बात को समझ नहीं सका और श्वसुर का मुख देखता रह गया।

भृगुदत्त ने कह दिया, "पता है, पिछले दस वर्ष से महात्मा गांधी का बुत लगाने के लिये स्थान तैयार कर रखा है, परन्तु वह बुत अब तक लग नहीं सका। पण्डित जवाहरलाल के राज्य-काल में जब उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगुली के संकेत से कुछ भी हो सकता था, महात्माजी के बुत लगाने का विचार भी नहीं था।"

भगवती ने वात वदल दी और कहा, "यह बात तो हम भोजनोपरान्त करेंगे। इस समय तो सुख-समाचार की बात ही होनी चाहिये।"

"अमृतजी !" भृगुदत्त ने अमृत के काम-काज की बात आरम्भ कर दी, "आजकल कितना वेतन मिलता है ?"

"इस वर्ष ग्यारह सौ हो गया है।"

"यह तो ठीक ही है। मैं जब सन् सैंतीस में यहाँ नायब तहसीलदार के पद पर नियुक्त हुआ था तो इक्कीस रुपये महीना पाता था। राजा का राज्य था। तब दो रुपये मन गेहूँ था और आठ आने सेर घी तथा एक रुपये का पन्द्रह सेर दूध मिलता था। इक्कीस रुपये में भी दस रुपये बच जाते थे।"

"और भापा ! ऊपर की आय नहीं होती थी ?"

"उन दिनों लोग इतने निर्धन होते थे कि न कोई रिश्वत देता था और न कोई माँगता था। कभी कोई व्यक्ति मुझे अथवा तहसीलदार साहव को प्रसन्न करना चाहता था तो एक टोकरी में मक्की के भुट्टे अथवा एक दर्जन केले भेंट के लिये ले आता था।

"परन्तु यह हवेली मैंने नायब तहसीलदारी के दिनों में ही बनवाई थी। जब से राजा का राज्य गया है और सरकारी सहायता से खेतों के लिये खाद और फलों के उद्यानों के लिये बढ़िया बीज और पौधे मिलने लगे हैं, अवस्था सुधरी है। पेंशन लेने से पूर्व मेरा वेतन एक सौ पचास रुपये था और दौरे पर जाने के लिये भत्ता भी मिलता था। अब भेंट के लिये लोग नोटों के बण्डल अथवा विलायती शराब की बोतलें लाते हैं। इस पर भी मेरी हालत पहले से पतली है। महिमा और शम्भू के विवाह पर तो इतना व्यय हुआ है कि 'बैंक बैलैंस' बिल्कुल 'निल' हो गया है।

"साथ ही तहसीलदारी छोड़ मैं सुख अनुभव करने लगा हूँ। अब कुछ व्यापार करने लगा हूँ तो फिर जेब में नोट भरने लगे हैं। परन्तु…।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाएक भृगुदत्त चुप हो गया। सब मुख देखते रहे। भगवती समझ रही थी कि उसका पति क्या कहने जा रहा है। उसने कहा, "छोड़िये इस बात को। महिमा, तुम बताओ! चण्डीगढ़ में चित्त लग रहा है?"

"माँ! अभी परसों तक तो ऐसा अनुभव हो रहा था कि वहाँ चित्त के विषय में विचार करने का अवसर ही नहीं, परन्तु कल से यहाँ आकर चित्त की भी सुध आ रही है और कुछ विचित्र स्थिति हो रही है?"

"क्या विचित्र स्थिति हो रही है?"

"वहाँ से कुछ भिन्न प्रकार से है। इस पर भी बता नहीं सकती कि क्या है?"

जब अमृत अपने श्वसुर से अपने काम-काज की बातें करने लगा तो भगवती महिमा को लेकर अपने कमरे में चली गयी और वहाँ जाते ही पूछने लगी, "रजस्वला कब हुई थी?"

"अभी आठ-दस दिन हुए हैं।"

"देखने में तो तुम सब प्रकार से स्वस्थ प्रतीत होती हो, परन्तु...।"

महिमा समझ गयी थी कि माँ भी कुछ वैसी ही बात पूछने लगी है जैसी कि ससुराल में बाबा ने पूछी थी और वह आँखें नीचे किये बैठी रही।

माँ ने कुछ डाँट के भाव में कहा, "चुप क्यों हो गयी हो? बताती क्यों नहीं?"

"माँ!" महिमा ने अभी भी आँखें नीचे किये हुए कहा, "वह अभी बच्चे नहीं चाहते।"

"तो क्या तुमसे प्यार नहीं करते?"

"करते तो हैं। इतना करते हैं कि अब मुझे सीमा से कुछ अधिक अनुभव होने लगा है।"

"तो फिर अभी तक तुम्हारी गोद खाली क्यों है?"

"हम सन्तान-निरोध का यत्न करते रहते हैं।"

"परन्तु इसके लिये तो अभी बहुत समय है। पहले दो-तीन बच्चे उत्पन्न कर लो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पर माँ ! यह आवश्यक है क्या ?"

"हाँ ! मनुष्य की पूर्णता इसी में है। जैसे आम के पेड़ पर आम न लगे तो वह पेड़ अर्थहीन होता है।"

"परन्तु हम पेड़ तो नहीं हैं ?"

"तो क्या हो ?"

"प्राणी हैं और प्राणियों में भी मनुष्य हैं।"

"वह क्या होते हैं ?" माँ ने उसे वाग्जाल से निकालने के लिये पूछ लिया।

"मनुष्य मनुष्य होता है। जो मननशील है, जो सदा और प्रत्येक अवसर पर बुद्धि का प्रयोग कर अपना मार्ग निश्चय करता है।"

"और तुम्हारी बुद्धि ने यह निश्चय किया है कि तुम बूढ़ी होकर बच्चे पैदा करोगी।"

"बुद्धि ने तो यही निश्चय किया है कि बच्चे पैदा ही नहीं करूँगी, परन्तु अब चित्त कुछ अन्य बात कहने लगा है।"

"क्या कहने लगा है ?"

"मेरी ननंद भी अमृतसर से आयी हुई है और उसके तीन बच्चे हैं। तीनों बहुत सुन्दर और प्यारे प्रतीत होते हैं। रात मैंने इनको कहा था कि अब निरोध के कृत्रिम उपाय प्रयोग न करें। इस पर वह पूछने लगे कि यह कब तक ? मैंने बताया कि जब तक तीन बच्चे नहीं हो जाते। इस पर वह नाराज़ हो गये और रात-भर मुझसे रूठे रहे हैं।"

"अमृत तो पशु प्रतीत होता है। देखो, रूठने दो। परन्तु तुम सन्तान के लिये प्रयत्न करो।"

"पर माँ ! वह इसे तो मानवता मानते हैं। पशु तो सन्तान पैदा करते हैं और सन्तान-निरोध नहीं कर सकते, और वे करना जानते भी नहीं। यह तो मनुष्य ही कर सकते हैं।"

"मैं उसे पशु इस कारण नहीं कह रही। मेरा अभिप्राय तो उसके रूठने से था। पशुओं को जब इच्छा हो और भोग न मिले तो सींग खड़े कर लड़ने को तैयार हो जाते हैं।

"सन्तान उत्पन्न करने से बचना तो विकृत बुद्धि के लक्षण हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकृति मानव-बुद्धि में ही है। पशुओं में बुद्धि ही नहीं तो विकृति क्या होगी।"

"माँ, छोड़ो इस बात को। मैं विचार कर रही हूँ कि किस प्रकार उनको अपने मन की बात समझाऊँ। अभी तो मैं भी स्वयं समझ नहीं सकी कि ननंद के बच्चे क्यों इतने प्रिय लग रहे हैं और किस कारण घर में वैसे बच्चे उत्पन्न करने की लालसा होने लगी है ?

"मैं एक बात कहना चाहती हूँ कि गरिमा को हमारे घर में मत भेजो।"

"क्यों ?"

"कह नहीं सकती। पर मेरा मन कहता है कि यह ठीक नहीं।"

उसने अपने मन का संशय संकेत मात्र ही बताया। भगवती लड़की की बात सुन गम्भीर विचार में मग्न हो गयी। महिमा ने आगे बताया, "माँ ! जब यह पिछले वर्ष छुट्टियों में चण्डीगढ़ गयी थी तो अपने जीजाजी से तनी रहती थी। कल स्वेच्छा से कहने लगी थी कि वह जीजाजी से मिलने जायगी और अब हमारे घर जाने पर मेरे यहाँ रहने के दिनों तक मेरे साथ ही रहने की बात कहने लगी है।"

"अच्छी बात है। इसका प्रबन्ध करूँगी।" इसके उपरान्त बात बदल कर खाने-पीने और पहनने के विषय में होने लगी। रुपये-पैसे की बात और वेतन के अतिरिक्त आय की बातें भी होती रहीं। इस वार्तालाप से भगवती ने अनुभव किया कि लड़की को किसी प्रकार का आर्थिक अभाव नहीं। इससे वह प्रसन्न थी।

: ७ :

भृगुदत्त ने ही विष्णुशरण से अपनी कथा आरम्भ करने के लिये कहा। महिमा के माता-पिता, बहन-भाई पूर्ण परिवार मध्याह्न के उपरान्त तीन बजे सुरेश्वर के घर पर पहुँच गया था और औपचारिक सुख-समाचार जानने के उपरान्त भृगुदत्त ने बताया, "हमारा विचार तो महिमा और अमृत को कुछ दिन अपने घर रखने का था, परन्तु महिमा कह रही है कि अमृत के बाबा अति रोचक कथा सुनाने लगे हैं तो हम भी इसका रस लेने चले आये हैं।"

"तो महिमा बेटी को मेरी बातें रसयुक्त लगी हैं।" विष्णुशरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने पूछ लिया।

"हाँ बाबा।" महिमा ने कह दिया, "मैंने इतिहास तो बहुत पढ़ा है, परन्तु इस ढंग से कभी अध्ययन ही नहीं किया। आपके कहने से कुछ ऐसा अनुभव होने लगा था कि जैसे मैं सहस्रों वर्ष पूर्व के काल में रहने लगी हूँ और देवलोक की नागरिक हूँ।"

"मैं तो यह बता रहा था कि आदित्यों और दैत्यों में बनती तो पहले ही नहीं थी। उनके परस्पर स्वभाव समान नहीं थे। प्रह्लाद के काल में परिवार के दोनों अंग कुछ समीप हो गये थे, परन्तु प्रह्लाद की मृत्यु के उपरान्त पुनः दोनों में तनातनी उत्पन्न हो गयी थी।

"उनमें कुछ भी साँझापन नहीं था। न देश एक था और न ही जीविका के साधन साँझे थे। परिणामस्वरूप दोनों में घोर वैमनस्य होने से परस्पर मेल-जोल नहीं था।

"दैत्यों के परिवार में लक्ष्मी नाम की एक युवती रहती थी। वह अमैथुनीय सृष्टि की उपज थी। एक दिन वह दैत्यों के एक छोटे-से विमान में बैठ देवलोक में आ गयी और फिर विष्णु से विवाह कर वहीं रहने लगी। इससे तो दैत्य अति विक्षुब्ध हो उठे। एक बार तो वे देवलोक पर आक्रमण ही करने लगे थे, परन्तु अपनी आभ्यन्तरिक फूट और निरन्तर विषय-रत होने के कारण आक्रमण नहीं कर सके।

"आदित्य दिन-दुगनी, रात-चौगुनी उन्नति कर रहे थे। लक्ष्मी के कथनानुसार वह प्रह्लाद के काल में करणावती पहुँची थी और वहाँ के लोगों के श्रेष्ठ आचार-विचार को देख वहीं रहने लगी थी, परन्तु प्रह्लाद के निधन के उपरान्त दैत्य असुर हो गये और लक्ष्मी उनको छोड़ आदित्यों के यहाँ आ गयी।

"इसके उपरान्त आदित्यों की सुख-समृद्धि देख असुरराज वृषपर्वा और उसके साथियों ने देवलोक पर आक्रमण कर दिया। असुर देव-कन्याओं को प्राप्त करने की लालसा करने लगे थे। देव-कन्यायें उनसे घृणा करती थीं। इस कारण आक्रमण हुआ और घोर युद्ध हुआ। यह युद्ध इस दिशा में तो निर्णायक नहीं हो सका कि देवलोक में वृषपर्वा का राज्य हो जाय; इस पर भी आदित्यों की इतनी हानि हुई कि वह युद्ध के तीस वर्ष बाद तक भी सफल नहीं हो सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उनके अधिकांश युवा पुरुष मारे गये थे और उनके बच्चों तथा युवा स्त्रियों को असुर हाँककर अपने साथ ले गये थे। दैत्यों ने इस युद्ध में असुरों को आक्रमण के लिये न केवल उकसाया था, वरंच सहायता भी की थी।

"इस देवासुर संग्राम के उपरान्त असुर समय-समय पर झुण्ड-के-झुण्ड देवलोक में घुस आते थे और वहाँ का धन-धान्य, गाय-बैल और स्त्रियों को पकड़कर ले जाते थे।

"इससे आतुर हो देवताओं ने मेरु पर्वत पर एक सम्मेलन किया। देवताओं ने भगवान् नारायण हरि का भी आह्वान किया और नारायण की प्रेरणा से वहाँ कई बातें निश्चित हुईं। एक तो यह कि दैत्यों से सुलह कर ली जाये। उनका आचरण निम्न कोटि का होते हुए भी उनके सहयोग से समुद्र-मंथन किया जाये और फिर अमृत उपलब्ध कर देवता और दैत्य अमरत्व प्राप्त करें। यह सम्मति भगवान् नारायण हरि की थी। ब्रह्मा इसको कार्य रूप में लाने के लिये नियुक्त हो गया और उसने बहुत यत्न से दैत्यों को इस कार्य के लिये तैयार किया।

"मैं यह समझा हूँ कि दैत्यों और आदित्यों की प्रजा अर्थात् जो निम्न वर्ग के मानव थे, उनको समुद्र का नाम दिया गया है। देवताओं और दैत्यों में जो रूढ़िवादी वर्ग था, उसे मंथराचल माना गया है और नागों के आश्रय प्रजा का मंथन कर उसमें से अनेकानेक रत्न उत्पन्न किये गए और फिर वेद-वाक्यों में से ऐसी जीवनचर्या विचार कर आचरण में लायी गई कि एक अमर विचार और आचार-शैली का आविष्कार हो गया जिससे देवता अमर हो गये।"

इस पर भृगुदत्त ने पूछ लिया, "बाबा! वेद भगवान् तो आदि सृष्टि से यहाँ थे, फिर इनसे कोई नवीन बात कैसे निकाली गयी?"

"नवीन कुछ नहीं निकाला गया। जब दूध को मथा जाता है तब नवनीत निकलता है, परन्तु यह नवनीत तो दूध में पहले ही विद्यमान होता है। मथने से वह छाछ से पृथक् हो दृष्टिगोचर होने लगता है और फिर जब उसका आस्वादन किया जाता है तो रस प्राप्त होता है, शरीर की पुष्टि होती है, मष्तिस्क विकसित होता है और बल, वीर्य में वृद्धि होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यही बात उस समय हुई थी। वेद रूपी कथन का कोई दोहन करता नहीं था। कदाचित् दुग्ध दोहन करना आदित्य भूल गये थे। महा-प्लावन के समय विद्वानों और साधनों की भारी हानि हुई थी। अत: वे भूल गये थे कि वेदों का सार कैसे पता किया जाता है? उनमें से नवनीत प्राप्त नहीं होता था और आदित्यों का मानसिक विकास होना बन्द हो गया था।

"आदित्यों और दैत्यों में ही ऐसा वर्ग उत्पन्न हो गया था जो जड़-बुद्धि था। जैसे आज के काल में गाय की तो हत्या कर उसका चमड़ा और अस्थियाँ बेच विदेशी मुद्रा अर्जन की जाती हैं और उस विदेशी मुद्रा से सुख-सुविधा के सामान उपलब्ध किये जाते हैं और अपने बच्चों को भैंस का दूध पिला-पिलाकर भैंसा-बुद्धि बनाया जा रहा है। अथवा गो-घृत के स्थान मूँगफली का तेल जमा-जमा कर घी के स्थान खिला-खिलाकर उनको नपुंसक बनाया जा रहा है। इसी प्रकार वेद-रूपी गाय का दोहन तथा दूध का मंथन न कर उसमें से नवनीत निकाला नहीं जा रहा था और दोनों परिवार के लोगों में जड़-बुद्धि उत्पन्न हो रहे थे।

"ब्रह्मा ने एक योजना बना तदनुसार बुद्धिशील नाग युवकों को अपने आश्रम में बुला और उनको शिक्षा-दीक्षा देनी आरम्भ कर दी।

"नाग प्राय: वे लोग थे जो निम्न प्रकार की सामाजिक सेवा में लगे रहते थे। सैकड़ों वर्षों से निम्न कोटि का कार्य करते-करते वे यह समझने लगे थे कि उसमें ही सुख है।

"उन्हीं दिनों की बात है कि वासुकि नामक एक नागकुमार था। वह इन्द्र के विमान निर्माताओं में एक योग्य शिल्पी था। ब्रह्मा ने उसे बुलाया। उस गये-गुजरे काल में भी ब्रह्मा की महिमा और प्रतिष्ठा बहुत ऊँची थी। इस कारण वासुकि को जब ब्रह्मा का सन्देश मिला कि वह उससे कुछ बात करना चाहता है तो वासुकि प्रसन्नता से फूला नहीं समाया। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि वह भूलोक से स्वर्ग में जा रहा है।

"ब्रह्मा का आश्रम अमरावती से बाहर वन में गंगा के तट पर बना था। जब वासुकि वहाँ पहुँचा तो उसे ब्रह्मा के गण आदर सहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम में ले गये और वहाँ उसे एक अति स्वच्छ, और सुसज्जित आगार में बैठा दिया।

"वासुकि अपने मैले कपड़ों को और अपनी बढ़ी हुई दाढ़ी-मूंछ तथा मैले शरीर की आगार की स्वच्छता से तुलना करते हुए अपने मन में लज्जा अनुभव करता था।

"जब ब्रह्मा आगार में आया तो उसके भव्य स्वरूप को देख वासुकि बिना विचार किये उसे हाथ जोड़ प्रणाम करने लगा।

"ब्रह्मा ने कहा, 'वासुकि! बैठो।'

"वासुकि अपने बुलाये जाने का कारण न जानते हुए बैठ गया।

"ब्रह्मा ने पूछा, 'कहाँ रहते हो?'

'महाराज! नगर के दक्षिण भाग में एक भूमि में खोद कर बनायी हुई गुहा में।'

'तुम इन्द्र के विमान-गृह के योग्य और कुशल कर्मचारी हो, परन्तु तुम भूम्यान्तर्गत गुहा में क्यों रहते हो? भूमि के ऊपर मकान क्यों नहीं बना लेते?'

'भगवन्! वह गुहा अति सुखप्रद है। न तो वहाँ शरद-ऋतु में शीत का कष्ट होता है और न ही ग्रीष्म ऋतु में गर्मी का।'

'तुमको मेरा यह घर कैसा लगा?'

'यह साफ-सुथरा तो है, परन्तु भगवन्! इस आगार में झरोखों से ठण्डी और गरम वायु आपको कष्ट देती होगी। अतः इन खिड़कियों को खोलना और बन्द करना होता होगा।'

'हाँ, यह तो है। परन्तु इस स्वच्छ वायु से मेरा मस्तिष्क बहुत काम कर सकता है।

'देखो वासुकि! उस दिन मैंने तुम्हें इन्द्र के प्रासाद के भूम्यान्तर के आगारों में कार्य करते देखा था और तब से ही विचार कर रहा हूँ कि यदि तुम्हें किसी ऐसे स्थान पर रखा जाये जहाँ स्वच्छ, सुरभित वायु प्राप्त हो सके तो तुम विस्मयजनक उन्नति कर सकते हो। अतः मैंने यह विचार किया है कि तुम्हारे लिये यहाँ एक मकान दे दिया जाये और तुमको वेद का ज्ञान दिया जाये तो तुमको भी वही सुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त होगा जो हम प्राप्त करते हैं। साथ ही कोई कारण नहीं कि तुम किसी भी आदित्य के तुल्य ज्ञानवान न हो जाओ।'

'भगवन्! आप बड़े हैं, पूज्य हैं और विद्वान् हैं। भला हम लोग आपकी बराबरी कैसे कर सकते हैं?'

'मैं चाहता हूँ।' ब्रह्मा ने कह दिया, 'तुमको अपने यहाँ रख तुमसे एक काम लूँ।'

"वासुकि समझ नहीं रहा था कि किस प्रकार वह उन्नति करेगा और उन्नति करके वह क्या कर सकेगा?

"परन्तु ब्रह्मा की योजना में यह सब सुविचारित था। उसने वासुकि का चयन बहुत ही सोच-विचार कर किया था। वासुकि के तथा उसकी जाति के अन्य युवकों के लिये बहुत ही सुन्दर एक पृथक् आश्रम का निर्माण किया गया और इनको वेद विद्या के दान का प्रबन्ध किया गया।

"इसमें कठिनाई यह हुई कि देवताओं के विद्वानों की धारणा थी कि वेद-ज्ञान सबके लिये नहीं है। अतः वह नागों को वेद-विद्या पढ़ाने के लिये तैयार नहीं होते थे।

"आदित्यों के समाज में यह मन्थराचल अंश था। इनको किसी प्रकार के ज्ञान-प्रसार का सुझाव दिया जाता तो वह उसे ग्रहण ही नहीं कर सकते थे।

"इसमें दैत्यों की सहायता ली गयी। दैत्यों के विद्वानों को अपने नगर से बाहर धन भेजकर तथा अन्य सुविधायें देकर नागों को इस मंथन-कार्य में लगा दिया गया।

"सैकड़ों नाग युवक शिक्षा-दीक्षा से युक्त किये जाने लगे। अब देवताओं का मन्थराचल हिला। वह भी तैयार हो गये इस यज्ञ में भाग लेने के लिये। उनको उच्च-स्तरीय शिक्षा देने पर लगा दिया गया।

"जो युवक पढ़कर योग्य हो गए उनके विवाह देव कन्याओं से किये गए। कुशल कर्मचारियों के विद्वान् होने पर सांसारिक उन्नति होने लगी और कुछ ही वर्षों में योजना चलने लगी।

"इन युवकों का श्रेष्ठ कुलोत्पन्न कन्याओं से विवाह हुआ तो सन्तान भी दोनों समाजों के श्रेष्ठ गुण लेकर उत्पन्न होने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"स्वतन्त्र समाज में यह नई सृष्टि अत्यन्त उत्कृष्ट उत्पन्न हुई। इन्हें देख देवताओं को ईर्ष्या होने लगी और वह नाग कन्याओं से सन्तान उत्पन्न करने लगे। दैत्य भी इस काम में आगे आने लगे और समाज का घोर मंथन होने लगा।

"समाज रूपी जल, जो सैकड़ों वर्षों से निश्चल पड़ा था, जब मथा गया तो यह निर्मल हो चारों ओर फैलने लगा। देवताओं में रूढ़ि-वादी विद्वानों का वर्ग सक्रिय हो उठा और तदनन्तर समाज रूपी सागर में से ही रत्न निकलने लगे।

"इस मंथन में कई सौ वर्ष लगे और नए समाज का जन्म हुआ। यह न देव समाज था और न दैत्य। सब प्रकार के रत्नों से युक्त और संस्कृति रूपी अमृत का पान किये हुए यह मानव-समाज कहलाया।

"अब प्राचीन प्रथाएँ पुन: नये रूप में उभरने लगीं। इस पूर्ण काल में दैत्यों और आदित्यों का मंथन-कार्य में सहयोग चलता रहा। आदित्य इस मंथन से प्राप्त ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण करते रहे और दैत्य मंथन-कार्य से प्राप्त धन-सम्पद् से भोग-विलास में फँसे रहे।

"जब मंथन से निकले रत्नों के प्रयोग का समय आता था तो दैत्य विषय-वासना में लिप्त रहते थे। जगत् का मोहिनी रूप उनको मन्त्र-मुग्ध कर वासनामय करता रहा। किन्तु आदित्यगण मंथन से प्राप्त प्रत्येक वस्तु का संग्रह करते जाते थे। यहाँ तक कि जब विष का आविष्कार हुआ तो वह भी लोक-कल्याण करने वाले शिव ने औषधि के रूप में प्रयोग करने के लिये संग्रह कर लिया।

"दैत्य लोग भी इस पुनरुत्थान आन्दोलन में आये तो थे, परन्तु उनका ध्येय था सांसारिक सुख-वैभव प्राप्त करना। और आदित्य संस्कारों से अध्यात्मवादी होने के कारण सदैव बुद्धि, मन और आत्मा को उन्नत करने में लीन रहते थे।

"समाज-सागर का सार रूप अमृत तो यह था कि आत्मा अमर है। मरता शरीर है। शरीर को दीर्घ-जीवी बनाने से ज्ञान प्राप्ति में सुविधा होती है और इन्द्रियों के विषयों का संयम से सेवन करने से जीवन दीर्घ होता है।

"यह सब सार रूप ज्ञान दैत्यों की समझ में नहीं आया। वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझे कि परमात्मा किसने देखा है ? संसार तो दिखाई देता है। अतः मंथन से जो कुछ भी प्राप्त है, उसे सांसारिक भोगों में प्रयोग करना ही परम साध्य है।

"मंथन के सैकड़ों वर्षों में दैत्य अत्यधिक भोग-विलास में रत होते गये। आदित्य मंथन से उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान में रत रहे। एक ही आयोजन में दो दल भिन्न-भिन्न आधारों पर जीवन चलाते हुए सर्वथा भिन्न हो गये।

"इस भिन्नता का कारण उनके घरों के संस्कार थे। आदित्य वेदानुयायी थे और दैत्य वेदों के अतिरिक्त अपनी जीवन-मीमांसा चला रहे थे।

"अमृत-मंथन का आयोजन अभी चल ही रहा था कि दैत्यों ने आदित्यों को योजना की सफलता के लिये व्याकुल देख उनसे लाभ उठाने का यत्न किया। वे समझे थे कि अमृत-मंथन आदित्यों का कार्य है और वे इस योजना के अनिवार्य अंग हैं। अतः वे धीरे-धीरे आदित्यों के अपने राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप करने लगे। यह हस्तक्षेप सबसे अधिक प्रह्लाद के पोते बलि के काल में हुआ।

"आदित्य दैत्यों को दिल से अमृत-मंथन की योजना में योगदान देते देख उनका विश्वास करने लगे थे।

"किन्तु एक दिन महाराज बलि अपने साथ कुछ दैत्यों को लेकर आया और इन्द्र के सुन्दर प्रासाद पर अधिकार जमाकर रहने लगा। इन्द्र राज्य का निरीक्षण करने प्रासाद से कहीं बाहर गया हुआ था। जब इन्द्र राज्य-प्रासाद में लौटा तो उसने देखा कि प्रासाद के बाहर दैत्य सुभट्ट खड़े हैं। इन्द्र भीतर जाने लगा तो दैत्य सुभट्टों ने उसे रोक लिया।

"इन्द्र ने कहा, 'यह प्रासाद मेरा है और मैं ही इसके भीतर नहीं जा सकता ?'

'हाँ।'

'क्यों ?'

'महाराज की आज्ञा है।'

'कौन महाराज ? यहाँ का महाराजा तो मैं हूँ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अब आपका राज्य नहीं रहा। यहाँ के शासक राजा बलि हैं।'

"इन्द्र के पास अपना वज्र था। उसने वज्र चला दिया और वहाँ खड़े सुभट्ट सब-के-सब यमलोक सिधार गये।

"इन सुभट्टों के मारे जाने की सूचना बलि को मिली तो वह अपना खड्ग लिये द्वार की ओर भागा हुआ आया। वहाँ इन्द्र खड़ा था। उसने बलि को कहा, 'यहाँ से निकल जाओ, अन्यथा मैं यम-द्वार दिखा दूँगा।'

"बलि ने अपने खड्ग से वार किया। इन्द्र ने एक पग पीछे हट-कर वार से अपने को बचा लिया और अपना वज्र बलि पर चला दिया। बलि भूमि पर ऐसे गिरा जैसे कोई कटा वृक्ष गिर पड़ता है।

"इन्द्र ने बलि का शव उठवा कर प्रासाद से बाहर फिकवा दिया। उस शव को बलि के शेष सुभट्टों ने उठाया और अपने राज्य की राजधानी करणावती को ले गये। उन दिनों दैत्यों के पुरोहित शुक्राचार्य वहाँ रहते थे। वह संजीवनी विद्या के ज्ञाता थे। अतः जब आचार्यजी ने बलि के मृत शव को देखा तो उसे जीवित कर दिया।

"बलि आचार्यजी की जय-जयकार करता हुआ उठ खड़ा हुआ। जब बलि सब प्रकार से स्वस्थ हो गया तो उसने अपने पुरोहित शुक्राचार्यजी की बहुत सेवा-सुश्रूषा की और धन-धान्य से उनको सम्पन्न कर दिया।

"इन्द्रादि ने बलि की धृष्टता को क्षमा कर दिया, परन्तु बलि प्रतिकार के विचार को मन से निकाल नहीं सका। वह शुक्राचार्यजी के निवास-स्थान पर बहुत-सा धन और रत्न भेंट के रूप में लेकर पहुँचा। इस भेंट से शुक्राचार्य बहुत प्रसन्न हुए तो पूछने लगे, 'राजन्! क्या चाहते हो?'

'विद्वद्वर! अमृत-मंथन के आयोजन में हम दैत्यों ने भारी सहयोग दिया है और जितनी बढ़िया वस्तुएँ मंथन से प्राप्त होती हैं, वे सब आदित्य ले लेते हैं। हम इसमें अपना खून-पसीना एक कर रहे हैं और इसका सब पुरस्कार आदित्य ले जाते हैं। यदि आज्ञा हो तो हम इस आयोजन में सहयोग देना बन्द कर दें।'

"क्योंकि अमृत-मंथन की योजना में दैत्यों का योगदान शुक्राचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सम्मति से ही आरम्भ हुआ था। अतः शुक्राचार्य गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगा।"

: ११ :

विष्णुशरण ने आगे कहा, "इतिहास आदि काल से इसी प्रकार चल रहा है। संसार में एक घोर संघर्ष निरन्तर चल रहा है। वह संघर्ष है असुरों में और देवताओं में। यह आज भी चल रहा है।"

विष्णुशरण की कथा सुनते-सुनते बहुत देर हो गयी थी। भृगुदत्त ने घड़ी में समय देखा तो कह दिया, "ओह! बाबा, अब तो छः बजने जा रहे हैं। मैं समझता हूँ कि अब हमें चलना चाहिये।"

इस पर सुन्दरी ने बताया, "सेवक कई बार कहने आया है कि बगल वाले कमरे में चाय लगी है। मैं देख रही थी कि बाबा अपनी बात समाप्त करें तो कहूँ।"

"यह कथा तो बहुत लम्बी है।" विष्णुशरण ने कहा, "परन्तु शेष कल सुनाऊँगा। जिसको सुननी होगी, आ सकता है।"

सबसे पहले गरिमा ने कहा, "बाबा! मैं सुनना चाहूँगी।"

इसका समर्थन महिमा ने कर दिया और पूछ लिया, "बाबा! यह कथा कितनी लम्बी है?"

"यदि नित्य दो-ढाई घण्टे सुनो तो एक मास तो लग ही जायेगा।"

"तब तो बहुत ही मज़ा रहेगा। हमारी छुट्टियाँ बहुत मज़े में गुज़र जायेंगी।"

अब अमृत ने कहा, "बाबा! कथा रोचक तो है, परन्तु इसमें बहुत-सी अनहोनी बातें हैं। मैं समझता हूँ कि ऐसी अयुक्ति-संगत बातें सुनने से मस्तिष्क खराब ही होगा।"

इस पर सुन्दरी ने कह दिया, "इसके युक्ति-युक्त अथवा अयुक्ति-युक्त होने का निर्णय तो चाय पीते हुए भी हो सकता है।"

"चलो अमृत!" बाबा ने कहा, "तुम्हारे मस्तिष्क को ठीक कर देता हूँ। चाय पीने से इस कार्य में सहायता मिलेगी।"

भृगुदत्त ने जाने का आग्रह किया, परन्तु सुन्दरी ने हाथ जोड़ कह दिया, "पण्डितजी! न तो हम दूषित हैं और न ही हमारी चाय में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी प्रकार का दूषण है। एक प्याला पीते जाइये। आप पीयेंगे तो महिमा के बहन-भाई भी पी लेंगे, अन्यथा उनका अधिकार आप निःशेष कर देंगे।"

अपनी सास का समर्थन महिमा ने कर दिया। उसने कहा, "भापा! माताजी के हाथ जोड़ आग्रह को आप टाल नहीं सकते।"

"परन्तु यह लड़की का घर है।"

"तो क्या हुआ? इस घर में लड़की की आय से खाना नहीं बनता। यहाँ आपके दामाद के पिता खर्चा चलाते हैं और वह आपके भाई बन चुके हैं।"

भृगुदत्त मुस्करा दिया। उसने पण्डित विष्णुशरण से कहा, "मैं तो आपकी पुराण-कथा सुनने के लिये नित्य आने का विचार कर रहा था, परन्तु यह चाय की बात हो तो नित्य आना कठिन हो जायेगा।"

"किसलिये?" विष्णुशरण ने बगल वाले कमरे की ओर चलते हुए पूछ लिया।

"पूर्व संस्कारों के कारण यहाँ खाने-पीने में संकोच अनुभव हो रहा है।"

"तो आपके मन का भी मंथन करने की आवश्यकता है क्या?"

"हाँ। कुछ ऐसा ही समझ आया है, परन्तु मुझे भय लग रहा है कि कहीं मैं भी बलि की भाँति इन्द्र के प्रासाद पर अधिकार न कर बैठूँ।"

"भैया! ऐसा मत करना। कारण यह कि संजीवनी विद्या का स्वामी शुक्राचार्य आजकल संसार में जीवित नहीं है। सुना है कि अमेरिका में कुछ वैज्ञानिक नाग रूप होकर जीवन की इकाई के निर्माण में संलग्न हैं। कहते हैं कि शरीर में जीवन की इकाई 'जीन' नामक एक वस्तु है। वह शरीर की जीवित कोषिका के क्रोमोज़ोम्स का भी एक छोटा-सा भाग है। उसको निर्माण करने का यत्न किया जा रहा है। एक बृहत् प्रासाद की दीवार की एक ईंट बनाने में बेचारे संलग्न हैं।

"बलि की अवस्था में तो शरीर अभी युवा था और उसकी माँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने उसका शरीर अति सुन्दर बनाया था। इस कारण वह अपने शरीर में आने की उत्कट लालसा करता था, परन्तु कहीं मेरे जैसे बूढ़े के जीनों का पुनः निर्माण कर इसकी दोलायमान दीवार को बना भी दिया गया तो मैं इस बूढ़े शरीर में कदाचित् आने की लालसा नहीं करूँगा। मैं तो किसी सुन्दर माँ के पेट में से नये शरीर निर्माण की प्रतीक्षा करना पसन्द करूँगा।"

सब चाय की मेज़ के चारों ओर बैठ गये थे। आज चाय पीने वालों की संख्या बारह से बढ़कर उन्नीस हो गयी थी। सात प्राणी भृगुदत्त के परिवार के आ गये। सुन्दरी ने हँसते हुए कह दिया, "बाबा के कथन ने नाग रूप होकर सागर में मन्थराचल को ला खड़ा किया है और उसमें गति उत्पन्न की है।"

"पर माँ!" अमृत ने कहा, "यदि हमारे प्राचीन इतिहास की इसी प्रकार विवचेना करनी है तब तो बस हो चुकी। आज विद्वान् और इतिहास साथ-साथ चल रहे हैं। दोनों परस्पर सहायक हो रहे हैं और इस प्रकार की विवेचना को कोई मानेगा नहीं।

"भला वज्र से मरा शुक्राचार्य की फूँक से जीवित हो गया, यह मानने की कोई भी मूर्खता नहीं कर सकता।"

विष्णुशरण ने कहा, "एक मूर्ख है जो मानेगा। वह मेरा पोता अमृत है। साहित्य में एक उपमा अलंकार नाम की वस्तु है। सामान्य लोगों को ज्ञान-विज्ञान की गहन बातों को समझाने के लिये इसका निर्माण किया गया है।

"देखो अमृत! वज्र के अर्थ आकाशीय विद्युत् भी है। वह भी जिस पर पड़ जाती है, उसको मार डालती है। इन्द्र का वज्र कुछ इसी प्रकार का ही प्रतीत होता है। कोई प्रबल विद्युत्-रश्मि उसमें से निकल शत्रु का हनन करती होगी और विद्युत् के झटके से अचेत हुए कई लोग मर गये समझ लिये जाते हैं। उनको पुनः जीवित किया जा सकता है और ऐसा ही कुछ किया गया होगा।

"एक साहित्यिक ग्रन्थ में विज्ञान की प्रक्रिया तो लिखी नहीं, परन्तु ऐसा न लिखने से उसकी सत्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता। घटना तो हुई है। अमृत-मंथन की कथा अनेक ग्रन्थों में और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेक देशों के ग्रन्थों में लिखी मिलती है।

"इस पर भी यह घटना तो आज भी हो रही दिखाई देती है। पूर्व देश जिसमें अरब, ईरान और हिन्दुस्तान की गणना की जा सकती है, ज्ञान-विज्ञान में अति उन्नत अवस्था में था। मैं आज से चार-पाँच सहस्र वर्ष पूर्व की बात कहता हूँ। ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व-ग्रहों से जड़ हुए मनुष्यों ने यहाँ के ज्ञान-विज्ञान को नागों के हाथ में दे दिया और उनको इतना निर्धन बना दिया कि वह बेचारे भूम्यान्तर गुफायें बना रहने लगे।

"वर्तमान युग में पूर्व-ग्रहों से युक्त मंथराचल को युरोप के कुछ तार्किकों और विद्वानों ने ब्रह्मा का स्वरूप बना हरकत दी। यह हरकत वहाँ के विश्व-विद्यालयों में दी गयी और आज की यह 'ऐटौमिक एज' (आणविक युग) बन गयी है। अमृत बन गया है। अभी दैत्य और आदित्य का अमृत पर समानाधिकार है। यदि यह कहें कि आदित्यों में अभी भी कुछ मंथराचल बने काल रूपी नाम से चलायमान किये जा रहे हैं और अभी छूत-अछूत और जन्म से वर्ण के दूषित विचारों से ग्रस्त हिलने में ही नहीं आते।

जिस दिन भारत का यह मंथराचल गतिशील हुआ तो फिर आदित्य अपनी पूर्व की प्रभुता प्राप्त कर लेंगे और संसार रूपी मोहिनी से मोहित अमेरिका, रूस और अन्य पाश्चात्य देश पूर्व के अध्यात्मवाद से पराजित हो जायेंगे।"

"चित्त को प्रसन्न करने के लिये यह विचार बहुत अच्छा है। बाबा, अब एक ऐसी वस्तु आविष्कृत हो चुकी है जिससे कि वर्तमान युग का ज्ञान-विज्ञान नष्ट नहीं हो सकता।"

"ज्ञान-विज्ञान तो प्राचीन काल का भी जीवित है। अभी भी यह मूल रूप में विद्यमान है। जो बात हुई है, वह यह कि ज्ञान के ज्ञाता नहीं रहे। भारत में वाम मार्ग ने वेदानुयाइयों की बुद्धि को बर्फ की भाँति जमा दिया था। दैत्य संसार रूपी मोहिनी के रूप से मोहित हो अमृत को छोड़ उसके नृत्य-संगीत में लीन हो गये थे। परिणाम-स्वरूप सारा अमृत आदित्य पी गये।

"यही कुछ आज के युग में होता हुआ प्रतीत हो रहा है। दैत्य,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा अभिप्राय है कि युरोपीय विद्वान् नास्तिकवाद के जादू से मोहित, सुरा-सुन्दरी, नाइट क्लबों और नग्न स्त्री-पुरुषों के मेलों में लीन हो रहे हैं। यदि आदित्य, मेरा अभिप्राय है कि भारतीय जन अमृत पान में लग गये तो छटे देवासर संग्राम में भो आदित्यों की भाँति विजय प्राप्त कर सकेंगे।

"भारत में भी छोटी-सी मात्रा में एक अमृत-मंथन हुआ है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस अमृत-मंथन की योजना बनाकर मंथन आरम्भ किया और हिन्दू-समाज के मंथराचल अंश को गति प्रदान करने का यत्न किया।

"सन् १८५७ के अवसर पर स्वामीजी ने देखा था कि वायु के प्रवाहित होने से देश में तूफान तो आया था, परन्तु यह ऊपर-ऊपर की परत पर ही रहा था। सागर का तल-अंश मंथित नहीं हुआ था। उसने भारत में अपना राज्य का नारा जन-जन के हृदय तक पहुँचाने का यत्न किया था।

"अत: राज्य-आन्दोलन आरम्भ हुआ। इसमें दैत्य और आदित्य दोनों लग गये। अमृत रूपी स्वराज्य तो प्राप्त हो रहा है, परन्तु दैत्य बलि इन्द्र के प्रासाद में घुस आया है और उसके सुन्दर वैभव युक्त राजमहल पर अधिकार जमा बैठा है। इन्द्र अभी राज्य के भ्रमण से लौटा नहीं। लौटने पर वह क्या करता है, यह देखना है।"

चाय लगभग पी जा चुकी थी। भृगुदत्त की पत्नी भगवती शीघ्र घर लौटने की चिन्ता कर रही थी। अत: वह उठी और अपने बच्चों को कहने लगी, "ब्रह्म और शिव! कुछ पढ़ने-लिखने का काम भी करना है?"

: १२ :

जब भगवती अपने बच्चों को चलने के लिये कह रही थी तो गरिमा वहाँ नहीं थी। भगवती ने महिमा से पूछ लिया, "गरिमा कहाँ है?"

"मेरे पीछे बैठी चाय पी रही थी। देखती हूँ, कदाचित् अपने सोने के कमरे में अपने वस्त्र लेने गयी होगी।"

महिमा भोजन करने के कमरे से निकल नीचे की मंजिल पर अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और गरिमा के कमरे देख लौट आयी। उसने आकर माँ को बताया, "गरिमा नीचे तो नहीं है। कहीं अपने घर न चली गयी हो।"

इस समाचार से भगवती चिन्ता-ग्रस्त हो अपने पति से बोली, "अब चलना चाहिये।"

भृगुदत्त का परिवार चला गया और यह विचार कर कि गरिमा बिना किसी को बताये चली गयी है, कुछ दाल में काला अनुभव करने लगे थे।

महिमा नीचे अपने कमरे में पहुँची तो उसका पति वहाँ पहले ही उपस्थित था। वह अपने माता-पिता और बहन-भाइयों को विदा करने मकान के द्वार तक गयी थी। वहाँ से लौटकर ही वह अपने कमरे में आयी थी।

अमृत वहाँ बैठा एक पुस्तक उठा पढ़ रहा था। महिमा ने पूछ लिया, "कौन-सी पुस्तक है यह?"

"इन्जीनियरिंग के विषय पर है।"

महिमा ने पुस्तक पकड़ कर पति के हाथ से ले ली और उसे बन्द कर मेज़ पर रख गम्भीर भाव में पूछ लिया, "गरिमा को कहाँ छिपा रखा है?"

"मैंने छिपा रखा है?" अमृत ने अपने पैण्ट की जेबों में हाथ डाल बता दिया, "नहीं श्रीमतीजी! मैंने कहीं नहीं छिपाया हुआ। मेरी तलाशी ले सकती हैं।"

"आपके मुख से प्रतीत होता है कि आप जानते हैं, वह कहाँ छिपी हुई है?"

"भला मुझे क्यों मालूम होगा? न तो मैं उसका संरक्षक हूँ और न ही उस पर नियुक्त चौकीदार।"

"तो मुस्करा क्यों रहे हैं? देखिये जी, मुझे आपके मुख पर वही रेखायें दिखायी देती हैं जो आपके मुख पर उस दिन थीं जिस दिन आप पहली बार घर पर शराब की बोतल लेकर आये थे। मैंने खिड़की में से खड़े आपके 'स्कूटर' के बैग में देख ली थी परन्तु जब आप कमरे में आये थे तो खाली हाथ थे और मेरे प्रश्न पर कि शराब कहाँ रख आये हैं तो आपने मुस्कराते हुए कहा था, 'भला मेरा शराब से क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम है ?'

"उसी रात मैंने आपको अपने 'बैड रूम' में मद्य पीते हुए देख लिया था। आज भी वही शरारत आपके मुख से टपकती दिखायी दी है।"

"परन्तु बात वैसी नहीं है। उस दिन तो मैं बोतल 'बैड रूम' में अपने पलंग के नीचे छुपा आया था। वह बोतल चण्डीगढ़ के एक ठेकेदार ने 'डाली' में दी थी, परन्तु आज यहाँ तो मेरा 'बैड रूम' तुम्हारे 'बैड रूम' से पृथक् नहीं है। इससे पलंग के नीचे किसी को छुपाने की बात ही नहीं हो सकती।"

"मुझे तो आप पर सन्देह हो रहा है। रात उसने आपको अपने 'बैड रूम' में छिपा रखा था और आज आपने उसे कहीं छिपा रखा है।"

"नहीं श्रीमतीजी ! यह बात नहीं है। मुझे उसने अपने कमरे में छिपा कर नहीं रखा था, वरंच मैं आतुर व्याकुल उसके 'बैड रूम' को रात के दो बजे खुला देख वहाँ जा छिपा था।"

"तो यह बात है ?"

"परन्तु अब मैं नहीं जानता कि वह कहाँ है ?"

"तो मुस्करा क्यों रहे हैं ?"

"इस कारण कि वह तुमसे अधिक रसयुक्त है।"

"तो आपने उसका रस पान किया है ?"

"पके फल को तश्तरी में रखा देख चखने लगा था।"

"बहुत दुष्ट हैं आप ?"

"नहीं रानी ! मैं वही हूँ जिसे अभी कुछ दिन हुए, प्रियतम कह-कर तुम गले से लिपटी रहती थीं।"

"परन्तु अब तो उससे कोई अन्य लिपट रहा है न हैं ?"

"तुम्हारी बहन ही है। क्या बहन से भी इर्ष्या होने लगी ?"

महिमा मौन हो गयी और इस समस्या का अभिप्राय समझने का यत्न करने लगी। इस पर अमृत उठा और बोला, "तुम कामातुर प्रतीत होती हो और मैं यहाँ से टल जाना ही ठीक समझता हूँ।" इतना कह वह कमरे से निकल गया। महिमा उसके पीछे-पीछे आयी, परन्तु वह लम्बे-लम्बे पग धरता हुआ मकान से बाहर चला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अपने कमरे में आ बैठी और गरिमा के विषय में विचार करने लगी। पिछले वर्ष वह ग्रीष्म ऋतु के अवकास के दिनों में चण्डीगढ़ अपनी बहन के पास रहने के लिये गयी थी और कुछ दिन ही वहाँ रहकर चली आयी थी। छुट्टियाँ तो बहुत थीं, परन्तु वह यह कहकर कि 'उसका चित्त वहाँ नहीं लग रहा' बिलासपुर लौट आयी थी। उसे सन्देह हुआ था कि वह अपने जीजा से तनी रहती थी।

परन्तु अब पहले दिन वह जब अपनी माताजी को मिलने गयी थी तो गरिमा उसके साथ रात-भर रहने के लिये चली आयी थी। महिमा ने कहा था, "वहाँ तुम्हारे जीजाजी भी आये हुए हैं।"

उसका उत्तर था, "तो क्या हुआ ? वे मुझे खा नहीं जायेंगे।"

इससे महिमा यह समझी थी कि गरिमा अभी भी अपने जीजाजी से नाराज़ है। वह चुप रही थी और गरिमा अपनी दो पोशाकें लेकर साथ चली आयी थी।

महिमा विचार कर रही थी कि क्या यह पूर्व नियोजित घटना थी अथवा उसके रात अपने पति से झगड़े का परिणाम ? वह कुछ समझ नहीं सकी। अभी वह इस गुत्थी को सुलझा नहीं पाई थी कि महिमा का सबसे छोटा भाई शिवदत्त आया और महिमा को बताने लगा, "दीदी ! गरिमा वहाँ नहीं गयी।"

"तो कहाँ गयी है ?" महिमा अनायास बिना विचार किये उठी और बगल के कमरे को चल पड़ी। गरिमा का कमरा बन्द था। भीतर बत्ती जल रही थी। महिमा ने हाथ से दबा द्वार खोलने का यत्न किया तो द्वार खुल गया। गरिमा कुर्सी पर बैठी एक उपन्यास पढ़ रही थी।

महिमा ने पूछ लिया, "गरिमा ! यहाँ बैठी क्या कर रही हो ? माताजी तुम्हें ढूँढ़ते हुए गयी हैं।"

"मैं 'बाथ रूम' में थी।"

"बाथरूम में ? मैंने तो तुम्हारे कमरे का बाथ रूम देखा था।"

"मैं ऊपर की मंज़िल पर बाबा के कमरे वाले बाथ-रूम में थी। जब मैं नीचे आयी तो माताजी जा चुकी थीं। मैंने समझा कि उन्होंने मेरी बात मान ली है कि जब तक आप बिलासपुर में रहेंगी, मैं आपके साथ रहूँगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं, वे नहीं मानीं। शिव तुम्हें लेने आया है।"

"देखो शिव!" गरिमा ने कहा, "वहाँ तुम लोग और बच्चे बहुत शोर मचाते हैं। इस कारण मेरी पढ़ाई वहाँ नहीं हो सकती। मैं एक मास-भर यहाँ रहूँगी। तुम जाओ और माताजी से कह दो कि मैं यहीं थी।"

महिमा मुख देखती रह गयी। शिव दोनों बहनों को विस्मित-सी खड़ी देख बड़ी बहन से पूछने लगा, "दीदी! तो मैं जाऊँ?"

"हाँ।" महिमा ने कहा, "जो गरिमा ने कहा है माताजी को बता देना।"

"और दीदी! तुम क्या कहती हो?"

"कह देना कि वही जो मैंने आज दिन के समय उनको कहा था।"

शिव गया तो गरिमा ने पूछ लिया, "दीदी! माँ को क्या कहा था?"

"यही कि अब तुम्हारा विवाह तुरन्त हो जाना चाहिये।"

"ठीक है। होना ही चाहिये। मेरा पढ़ाई में चित्त नहीं लगता।"

"मैं समझती हूँ कि एक-दो दिन में ही प्रबन्ध हो जायेगा।"

"परन्तु मैं अपनी पसन्द का पति लूँगी।"

"यह भी माँ से कह दूँगी।"

"तो अब मैं पढ़ूँ?" उसने वह उपन्यास जो मेज़ पर रख दिया था, उठा लिया और कुर्सी पर बैठ पढ़ने का यत्न करने लगी।

महिमा ने झुककर पुस्तक को देख लिया था। वह एमिली ज़ोला का एक उपन्यास था। अनायास महिमा को कँपकँपी हुई और वह अपने कमरे में चली गयी। वहाँ उसकी सास उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। महिमा आयी तो उसने कह दिया, "गरिमा घर पर नहीं गयी क्या?"

"नहीं, माताजी।"

"उसे बताया नहीं कि तुम्हारी माताजी उसे ढूँढ़ती हुई गयी हैं?"

"बताया है। कहती है कि बाबाजी से कुछ सीखने के विचार से वह एक महीना-भर यहाँ रहना चाहती है।"

"वह रह सकती है। परन्तु अपने माता-पिता की स्वीकृति से।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने उसे कहा था। वह कहती है कि उसने माताजी को कहा तो है, परन्तु उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया था। इससे वह समझी है कि उन्होंने स्वीकृति दे दी है। शिव अभी-अभी आया था और उसके द्वारा मैंने कहला भेजा है कि गरिमा यहाँ है और वह क्या कहती है?"

महिमा बाबा के कथन पर विचार कर रही थी कि देवता और असुर जन्म से नहीं होते। इनका सम्बन्ध संस्कारों से है। यही कारण है कि उसके ससुराल में पढ़े-लिखे विद्वानों के घर में उसके पति का वर्तमान स्वभाव और विचार बन गया है।

सुन्दरी समझ नहीं पा रही थी कि गरिमा किस कारण से इतने दिन के लिये यहाँ रहने चली आयी है। तदपि गरिमा प्यारी लड़की थी। वह उसे ज़बरदस्ती घर से निकालने का विचार नहीं कर सकती थी।

रात भोजन के समय गरिमा मेज पर बैठी थी। अमृत दोनों बहनों के बीच में बैठा था। सुरेश्वर ने सामान्य रूप में कह दिया, 'गरिमा! तुम्हारी माताजी तुम्हें साथ ले जाने के लिये तुमको ढूँढ रही थीं।"

"हाँ, पिताजी! शिव आया था और मैंने उसे बता दिया है कि मुझे अपनी पढ़ाई और अतिरिक्त अध्ययन में यहाँ अधिक सुविधा है। दीदी है और साथ ही बाबा हैं। जो प्रसंग बाबा ने आज चलाया है, मैं उसके विषय में उनसे बहुत कुछ पूछना चाहती हूँ।

"शिव ने अवश्य माताजी को बता दिया होगा और वह मान गयी प्रतीत होती हैं। इसी कारण वहाँ से कोई आया नहीं।"

अगले दिन मध्याह्न के समय अमृत और महिमा में स्पष्ट रूप में बातचीत हो गयी। रात पुनः अमृत अपने सोने के कमरे से लापता था। जब आधी रात के उपरान्त महिमा की नींद खुली और उसने पति का पलंग खाली देखा तो वह बहन का कमरा देखने गयी थी। वह पिछली रात की भाँति भीतर से बन्द था।

उस दिन तो जब प्रातः चार बजे अमृत अपने कमरे में आया तो महिमा उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। अमृत के आने पर महिमा ने पूछ लिया, "तो आ गये हैं?"

"हाँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आखिर इस समय भी आने की क्या आवश्यकता है ?"

"तुम्हारी बहन की इच्छा ऐसी ही है। उसे अपने माता-पिता की मान-प्रतिष्ठा की चिन्ता लग रही है।"

"बहुत चिन्ता है तो वह उनके घर में लौट क्यों नहीं जाती ?"

"हाँ, यह भी हो सकता है। मैं उसे कह दूंगा। वह जब चाहे यहाँ आ सकती है।"

"मैं समझती हूँ कि अब मेरा आपके साथ चण्डीगढ़ जाने में कोई कारण नहीं रहा।"

"यह तो तुम जानो। मुझे तो तुम्हारे मेरे साथ चलने में एक प्रबल कारण दिखाई देता है।"

"क्या ?"

"एक तो तुम्हारा मेरे साथ विवाह हुआ है। यदि तुम नहीं चलोगी तो तुम्हारी और तुम्हारे माता-पिता की भारी बदनामी होगी।"

"कुछ भी हो। मैं तो आज सब बात आपकी माताजी को बता देने वाली हूँ।"

"बता दो।"

"इस प्रकार पति-पत्नी में तनाव की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। उस दिन स्नान से पूर्व गरिमा महिमा के पास आयी और बोली, "दीदी ! मैं जा रही हूँ।"

"कहाँ ?"

"माताजी के घर।"

"और अपने घर नहीं ?"

"वह तो दीदी ने कहा है कि शीघ्र बना दिया जायेगा।"

"तो चलो, मैं छोड़ आऊँ ?"

"नहीं दीदी ! तुम्हें यदि वहाँ आना है तो पृथक् में आना। मैं जा रही हूँ।" उसने इतना और कह दिया, "मेरी पुस्तकें और कपड़े यहीं रखे हैं। वह फिर किसी समय ले जाऊँगी।" यह कहकर वह कमरे से बाहर निकल चली गयी।

अमृत उस समय पिताजी के साथ अपने उद्यान में गया हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका विचार था कि अल्पाहार के समय लौट आयेंगे। गरिमा के चले जाने से महिमा को सुख अनुभव हुआ।

अल्पाहार के समय अमृत को पता चला कि गरिमा अपने माता-पिता के घर चली गयी। इस पर उसे विस्मय हुआ और उसने महिमा से पूछा, "कुछ कह गयी है ?"

"केवल इतना कि वह जा रही है।"

"तो तुमने उसे रोका नहीं ?"

"कहा था कि अल्पाहार लेकर चले तो मैं भी चलूंगी। उसने कहा है कि मैं पृथक् में आ सकती हूँ।"

"तुम वहाँ चल रही हो ?"

"हाँ।"

"मैं भी चलूं ?"

"आपकी इच्छा है। मैं आपत्ति करने वाली कौन हूँ ?"

: १३ :

अल्पाहार के समय बाबा ने पूछ लिया, "महिमा बेटी ! तुम्हारे पिता कह रहे थे कि देवासुर-संग्राम की कथा सुनने वह भी आयेंगे।"

"कह तो गये थे, परन्तु वे आयेंगे अथवा नहीं यह कहा नहीं जा सकता। मेरा विचार है कि वह नहीं आयेंगे।"

"तुम उनसे मिलने जा रही हो क्या ?"

"जी। माताजी कह गयी हैं कि जब तक यहाँ हैं, हम मध्याह्न का भोजन वहीं किया करें।"

"यह ठीक है। माता-पिता को प्रसन्न रखने से अपनी सन्तान से सुख प्राप्त होता है।"

महिमा मुस्करायी, परन्तु चुप रही। बाबा ने मुस्कराहट देखी तो पूछ लिया, "विश्वास नहीं आया न ? करके देख लो। परन्तु इसका फल तो आज से बीच-पच्चीस वर्ष उपरान्त प्राप्त होगा।"

महिमा अपनी मुस्कराहट का कारण बताना नहीं चाहती थी। वह चुप रही।

उस दिन महिमा और अमृत भृगुदत्तजी के घर गये और भोजनो-

—५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परान्त भृगुदत्त और भगवती भी उनके साथ ही आ गये। गरिमा और अन्य बच्चे नहीं आये। बाबा के सामने पहुँचते ही भृगुदत्त ने कह दिया, "मुझे तो किसी काम-धन्धे पर जाना नहीं; इस कारण मैं आपकी कथा सुनने में समय का सदुपयोग समझ चला आया हूँ। बच्चे अपने-अपने काम पर चले गये हैं।"

"परन्तु महिमा की बहन को तो आजकल अवकाश है। वह आती तो उसे लाभ ही होता।"

"बाबा! लाभ-हानि की बात छोड़ो। कहानी सुनने में रस की बात तो समझ में आती है। वह आपके कहानी कहने की कुशलता का सूचक है। कहानी तो सामान्य ही है।" अमृत ने अपने मन की बात कह दी।

"बाबा ने हँसते हुए कहा, "सामान्य इस कारण है कि यही बात इस काल में भी घट रही है। मध्य युग में भी हुई थी और आदि काल में भी होती रही थी। जानते हो क्यों?"

"मैं तो ऐसा मानता नहीं। मैं मानता हूँ कि जो आज है वह कभी नहीं था। जो भविष्य में होने वाला है, वह आज वाली बात नहीं होगी और न ही वह कभी पहले हुई थी।"

"तुम और तुम्हारी श्रेणी के अनभिज्ञ लोग जब जानेंगे जब फल निकल आयेगा। तब यह ज्ञान देर से प्राप्त होगा और इस देवासुर-संग्राम का परिणाम वही होगा जो अमृत-मंथन से पहले युद्ध में हुआ था। देवता पराभूत हो चुके होंगे और असुर उनके धन, जन और सम्पत्ति का इच्छानुसार भोग कर रहे होंगे।

"देखो अमृत! कहते हैं कि महात्मा गांधी देश-विभाजन नहीं चाहता था, परन्तु जो देश-विभाजन की माँग कर रहे थे, उनको गले लगाता फिरता था और जो देश-विभाजन के विरोधी थे, उनको साम्प्रदायिक कह उनका तिरस्कार करता था। जब उसके चेले-चाँटों ने देश-विभाजन स्वीकार किया तो वह हाथ मलता रह गया।

"मैं समझता हूँ कि यह देश-विभाजन कुछ वैसा ही कृत्य है जैसा कि बलि ने इन्द्र के सुन्दर प्रासाद पर अधिकार कर लिया था। अभी हिन्दू-समाज रूपी इन्द्र राज्य-भ्रमण से लौटा नहीं। यही अवस्था इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय हिन्दू-समाज की है। अमृत-मंथन चल रहा है और अमृत निकलने पर क्या हुआ, यह आज बताता हूँ।

"परन्तु अमृत निकलने से पहले बलि ने इन्द्र से उस धृष्टता का बदला लेने के लिये शुक्राचार्य से सम्मति की।

"शुक्राचार्य सांसारिक सुख-वैभव में विश्वास रखता था, परन्तु इस सुख-वैभव को प्राप्त करने के लिये यज्ञ, दान और तपस्या की महिमा मानता था। यज्ञ का अर्थ तो वही था जो देवता मानते थे। अर्थात् सर्व-हितकारी कार्य को यज्ञ समझता था। तपस्या का अर्थ शुक्राचार्य यह लगाता था कि ध्येय प्राप्ति के लिये निरन्तर प्रयत्न करते रहना। निरन्तर के प्रयत्न और परिश्रम से धन-सम्पद् आवश्यकता से अधिक प्राप्त होता है तो उसे दान कर देना।

"शुक्राचार्य ने जब महाराज बलि को सेवा-सुश्रूषा करते देखा तो पूछ लिया, 'राजन्! क्या चाहते हो?'

'भगवन्!' बलि ने हाथ जोड़ कहा, 'ये आदित्य सदा हमारे साथ शत्रुता करते रहते हैं। सागर-मंथन में दोनों परिवार के लोग समान रूप में लगे हुए हैं, परन्तु इन्द्र का प्रासाद तो अतुल सुख-साधनों से युक्त है और मेरे प्रासाद में आज भी चटाइयाँ ही विछायी जाती हैं। इस कारण मैंने यह अपना अधिकार समझा था कि उसके प्रासाद का उपयोग करूँ। परन्तु मुझे अपने अधिकार का प्रयोग करते देख उसने मुझ पर वज्र से आघात कर दिया। गुरुजी, यदि आप नहीं होते तो अब तक मेरे शरीर के तो परमाणु ब्रह्माण्ड के परमाणुओं में मिल चुके होते।'

'यह तो ठीक है, परन्तु दैत्यराज! अमृत-मंथन में से निकले पदार्थों के चयन करने में तुम भूल करते हो और जहाँ आदित्य दिन-भर मंथन करने के उपरान्त रात को बैठ अपने आगामी कार्यक्रम पर चिन्तन करते हैं, तुम मद्य का सेवन कर विषय-वासना में लीन रहते हो। आदित्य मंथन से प्राप्त रत्नों को परस्पर बाँट लेते हैं। तुम यह न जानते हुए कि उन रत्नों से क्या लाभ होगा, अपने भोग की वस्तुओं का चिन्तन करते रहते हो।

'देखो एक उदाहरण देता हूँ। वारुणी (Absolute alcohol) का आविष्कार हुआ। तुम इसके गुणों को जानते नहीं थे। तुमने कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि तुमको तो सुरा चाहिये जो पान की जा सके। तुमने वारुणी का त्याग किया और मद्य के मटके-पर-मटके अपने लोगों में वितरण करते थे। वारुणी तो एक तात्त्विक पदार्थ था। यह मद्य में से ग्रहण किया गया था। उसको देवता ले गये। उससे उन्होंने अनेकानेक घातक अस्त्रों का निर्माण कर लिया और तुम मद्य पीकर अपनी और परायी नारियों का भोग करते रहे। यही कारण है कि तुम और तुम्हारी जाति के लोग निर्धन रहे और देवता उत्तरोत्तर धनवान होते जा रहे हैं।

'अमृत-मंथन में उच्चैः श्रवा नामक एक विमान का आविष्कार हुआ। उसे इन्द्र ले गया। तुम्हारे लोग उसका प्रयोग नहीं जानते थे। तुम दैत्यों में यज्ञमय जीवन नहीं रहा। यही कारण है कि वहाँ प्रासाद बने हैं और यहाँ अभी भी झोंपड़े हैं।'

'तो भगवन्! क्या किया जाये? मैं इन्द्र द्वारा किये गए अपमान और लज्जा से जला जा रहा हूँ।'

'तुम यज्ञ करो। उस यज्ञ में सर्व-हितकारी कर्म करने से तुम्हारी शक्ति बढ़ेगी और तुम देवलोक पर अधिकार कर सकोगे।'

"अभी अमृत-मंथन अर्थात् तकनीकी विकास हो ही रहा था कि दैत्य यज्ञ और तपस्या से तथा दान अर्थात् राजाज्ञा से धन-सम्पद् का समानीकरण करने से अति शक्तिशाली हो गये और फिर शुक्राचार्यजी के आशीर्वाद से एक रात कोटि-कोटि दैत्यों ने देवलोक पर आक्रमण कर उस पर अधिकार कर लिया। आदित्यों की सब विभूति भी बलि ने ले ली। इन्द्र के प्रासाद पर अधिकार प्राप्त हुआ तो वहाँ की सहस्रों देवांगनायें, अनेकों यन्त्र और वहाँ की सब अद्भुत सामग्री भी अधिकार में आ गई। इस बार बलि ने केवल इन्द्र को ही निष्कासित नहीं किया, वरंच सब आदित्यों को मार-मारकर पर्वतों की कन्दराओं में जान छुपाने के लिये भगा दिया और स्वयं आदित्यों की अमरावती पर अधिकार कर वहाँ दैत्यों को बसा दिया।

"बलि का प्रत्येक कार्य दिन से रात तक यज्ञ-मय हो गया था। उसके अपने साथी जो कुछ लूट-मार से अथवा दान-दक्षिणा में पाते थे और जो कुछ राज्य के परिश्रम से उपलब्ध होता था, वे सब का उपभोग कर सुख-भोग कर रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दूसरी ओर आदित्य अपनी सब उपलब्धियों के छिन जाने पर अकिंचनों की भाँति पर्वतों की घाटियों और कन्दराओं में सिर छुपाते फिरते थे।

"आदित्यों की प्रजा तो अमृत-मंथन में लगी थी और उनको वैसे ही पारिश्रमिक मिलता था जैसे कि दैत्यों को मिलता था ; इस पर भी स्वामी दैत्य थे और अभी तक के मंथन से उपलब्ध रत्नों का प्रयोग दैत्य-परिवार वाले करते थे।

"आदित्य अति दुःखी हुए तो पुनः एक सभा करने लगे। सभा में यह तो स्पष्ट हो गया कि तत्कालीन परिस्थिति में आदित्य बल से अपना राज्य और उसका धन-वैभव वापस नहीं पा सकते थे। दैत्यों ने दान-दक्षिणा से पूर्ण जनता को मोहित कर रखा था। विष्णु भी लक्ष्मी के छिन जाने से श्री-विहीन इस सभा के एक कोने में बैठा था।

"ब्रह्मा ने विष्णु से कहा, 'विष्णु ! तुमने संसार की सब विभूतियों की बड़ी बहन लक्ष्मी की रक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं किया। बताओ, तुम क्या अधिकार रखते हो कि वह तुम्हारे पास लौटे ?'

'पितामह ! मुझे समाचार मिला है कि लक्ष्मी वहाँ व्याकुल है और वह वहाँ से चली आना चाहती है, परन्तु बलि ने उसे बन्दी-गृह में डाल रखा है। इससे वह धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है और एक दिन उस बन्दी-गृह में रहती हुई भी निःशेष हो जायेगी।'

'परन्तु तुमको क्या मिलेगा ? तुम नपुंसकों की भाँति अपनी जान बचाने के लिये छिपते फिरते हो।'

'भगवन् ! मैं हतबुद्धि समझ नहीं पा रहा कि क्या करूँ ?'

'अच्छा, उपाय किया जायगा। परन्तु यदि लक्ष्मी तथा उसके साथ आने वाली देवियों को तुमने आदर सहित सुरक्षित न रखा तो फिर तुम्हारे और आदित्यों के लिये क्या आशा की जा सकती है ? लक्ष्मी आयेगी तो उसके साथ ही आशा, श्रद्धा, धृत्ति, शान्ति, विजिति, सुनिति, क्षमा और दया भी आयेंगी। इन सबकी रक्षा करनी होगी।'

'पितामह ! यह तो बाद में विचार करने की बात है। पहले तो यह आवश्यक है कि लक्ष्मी को वहाँ से छुड़ाया जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दूसरी ओर यज्ञ हो रहा था। घोर परिश्रम से धन-सम्पद् और शस्त्रास्त्र निर्माण किये जा रहे थे और महाराज बलि नित्य उदार-चित्त परिश्रम से संचित पदार्थ दान कर रहा था।

"यह इस प्रकार ही हो रहा जैसे कि सन् १६४५ में अमेरिका ने अपने नागरिकों की गाढ़े पसीने सें उपलब्ध धन-पम्पद्, शस्त्रास्त्र द्वितीय विश्व-युद्ध के उपरान्त चीनियों को दे दिये थे और चीनी कम्यु-निस्टों ने उन्हीं शस्त्रास्त्रों से कोरिया पर ही आक्रमरण कर दिया था। यह कपटमय व्यवहार था।

"ऐसा ही कुछ बलि के साथ हुआ। अन्तर यह था कि तब यह कपट कम्युनिज़्म के विस्तार के लिये नहीं, वरंच आदित्यो के उद्धार के लिये किया गया।

"उस समय बलि का राज्य देवलोक, गन्धर्व लोक, यमलोक, इत्यादि पर हो चुका था और दैत्य परिश्रम करने में बहुत योग्य थे, परन्तु मोटी बुद्धि के होने के कारण आदित्यों की छलना में आ गये।

: १४ :

"आदित्यों का एक भाई था। उसका नाम था वामन। वह शरीर का बौना था, परन्तु सद्चरित्र, अत्यन्त ओज का पुंज और प्रकाण्ड विद्वान् था।

"बलि यश में संलग्न था। शुक्राचार्य सांसारिक विभूतियों को मानव-समाज में समान रूप में वितरण के पक्ष में था और इस वितरण का सर्वोत्तम उपाय दान मानता था, अत: उसकी प्रेरणा से बलि दिन-भर का पूर्ण अर्जित धन-सम्पद् राज्य-कोष में एक अंश राज्य के लिये रख, शेष सब कुछ दान कर देता था।

"वामन उस यज्ञ में जा पहुँचा। यज्ञ में उपस्थित सब लोग इस बौने को वहाँ आया देख चकित रह गये और उसकी ओर देखने लगे। वह स्नातक के वेश में था। अत: ऋषियों ने उसे आदर सहित अपने में बैठाया और उसके विषय में प्रश्न पूछने लगे।

"वामन ने अपना परिचय ऐसा दिया जिससे कि किसी को उसके माता-पिता का ज्ञान नहीं हुआ। शुक्राचार्य के पूछने पर कि तुम किसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्र हो ? वामन ने उत्तर में कहा, 'सर्व व्यापक, सर्वान्तरयामी, सर्वज्ञ और सर्व-शक्तिमान परमात्मा का।'

"इस पर आचार्य ने पूछ लिया, 'वह कहाँ रहता है?'

'भगवन् ! यह सर्वविदित है कि वह सर्वव्यापक है।'

'परन्तु जहाँ मैं बैठा हूँ वहाँ तो नहीं है।'

'है। एक अशरीरी पदार्थ उस स्थान पर हो सकता है जहाँ पहले भी कोई शरीरी पदार्थ हो। जैसे वायु में गंध विद्यमान हो सकती है।'

'तो परमात्मा अशरीरी है?'

'जी महाराज।'

'तो उन्होंने तुम जैसा पुत्र कैसे उत्पन्न कर दिया? कारण यह कि अशरीरी से शरीरी उत्पन्न नहीं हो सकते।'

'यह सिद्धान्त न तो युक्ति से सिद्ध है और न ही किसी प्रमाण से। आप बतायें कि इस कार्य-जगत् का मूल शरीरी है अथवा अशरीरी?'

'वह शरीरी है।'

'तो उसे दिखाइये।'

'तो शरीरी के क्या अर्थ मानते हो?'

'जो इन्द्रिय गोचर हो।'

'बहुत कुछ है जो दिखायी नहीं देता, परन्तु उसका अस्तित्व सिद्ध होता है।'

'यही तो मैं कहता हूँ कि परमात्मा अशरीरी है। इस पर भी है। इसकी सिद्धि इस कार्य-जगत् के निर्माता के रूप में है।'

'यह तो स्वयं बना है।'

'ऐसा तो इस जगत् में कहीं होता देखा नहीं जाता। कोई वस्तु स्वयं बनती दिखायी नहीं देती। प्रत्येक का बनाने वाला कोई होता है।'

'माँ के पेट में बच्चों का शरीर स्वयं बनता है।'

'अर्थात् आपकी लड़की बिना आपके बन गयी है?'

"इस पर तो सब हँसने लगे। शुक्राचार्य मौन हो गये और बलि प्रसन्न हो बोला, 'भगवन् ! आप स्नातक हैं। आपको प्रसन्न करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा कर्त्तव्य है। बताइये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?'

'राजन् !' वामन ने कहा, 'आप देने वाले कौन हैं ?'

"बलि ने समझा कि वह उसे जानता नहीं। इसी कारण उसने मुस्कराते हुए कहा, 'मैं देवलोक, पितृलोक, गन्धर्वलोक, मर्त्यलोक और पूर्ण त्रिलोकी का शासक और स्वामी हूँ। जो भी माँगते हों, माँगिए। मैं यज्ञ-वेदी पर बैठा वचन देता हूँ कि यहाँ से कोई निराश नहीं लौटेगा।'

'श्रीमान् ! आप तो एक तिनका मात्र भी नहीं दे सकते। देने वाला कोई अन्य है।'

'नहीं बालक ! माँगो और देखो कि मेरी क्या सामर्थ्य है ?'

'परन्तु मैं तो बहुत ही छोटी-सी वस्तु का इच्छुक हूँ। इस पर भी मुझे सन्देह है कि आप दे नहीं सकेंगे ?'

'स्नातकवर ! छोटी-सी क्यों ? दिल खोलकर माँगो। महाराज बलि का राज्यकोष भूमण्डल-भर के धन-धान्य, स्वर्ण और रत्नों से भरा पड़ा है। कोटि-कोटि मानव दिन-रात मेरे आदेश पर मेरे लिये धन अर्जन करते रहते हैं और यदि तुम मेरे कोषागार तक चलने का कष्ट करो तो तुम अपने जीवन-भर में उस कोष का पार नहीं पा सकोगे।'

'महाराज ! मुझे रत्न, स्वर्णादि नहीं चाहिये। इस ब्राह्मण के लिये तो केवल तीन पग भूमि चाहिये।'

'तीन पग ? बालक, मेरी हँसी कर रहे हो ? तीन पग क्या, तुम तीन कोस ले सकते हो। और भी अधिक जितनी चाहो, ले सकते हो। बताओ, कहाँ चाहते हो ?'

'महाराज ! मेरे पिता का एक पग पाताल में है। दूसरा इस कार्य-जगत् पर है और तीसरा पग अन्तरिक्ष में है। ऋषियों ने बताया है कि भगवान् नारायण के तीन पग में यह सब चराचर ब्रह्माण्ड आ जाता है। बस इतना तीन पग-भर चाहता हूँ।'

"शुक्राचार्य हँस पड़ा। हँसते हुए बोला, 'इतना चलकर दिखाओ।'

'आचार्यवर ! परमात्मा ने इस जगत् की तीन पग में रचना की है और उस श्रीहरि के पुत्र ने उतनी ही जो उसके तीन पग में है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँगी है।'

"बलि का मुख उतर गया। वह वचन दे चुका था कि जो कुछ वह माँगेगा, दिया जायेगा। स्वभाववश वह आसन से उठा और बायें हाथ में जल-पात्र पकड़ दाहनी अंजुली में जल ले बोला, 'मैंने वचन दिया है और क्षत्रिय होते हुए इसका पालन करना अपना धर्म मानता हूँ। बलि ने कहा, 'लो, मैंने त्रिलोकी का जितना कुछ भी मेरे अधिकार में है, तुम्हें दिया। अब इसे उठा ले जाओ।'

'ठीक है महाराज ! आप वास्तव में महा दानी हैं और भगवान् आपको इस महान् सुकृत का फल देगा। मैं पूर्ण मानव-समाज को यह वर देता हूँ कि वह आज से स्वतन्त्र है। वह अपना शासक स्वेच्छा से स्वीकार कर सकता है। जो अपना शासक स्वीकार नहीं करेंगे, वे न करने के लिए भी स्वतन्त्र हैं। परमात्मा ने मनुष्य को स्वतन्त्र रहने के लिये निर्माण किया है। यह अच्छा कार्य करे अथवा बुरा कार्य करे, सब प्रकार से यह स्वतन्त्र रहने के लिये बना है। ये स्वेच्छा से अपना-अपना शासक निर्वाचन कर सकते हैं। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो कर्म करने में स्वतन्त्र और फल भोगने में ईश्वरीय न्याय के अधीन है।

'महाराज बलि के दान से प्राप्त इस पूर्ण भूमण्डल को मैं स्वतन्त्रता प्रदान करता हूँ।'

"सभी वर्गों के मानव इस घोषणा से प्रसन्न हो नाचने और गाने लगे थे तथा भगवान् वामन की जय-जयकार करने लगे। स्वतन्त्रता का अर्थ लोग समझते थे। यह था अपने परिश्रम से उपलब्धि को स्वेच्छा से भोग करने की स्वीकृति। परिश्रम से प्राप्त को भोग करे, दान करे अथवा नाली में बहा दे। इस स्वतन्त्र आचरण का पूर्ण तात्पर्य जन-जन को समझा दिया गया और इस प्रकार मिली मुक्ति से लोग स्वेच्छा से परिश्रम कर उसका भोग करने लगे।

"इस पर भी मानव-प्राणी में बुद्धि का प्रचुर मात्रा में होना भगवान् का वरदान था और इसने अपने लिये पुनः मार्ग बनाया। कुछ काल के लिये अव्यवस्था उत्पन्न हुई, परन्तु इसने एक नया संगठन बना शान्ति और व्यवस्था की स्थापना कर ली। इस व्यवस्था में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदित्यों का प्रभुत्व पुन: बढ़ने लगा और वे पुन: देवलोक में अपना स्वत्व बना सके तथा इन्द्र वहाँ का राजा बन गया।

"संसार में पुन: स्वतन्त्रता की दुंदुभि बजने लगी। स्थान-स्थान पर स्वराज्य स्थापित हो गया और मनुष्य-वर्ग अपना कल्याण तथा अकल्याण पुन: स्वेच्छा से करने लगा।

"जब वामन भगवान् भूमण्डल के मानव-समाज के बन्धनों का विभाजन कर लौटने लगे तो आचार्य शुक्रदेव ने उनके सम्मुख आ हाथ जोड़ कहा, 'भगवन्! आपने अपना परिचय नहीं दिया। आपके, मेरा अभिप्राय है कि आस्तिकों की मीमांसा के अनुसार तो परमात्मा सब प्राणियों का पिता है, परन्तु मैं आपके इस शरीर, मन और बुद्धि के निर्माता का नाम जानना चाहता हूँ।'

'आपने ऐसा तब पूछा नहीं था। अन्यथा इस स्पष्ट प्रश्न का उत्तर तब भी दे सकता था।

'आचार्यवर! मेरे पिता हैं प्रजापति कश्यप और माता है महिषी अदिति।'

'तो तुम इन्द्र के छोटे भाई हो। परन्तु तुम तो बहुत ही अल्पायु के प्रतीत होते हो। क्या महारानी अदिति इस आयु में भी पुत्र जनती हैं?'

'आचार्यवर! मैं ग्यारह वर्ष की वयस का हूँ। मेरी माता की वयस इस समय एक सहस्र वर्ष से ऊपर है, परन्तु उस नारायण हरि की लीला का पारावार कौन पा सकता है? मैं उसकी कृपा का ही फल हूँ।

'यह शरीर ग्यारह वर्ष का अवश्य है, परन्तु यह आत्मा तो अजन्मा, अनादि और नित्य है। मन भी उसके साथ ही सदा रहता है।'

'तुम तो महान् ठग प्रतीत होते हो।'

'मैंने क्या ठगी की है? आचार्यवर, आप में दृष्टि-दोष आ गया है जिससे आपको सीधा टेढ़ा और टेढ़ा सीधा दिखाई देने लगा है। मैंने झूठ नहीं बोला। केवल अपने उद्देश्य को समय से पूर्व प्रकट नहीं किया और मेरा यह उद्देश्य स्वार्थवश नहीं है। मुझे इससे कुछ लेना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना नहीं ।'

'परन्तु तुम्हारे आदित्य भाइयों को तो इससे लाभ होगा ?'

'मैंने उनको राजा बनाने के लिये नहीं कहा । वे राजा बनेंगे तो अपने सद्‌गुणों से बनेंगे । न ही मैंने महाराज बलि को राज्य त्यागने के लिये कहा है ।

'भगवती पृथिवी आपकी विकृत शिक्षा के बन्धनों में जकड़ी हुई थी । मैंने मुक्त कर दी है ।'

'परन्तु इससे तो भारी अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी । मनुष्यों में बुद्धियाँ भिन्न-भिन्न हैं । उनकी विचारधारायें पृथक्-पृथक् हैं । सबके हित अपने-अपने हैं । अत: यहाँ वन-पशुओं का-सा संघर्ष चल पड़ेगा और इसका पाप तुम्हारे सिर पर होगा ।'

'मैं उन जघन्य पापों का भागी नहीं हो सकता । स्वतन्त्रता के यह अर्थ नहीं । बुद्धि सब मानवों को मिली है और यदि वे इसका प्रयोग नहीं करते तो स्वतन्त्रता प्रदान करने वाले का दोष नहीं । जो उसका दुरुपयोग करेगा, वह उसका दूषित फल भी पायेगा । परन्तु आचार्यवर, आपने तो पूर्ण मानव-समाज को बाँधकर उनसे दासों की भाँति कार्य लेना आरम्भ कर दिया था ।'

'परन्तु उस कार्य का फल भी तो सब को समान रूप से मिलता था ।'

'यही तो अन्याय हो रहा था । सबका परिश्रम और कौशल समान न होने पर भी आप सबको समान फल दे रहे थे । यह अन्याय ही तो था । और आपके वितरण का ढंग भी दूषित था । वितरण में बुद्धि का प्रयोग नहीं हो रहा था । जिसने जो माँगा, दे दिया और इस दोष-पूर्ण नीति का ही तो परिणाम है कि कल के राजा आज के रंक बने हैं ।

'परन्तु भगवन् ! मैंने उन्हें रंक नहीं बनाया । उनका पूर्ण धन-सम्पद्, साथ ही वैभव परिश्रमी जनता का था । वह उसका वितरण यह देखे बिना कर रहे थे कि कौन कितना परिश्रमी है ? मैंने उनकी इस अनधिकार चेष्टा को रोक कर जिनका है, उनको वापस दिला दिया है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भगवन् ! मैं तो जैसे इस संसार में आया था वैसे ही अलिप्त यहाँ से जा रहा हूँ। आदित्यों ने मुझे यह लंगोट और कमण्डलु दे दिया था जिससे मैं अशिष्ट प्रतीत न होऊँ। वह भी मैं यहाँ ही छोड़ जाऊँगा। मैं यहाँ से और भूत-पूर्व महाराज बलि के यहाँ से एक दाना अन्न का भी नहीं ले जा रहा।'

'पर अब इस प्रह्लाद के पोते बलि का क्या होगा ?'

'भगवन् ! अपने पूर्वजों के भले कामों का यश ही मनुष्य को मिलता है। यह उन भले पूर्वजों के पुण्य-कर्म का ही यश था कि बलि राजा हुए हैं। परन्तु प्रत्येक अपने कर्मों में स्वतन्त्र होता है और फल उन कर्मों के अनुसार ही प्राप्त करता है।

'बलि को अपने पिछले कर्मों के दूषित फल से मुक्त होने के लिये पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त करना चाहिये। जब उनका फल निःशेष हो जायेगा तो वह पुनः उत्क्रमण करने के लिये स्वतन्त्र होंगे। तब उन्हें अपना जीवन नये सिरे से निर्माण का अवसर मिलेगा।'

'वाक्चतुर वामन भगवान् !' आचार्य ने व्यंग कसा और कहा, 'परन्तु अभी तक यह समझ में नहीं आया कि तुम्हारे नारायण हरि को दूसरों की इतनी चिन्ता क्यों रहती है कि बिना बुलाये उनके कार्यों में हस्तक्षेप करता रहता है ? मुझे भय है कि कहीं सब मनुष्य मिलकर उसके विरुद्ध विद्रोह न कर दें।'

'वह तो आपने किया था, परन्तु अपने अल्प ज्ञान के कारण दूसरों के लिये ऐसा जाल निर्माण कर बैठे कि उसमें स्वयं ही फँस गये हैं।'

"शुक्राचार्य अभी भी समझ नहीं सके थे कि उनकी योजना में दोष क्या है ? अतः वह इस ठिगने कद के, परन्तु महान् ओजस्वी बालक के मुख को देखते रह गये। इस पर वामन भगवान् ने पूछा, 'तो अब मैं जाऊँ ? आपका संशय निवारण हो गया है न ?'

"आचार्यजी को चेतना हुई और वह बोल उठे, 'भगवन् नहीं। समाधान नहीं हुआ।'

'तो भगवान् श्री नारायण हरि से याचना करो। वह ज्ञानस्वरूप है और उसी की कृपा से ज्ञान की उपलब्धि हो सकती है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"शुक्राचार्य आँखें मूँद अपने संशयों को वाक्य-बद्ध कर रहा था जिससे वह इस वाक्-चतुर बालक से पूछ सके। जब उसके मन में एक प्रश्न बना तो वह आँखें खोल उससे पूछने लगा, परन्तु वह विस्मित खड़ा रह गया। उसके सामने वह बालक नहीं था और दूर-दूर तक देखने पर भी वह कहीं दिखायी नहीं दिया।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय परिच्छेद

अमृत को यह सब कथा गल्प मात्र लग रही थी। अतः उस दिन चाय पीते हुए उसने मुस्कराते हुए बाबा से पूछ लिया, "बाबा ! यह तो आप बहुत बढ़िया उपन्यास का सृजन कर रहे हैं।"

"उपन्यास ? वह क्या होता है ?"

"एक काल्पनिक कहानी।"

"और कल्पना क्या होती है ?"

"जिसमें सत्यता न हो।"

"और यदि कल्पना सत्य हो तो उसे क्या कहते हैं ?"

"कल्पना सत्य होती ही नहीं।"

"बाबा !" महिमा बोल उठी, "यह नहीं जानते, परन्तु मैं जानती हूँ कि कल्पना सत्य भी होती है। जब कल्पना आधार-युक्त हो तो यह सत्य होती है। मैं ऐसे उदाहरण दे सकती हूँ जब कल्पना सत्य होती है।"

अमृत खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "बाबा ! आपको वकील तो एक अति प्रबल मिला है, परन्तु इसकी बात वैसी ही असत्य है जैसी कि अधिकांश वकीलों की कचहरी में बहस असत्य होती है।"

"वाह ! यह कैसे ?" महिमा ने प्रतिवाद करते हुए कहा, "न्यायालय में सदा दो पक्ष होते हैं। एक सत्य-पक्ष होता है और दूसरा असत्य। जो वकील सत्य-पक्ष को पुष्ट करने न्यायालय में जाते हैं, वे असत्यवक्ता कैसे हो गये ? इससे भी तो यही बात सिद्ध हुई कि कम-से-कम पचास-प्रतिशत वकील सत्यवक्ता होंगे और हम पति-पत्नी में भी आधे सत्यवादी हैं ही।"

इस पर तो सब हँसने लगे। महिमा गम्भीर बनी रही और जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब हँस चुके तो बोली, "देखिये जी ! जब धुआँ दिखाई दे तो अग्नि की कल्पना सत्य होती है। जब हम किसी जीवित प्राणी को देखते हैं तो उसके कभी मरने की कल्पना भी सत्य होती है। इसी प्रकार अनेक कल्पनायें हैं जो सत्य होती हैं। उनका एक दूसरा नाम भी है। उसे अनुमान कहते हैं।"

"देखो महा बुद्धिमान अमृत !" विष्णुशरण ने कहा, "यह जो मैं कह रहा हूँ, उपन्यास तो है। परन्तु उपन्यास के वह अर्थ नहीं जो तुम लगा रहे हो। जब कुछ विचारों, घटनाओं और घटनाओं के फल को व्यवस्थित रूप में कहा जाये तो वह उपन्यास कहलाता है। अभिप्राय यह कि व्यवस्थित रूप में किसी प्रकरण का वर्णन उपन्यास होता है। यही मैं कर रहा हूँ।"

"तो बाबा !" महिमा का प्रश्न था, "कथन समाप्त हो गया है क्या ?"

"नहीं। यह तो आरम्भ ही है।"

"तो बाबा ! नित्य इसके वर्णन का कष्ट किया जाये और मैं इसको लिपि-बद्ध कर दूंगी।"

"कैसे और कब करोगी ?"

"आज ही रात के समय कल और आज का वृत्तान्त लिख दूंगी। तदनन्तर आपके नित्य के वक्तव्य को रात के समय लेखनी-बद्ध कर दिया करूँगी।"

भृगुदत्त ने कहा, "बाबा ! बहुत धन्यवाद है। हमारे भी घर में एक बलि का अवतार प्रतीत होता है और वह बल और छलपूर्वक धन एकत्रित कर रहा है और फिर उसका याचकों में वितरण करता है।"

"आपके घर की बात मैं जानता नहीं। परन्तु इस समय जो कम्युनिस्ट देशों में हो रहा है, वह बलि के राज्य के समान है। पूर्ण देश के श्रमिकों की कमाई को राज्य-कोष में रखकर उसमें से थोड़ा-सा समान रूप में वितरण कर दिया जाता है और शेष, जो सलाम कर माँग लेता है, उसे दे देता है। दोनों समय उसके नमस्कार को ही उसकी पाने की योग्यता मान लिया जाता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उत्तरी वियतनाम को, क्यूबा को, उत्तरी कोरिया को और अब अरब गणराज्य को फोकट में बाँटी जा रही सम्पत्ति उन देशों के निर्धन श्रमिकों की ही है।

"इनको भी कोई मिल जायेगा जो सब को उनका वापस कर देगा।" बाबा ने बात बदल पूछ लिया, "आज आपकी छोटी लड़की नहीं आयी। मुझे वह बहुत ही बुद्धि एवं प्रतिभाशाली प्रतीत हुई है।"

"वह अभी दो-तीन दिन तक नहीं आयेगी। वह किसी कार्य में संलग्न है।" सबने समझा कि वह रजस्वला हो रही है। इस कारण उसे घूमने-फिरने से मना कर दिया गया है।

गरिमा के न आने की चिन्ता अमृतलाल को भी थी, परन्तु वह अपनी उत्सुकता महिमा के माता-पिता के सामने प्रकट नहीं कर सका। इस कारण चाय के उपरान्त अपने कमरे में आकर उसने महिमा से पूछा, "आज गरिमा न तो अपने माता-पिता के साथ आई है और न ही उनके घर पर दिखायी दी है। वैसे तो वह बाबा की कपोल-कल्पित गाथा में तुमसे अधिक रस ले रही थी।"

"हाँ। मुझे भी वह वहाँ नहीं मिली। मैं उसके कमरे में उसे मिलने गयी थी, परन्तु कमरा भीतर से बन्द था। मैंने द्वार खटखटाया था, परन्तु भीतर से कोई बोला नहीं। इस कारण उसके चिन्तन में बाधा न बनने का विचार कर चली आयी हूँ।"

"कहीं उसकी हत्या कर उसका शव कमरे में बन्द करके न रखा हो?"

"मुझे विश्वास है कि ऐसा कुछ नहीं हुआ। पिताजी और माताजी को मैं इतना क्रूर नहीं मानती। मैंने माताजी से पृथक् में बात की थी। मैंने पूछा था कि गरिमा कहाँ है? उन्होंने बताया कि वह अपने भविष्य के विषय में विचार कर रही है। मैंने उसे आपकी सब करतूत का वैसे ही और उन्हीं शब्दों में वर्णन कर दिया था जैसे आपने मुझे बताया था। इस पर उन्होंने यही कहा था कि वे उसके मार्ग में बाधक नहीं बनेंगे। इस पर भी उसको अपने भविष्य के विषय में विचार करने के लिये कहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"माताजी ने उसे कहा था कि वह आपकी अविवाहिता पत्नी के रूप में रह सकती है, परन्तु विवाह तो तब तक नहीं हो सकेगा जब तक आप अथवा मैं तलाक न दे दें। मैं तलाक दूंगी नहीं। आपको मुझे तलाक देने में कोई कारण मिल नहीं सकेगा। इस कारण उसके लिये तीन मार्ग दिखा दिये गए हैं। प्रथम, कल अथवा परसों तक उसका विधिवत् किसी युवक से विवाह कर दिया जायेगा। दूसरा मार्ग है आपकी अविवाहिता पत्नी बन चण्डीगढ़ जाकर रहे और तीसरा मार्ग यह है कि वह आवारा स्त्रियों की भाँति नित्य नया विवाह करती फिरे। उसे कल तक का समय दिया है और वह चिन्तन कर रही है।"

"इस अवस्था में मुझे भी उसका मार्ग दर्शन करने का अवसर मिलना चाहिये।"

"यदि वह इसकी आवश्यकता समझेगी तो उसे अवसर दिया जायेगा।"

"यह भी तुम्हारी माताजी ने कहा है ?"

"हाँ। मैंने पूछा था कि क्या वह गरिमा को आपसे मिलकर बात-चीत करने का अवसर देंगी ? उनका उत्तर था कि यह गरिमा के अपने विचार करने की बात है। वह किसी से भी सम्मति कर सकती है। उनसे, अपने पिताजी से अथवा किसी अन्य से।

"इसका अर्थ मैं यह समझी हूँ कि माता-पिता ने उसे कह दिया है कि अब उनके घर में उसके लिये स्थान नहीं है। कारण यह कि उन्होंने उसे तीन ही विकल्प बताये हैं और उनमें उनके घर रह शिक्षा जारी रखने का विकल्प नहीं है।"

"इससे तो वह आत्म-हत्या कर लेगी।"

"तब इसका पाप आपके सिर पर होगा।"

"पर मैं पाप-पुण्य के विचार से अपने जीवन को नहीं चलाता। यदि ऐसा विचार करने लगता तो इस समय न तो चण्डीगढ़ में मैं अपना मकान बना सका होता और न ही तुम्हें वह सुख-सुविधा पहुँचा सकता जो इस समय पहुँचा रहा हूँ।"

महिमा मुख देखती रह गयी। अमृत ने अपनी बात जारी रखी।

—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने कहा, "मेरा मन यहाँ से ऊब रहा है। तुम्हारी बहन का आकर्षण था, जो मुझे यहाँ खींच लाया था। अन्यथा मैं यहाँ आता ही नहीं।"

"तो आप अपने माता-पिताजी से मिलने नहीं आये ?"

"मुझे उनकी कोई भी बात पसन्द नहीं। पिताजी तो उद्यान में रखे नौकरों की मेहनत-मज़दूरी का फल भोग रहे हैं। स्वयं तो वह वहाँ एक तिनका भी नहीं तोड़ते। मैं फलोद्यान की पूर्ण आय का अधिकारी पिताजी को नहीं मानता। माँ तो बेचारी भूमि-मात्र है। वह पृथ्वी माता, पिता की भोग सामग्री मात्र है। बाबा हैं, वह गप्पें हाँक-हाँक कर अपनी वृद्धावस्था व्यतीत कर रहे हैं। अब उनका इस संसार में रहते हुए अन्न गंदा करने में कोई प्रयोजन नहीं।"

महिमा इस पूर्ण कथन से अति दुःखी मन से बैठी रह गई। वह भी अपने मन में अपने भविष्य के विषय में विचार कर रही थी। वह विचार करती थी कि इस असुर पति के साथ चण्डीगढ़ जाना चाहिये अथवा नहीं ?

उसे मौन देख अमृत उठा और भ्रमण के लिये मकान के बाहर चला गया।

महिमा ने अपनी कलम निकाली और कागज़ लेकर बाबा का तथा अपने चण्डीगढ़ से आने के उपरान्त का वृत्तान्त लिखना आरम्भ कर दिया।

लिखते-लिखते रात के भोजन का समय हो गया था। अमृत भ्रमण से लौट आया था और महिमा के समीप बैठ देख रहा था कि वह क्या लिख रही है ?

महिमा अपने लिखने में इतनी लीन थी कि उसका ध्यान अपने पति की ओर नहीं गया। जब सेवक भोजन के लिये बुलाने आया तो महिमा ने कलम रख कागज़ बटोरने आरम्भ कर दिये। अब उसने अपने पति को देखा और पूछने लगी, "तो आप मेरा लेख पढ़ रहे थे ?"

"परन्तु तुम तो अपनी और मेरी कथा भी लिख रही हो।"

"इसमें बाबा का बताया वृत्तान्त भी लिखा है। अपनी बात तो बाबा की कथा की पृष्ठभूमि है।"

"उससे क्या अभिप्राय है ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यही कि जो कुछ बाबा बता रहे हैं वह एक अटल सिद्धान्त की बात है। वह आदि सृष्टि काल से चली आ रही है।"

इस समय महिमा ने कागज़ उठा मेज़ के दराज़ में रख दिये और उनको ताला लगा दिया।

"यह ताला क्यों लगाया है ?" अमृत ने पूछ लिया।

"इस कारण कि कहीं आपको तथा गरिमा को अपनी करतूत का वर्णन देख क्रोध न आ जाये और इन कागज़ों को जला ही न डालें।"

"मुझे तो अपने मन की बात लिखी जाती देख प्रसन्नता हुई है। तुमने मेरे विषय में ठीक ही लिखा है। इससे मैं प्रसन्न हूँ।"

दोनों उठ ऊपर की मंज़िल पर बाबा के कमरे के बगल वाले कमरे में चले गये। भोजन के समय किसी प्रकार की बात नहीं हुई। बाबा ने पूछा, "महिमा ! मेरी कथा लिख रही हो ?"

"हाँ, बाबा ! लिखनी आरम्भ कर दी है। लिखने में तो वह बहुत लम्बी बात हो गयी है। इसके बीस पृष्ठ तो लिख चुकी हूँ और यह अभी एक-तिहाई ही हुआ है। इस पर भी आज रात सब लिखकर समाप्त कर देना चाहती हूँ।"

"ठीक है। जब मैं यह देह छोड़ कहीं अन्यत्र चला जाऊँगा और तुम्हारे पुत्र-पौत्र हो जायेंगे, तब वे इस कथा को पढ़कर कुछ बुद्धिमान बन सकेंगे।"

भोजन समाप्त हुआ तो महिमा पुनः मेज़ के दराज में से लिखे कागज़ निकाल उन्हें पढ़ने लगी।

"महिमा ! इसे सुबह देख लेना।" अमृत ने अपनी पत्नी से कहा।

"क्यों ?"

"इसलिये कि मैं तुम्हारी संगत की इच्छा करने लगा हूँ।"

"मुझे इस समय अवकाश नहीं है।"

"इस नीरस कार्य की तुम मेरी संगत से उपमा दे रही हो ?"

"मुझे उसमें अब किंचित् मात्र भी रस प्रतीत नहीं हो रहा।"

"अब मैं तुम्हें सन्तान देने का विचार रखता हूँ।"

"आपके मन की वर्तमान अवस्था में मिली सन्तान ता सर्वथा असुर होगी। अब आपसे सन्तान प्राप्त करूँगी तो मुझे उससे दुःख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और क्लेश मिलने की ही सम्भावना है। जब तक आप अपने अनाचार का प्रायश्चित्त और पश्चात्ताप नहीं कर लेते तब तक यह भी नहीं हो सकता।"

अमृत ने उसके गले में बाँह डाल उसे अपने समीप करने का यत्न किया, परन्तु महिमा तमक कर उठ खड़ी हुई और बोली, "देखिये ! यदि आपने बलात्कार करने का यत्न किया तो मैं हल्ला कर घर-भर को यहाँ बुला लूँगी और फिर अपने व्यवहार की सफाई वहाँ दे दूँगी।"

अमृत अभी गरिमा के विषय की बात का हल्ला करना नहीं चाहता था। इस कारण चुपचाप अपने पलंग पर जा लेटा। महिमा अपने लेखन-कार्य में संलग्न हो गयी।

: २ :

अगले दिन महिमा माँ के घर नहीं गयी, परन्तु भृगुदत्त और उसकी माँ बाबा की कथा सुनने आये। अमृत और महिमा के विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब उनके साथ गरिमा भी आयी।

वे आये तो सीधे बाबा के कमरे में चले गये। विष्णुशरण मध्याह्न के भोजन के उपरान्त विश्राम कर चुका था और जब कथा का समय हो रहा था। सुरेश्वर, सुन्दरी, प्रज्ञा और उसके बच्चे तो वहाँ पहले ही बैठे थे। महिमा और अमृत भी वहाँ आकर बैठे ही थे कि भृगुदत्त इत्यादि आ गये।

आते ही विष्णुशरण ने पूछ लिया, "पण्डित भृगुदत्त ! कहिये सब प्रकार से स्वस्थ हैं ? आज तो गरिमा भी आयी है।"

गरिमा ने गम्भीर भाव बनाये हुए हाथ जोड़ बाबा को नमस्कार का और अपनी माँ तथा अमृत की माँ के मध्य बैठ गयी।

बाबा के कथन का उत्तर भगवती ने दिया, "हाँ बाबा ! आज इसका स्वास्थ्य कुछ ठीक है। यह लड़की आपसे अपने विषय में कुछ पूछने आयी है।"

"मेरा आशीर्वाद सदा इसके लिये है। यह मुझे बहुत ही प्रिय प्रतीत हो रही है।"

"यह कथा के उपरान्त आपसे पृथक् में कुछ जानना चाहती है।"

"ठीक है। यह जो-कुछ पूछेगी, वह अपनी समझ के अनुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताऊँगा।"

"बाबा !" महिमा ने बीच में ही बात रोक कर कहा, "मैंने आपकी बात जैसी मुझे स्मरण रही, लिख ली है। पचास पृष्ठ भर गये हैं। आपने कल बताया था कि बलि के मन्त्री और गुरु शुक्राचार्य वामन भगवान् को अपने सामने न देख चकित रह गये। तब बलि का क्या हुआ और कैसे वह राज्य को छोड़ चल दिया ? उसने अपने वचन को भंग क्यों नहीं किया ? आजकल तो राजनीतिक लोग पग-पग पर झूठ बोलते हैं एवं वचन भंग करते हैं। उनके झूठ पर विश्वास करने वाले भी बहुत मिल जाते हैं।"

"हाँ, ऐसा हो रहा है। इसमें कारण यह है कि मानव-मन और बुद्धि तब से आज दुर्बल पड़ चुके हैं। इस कारण तब से आज जनता को भ्रम में डाल देना सुगम है।

"बात इस प्रकार हुई थी कि जब यज्ञ में बलि ने वचन दिया कि वह वामन को मुँह-माँगा देगा और लोग इसकी वाह-वाह करने लगे तो वामन ने परमात्मा के तीन पग भूमि माँग ली। अर्थात् उसने द्यु, भू और अन्तरिक्ष सब माँग लिया।

"जनता के सामने दिया वचन भंग करता तो जनता में उसकी प्रतिष्ठा शून्य समान हो जाती और फिर लोग विद्रोह कर उसकी वैसे ही हत्या कर देते जैसे कि रूस में जार को मार दिया है तथा फ्रांस की महान् क्रान्ति में वहाँ के राजा और रानी की हत्या कर दी थी।

"प्रजा में बहुत शक्ति है, परन्तु यह एक अज्ञानियों, भूखों और पूर्वग्रहों से ग्रसित व्यक्तियों का समूह होता है। जब प्रजा की आँखें खुलती हैं तो वह एक महान् शक्ति का सूचक हो जाती है।

"यही बात तब हुई थी। भूमण्डल-भर में यह विख्यात हो गया कि बलि ने अपना सम्पूर्ण राज्य वामन भगवान् को दान दे दिया है और भगवान् ने मनुष्य मात्र को स्वतन्त्र कर दिया है।

"इस कारण सब स्वतन्त्र हो गये। स्वतन्त्रता एक अति प्रिय वस्तु है। प्रत्येक मनुष्य की आत्मा इसके लिये व्याकुल रहती है। ज्यों ही प्रजा को पता चला कि सब स्वतन्त्र हो गये हैं, तो वे नाचने-गाने लगे, ढोल-नक्कारे, दुंदुभियाँ बजने लगीं और सब अपने-अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान पर राजा बन गये। यह वर्तमान युग की क्रान्ति-सी ही थी, परन्तु उस समय के लोग अधिक बुद्धिशील होने से किसी धर्मात्मा राजा को ढूंढने लगे।"

"और बलि ने कौनसा अधर्म किया था?" अमृत ने पूछ लिया, 'एक महान् दानवीर को अधर्मी तो नहीं कहा जा सकता था।"

विष्णुशरण ने बताया, "वह दानी अवश्य था, परन्तु सब दानी धर्मात्मा नहीं हो सकते और न ही दान सदैव धर्म-कार्य होता है।

"जब कोई चोर, डाकू अथवा ठग किसी परिश्रमी, मितव्ययी और सदाचारी का धन छीन कर माँगने वालों को देने लगे तो वह धर्मात्मा नहीं कहा जा सकता। तीनों लोक में लोग नित्य बारह-तेरह घण्टे परिश्रम करते थे और भूमि में से खोदकर धन उपार्जन करते थे। वह पूर्ण धन राजा ले जाता था। परिश्रम करने वालों को निर्वाह मात्र के लिये दे देता था। उस धन को याचकों में बाँट कर बलि धर्मात्मा कैसे हो सकता था? जो उपार्जन करता है, दान देने का अधिकार उसी को है।

"देखो अमृत! रूस जैसे विशाल देश के लोग निरन्तर परिश्रम कर अपने परिश्रम का फल राज्य को दे देते हैं और राज्य मिश्र देश की सहायता कर रहा है। सन् १९५६ में रूस के उकसाने पर अरबों ने स्वेज नहर पर अधिकार कर लिया था। रूस से इंग्लैण्ड, फ्रांस और अमेरिका भी डर गये थे। यह इस कारण कि रूसी राज्य के पास वहाँ की बीस करोड़ जनता के परिश्रम का छीना हुआ धन है। रूस ने उसी बलबूते पर हंगरी को अपने टैंकों के नीचे कुचल डाला और उसी बल के भरोसे पूर्वी जर्मनी ने अपने सहस्रों नागरिकों को जो पश्चिमी जर्मनी में जाना चाहते थे, गोली से उड़ा दिया। यह सब निर्धन जनता की सहायता के नाम पर ही तो किया था।

"यह सब दान-दक्षिणा का कार्य पुण्य का कार्य नहीं हो रहा। यही बात बलि की थी। वह यज्ञ करता था और त्रिलोकी की जनता से एकत्रित धन यज्ञ में उनको बाँट दिया जाता था जो माँगने आते थे। पात्र-कुपात्र का विचार नहीं किया जाता था। यह पुण्य नहीं पाप था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और यह कहा जाता है कि बलि गधे की योनि में जा पड़ा था। अभिप्राय यह कि वह गधों का काम करता था और परमात्मा ने उसे उसी योनि में जन्म दिया।

"आज भारत में समाजवादी सरकार है। सरकार उनका शोषण कर रही है जो अपनें बुद्धि, बल अथवा शारीरिक सामर्थ्य से अरबों और खरबों रुपये जो प्रति वर्ष अर्जन कर रहे हैं, उस धन का सरकार अपनी इच्छा से व्यय करती है। परिश्रमी और बुद्धिमानों से अर्जित धन व्यय हो रहा है सरकार की इच्छानुसार।

"इसका परिणाम यही होगा जो बलि का हुआ था। कोई चतुर इस सरकार से सब-कुछ ले जायेगा।"

अमृत कभी विचार करता था कि उच्चतम आय को निम्नतम आय के लगभग समान कर दिया जायेगा तो उच्चतम आय करने वालों से छीनकर निम्नतर आय वाले को देना होगा अथवा नहीं? इससे वह बलि के साथ हुई दुर्घटना पर विचार करने लगा था।

विष्णुशरण ने बताया, "इन्द्रादि का न्याय-युक्त व्यवहार और भले लोगों की सहायता करने की ख्याति थी। इस कारण देवलोक में पुनः इन्द्र का राज्य स्थापित हो गया। अन्य लोकों में भी वहाँ के रहने वालों का अपना-अपना राज्य हो गया।

"अमृत-मंथन का कार्य अभी भी चल रहा था और कई सौ वर्ष चलता रहा। जब अमृत उपलब्ध हुआ तो दैत्यों और आदित्यों में उसके पाने का दावा होने लगा।

"एक बृहस्पति देवता थे। उनका विचार था कि अमृत का बँट-वारा अर्थात् वितरण हो जाना चाहिये। इस विषय पर इन्द्रादि आदित्यों का मतभेद था। अतः आदित्यों ने देवों, गन्धर्वों, यक्षों और मानवों की एक सभा बुलाई। उसमें दैत्यों का प्रस्ताव रखा गया।

"बृहस्पति का कहना था कि अमृत की प्राप्ति के लिये दैत्य और आदित्य दोनों ही परिश्रम करते रहे हैं। अतः दोनों का इस पर समान अधिकार है।

"इन्द्र जो बलि के त्रिलोकी पर राज्य के समय घोर कष्ट सहन कर चुका था और जिसकी पटरानी शचि पर बलि ने अधिकार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया था वह सभा को सम्बोधित कर कहने लगा, 'जब मंथन कार्य चल रहा था तब दैत्य अपने परिश्रम का मूल्य लेते रहे थे। उस समय आदित्य अपना पेट काट-काट कर उनका पारिश्रमिक देते थे। निर्माण काल में धन का अर्जन नहीं होता था और दैत्य प्रत्येक प्रकार के कार्य में बाधायें डालकर पारिश्रमिक और सबसे अधिक पाने का हठ करते थे। अतः निर्माण कार्य के समाप्त होने पर मुख्य फल पाने का अधिकार उनको होगा जो निर्माण काल में बिना पारिश्रमिक पाने के कार्य करते थे।

'दैत्य पारिश्रमिक प्राप्त कर सुरा-सुन्दरी में व्यय कर देते थे और आदित्य अपनी उपलब्धियों को पुनः निर्माण कार्य में ही लगा देते थे। अतः दैत्यों का अधिकार नहीं कि वे इस अन्तिम फल का भोग करें।'

"विष्णु भी बलि के राज्य में अति कष्ट में रहा था। उसकी लक्ष्मी को भी बलि पकड़ कर ले गया था और उसे बन्दी बनाकर रख छोड़ा था। बलि के निस्तेज होने पर लक्ष्मी पुनः विष्णु के आवास में आ गयी थी और वह अपने बन्दी जीवन की करुण कथा विष्णु को सुनाती थी। अतः विष्णु ने भी इन्द्र का समर्थन किया और दैत्यों को अमृत में भाग पाने का अधिकार नहीं माना। उसका कहना था कि शक्ति प्राप्त कर दैत्य शक्ति का दुरुपयोग करते थे। इस कारण शक्ति उनके हाथ में जाने नहीं देनी चाहिये।

"इस पर भी बृहस्पति का पक्ष प्रबल था और अधिक संख्या में देवता बृहस्पति की भावात्मक बात पर लट्टू हो रहे थे।

"विष्णु ने कहा भी, 'अमृत की चमत्कारिक शक्ति है और यदि यह बलि के उत्तराधिकारी के पास चली गयी तो वे आदित्यों को जीवित नहीं छोड़ेंगे। वे चुन-चुन कर मार डाले जायेंगे। इस कारण यह सैकड़ों वर्षों की उपज इन लोगों को नहीं देनी चाहिये।'

"सामान्य आदित्य ही इसको पक्षपात युक्त कथन मानते थे। अन्त में निर्णय बृहस्पति के पक्ष में हुआ।

"विष्णु इस निर्णय पर बहुत परेशान था। वह भोले-भाले देवताओं की बुद्धि पर दया करता था, परन्तु वह देवताओं के एक गुण को जानता था और उस गुण से लाभ उठाने का विष्णु ने यत्न किया।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: ३ :

"अमृत पान के लिये एक सहभोज का आयोजन किया गया। एक विशाल उद्यान में आदित्य और दैत्य दोनों एकत्रित हुए। जब अमृत की प्रतीक्षा में दोनों पक्ष बैठे थे तो उपस्थित जनों के मनोरंजन के लिये एक मोहिनी नाम की नर्तकी वहाँ आयी और अपना मनोहर नृत्य दिखाने लगी। दैत्य जो वासनाओं के दास थे, उस मोहिनी का नृत्य देखने में इतने लीन हुए कि अमृत बाँटने की बात भूल ही गये और अमृत आदित्य पान करने लगे।

"आदित्यों को अमृत पान और नर्तकी के नृत्य में कोई तुलना ही प्रतीत नहीं हुई। वह इस उन्नति के उत्कृष्ट काल में नाच-गाने और किसी सुन्दर स्त्री के नृत्य की भाव-भंगी देखने में कोई लाभ नहीं समझते थे।

"एक-आध दैत्य आदित्यों की इस चाल का समझ गये और अपने मूर्ख भाइयों को वासना-लोलुप देख उनको बोले कि चलो अमृत पान करना चाहिये, परन्तु वे सुन्दरी के सुन्दर नृत्य में इतने लीन हुए कि चेतावनी देने वालों की अवहेलना कर नृत्य देखते रहे। यह कहा जाता है कि चेतावनी देने वालों का नाम राहु और केतु था। वे मोहिनी और दैत्यों को नृत्य दिखाने और देखने में लीन छोड़ ..ओं की पंक्ति में जा बैठे और अमृत पाने की प्रतीक्षा करने लगे, परन्तु पूर्व इसके कि वे अमृत रूपी आविष्कार का ज्ञान प्राप्त कर लें, विष्णु ने उनको पहचान लिया और उनकी हत्या कर दी।"

"और विष्णु देवता थे?" अमृत ने व्यंगात्मक भाव में पूछ लिया।

"दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण वह देवता थे। दिव्य गुण तब तक प्राप्त नहीं होते जब तक दिव्य आचार-व्यवहार न हो। आचार-व्यवहार संस्कारों से और संस्कार संस्कृति से सम्बन्ध रखते हैं।"

"और बाबा! संस्कृति दान में पूर्ण राज्य माँग लेने का नाम है क्या? अथवा संस्कृति के अर्थ हैं कि अपना उचित पारिश्रमिक माँगने वालों की हत्या कर दी जाये? बाबा, हमारे और आपके विचारों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो आकाश-पाताल का अन्तर है ।"

"देखो अमृत ! मैं तुमको कथा सुना रहा हूँ और कथा की विवेचना बता रहा हूँ । यह गलत हो सकती है, परन्तु इसको तुम कहने मात्र से गलत नहीं बना सकते । इसके लिये ऐतिहासिक प्रमाण चाहिये ।

"यदि बृहस्पति का कहा मान लिया जाता तो देवता और उनके उत्तराधिकारी वैदिक सम्पत्ति के अनुयायी आर्य तथा भारतीय एवं हिन्दू आज रहते नहीं । ये मुहम्मदी, यीशु प्रभु की भेड़ें अथवा वाम-मार्गी बन चुके होते । उस समय का अमृत पान न किया होता' तो आज स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, योगी अरविन्द और तिलक इत्यादि विद्वानों के स्थान मौलाना मुहम्मद अली, जफर अली और अयूब खाँ इत्यादि उत्पन्न होते । उस समय का पान किये अमृत ही के भरोसे मैं ऐसा देख रहा हूँ कि वेदों के विषय में मैक्समूलर इत्यादि द्वारा फैलायी भ्रान्ति समाप्त हो पुनः दैवी जीवन का विस्तार होगा ।"

"और यदि दैत्य अमृत पान कर जाते तो क्या होता ?"

"वही जो सन् १९४७ में पंजाब में हुआ है । एक भी हिन्दू वहाँ जीवित नहीं रहने दिया गया । अथवा जो रूस में हो रहा है । एक भी स्वतन्त्र विचारक अथवा लेखक जीवित नहीं रह सकता ।"

"बाबा ! वह आर्थिक मामला है । उसे आप धर्म और संस्कृति के झगड़े में किसलिये बार-बार ले आते हैं ?"

"इसलिये कि तुम जैसे पढ़े-लिखे बुद्धिमान को यह बता सकूँ कि धर्म मूल है और अर्थ, काम, यहाँ तक कि मोक्ष भी धर्म के अधीन ही है । धर्म के शाश्वत सिद्धान्त हैं और वे सदा सर्वत्र सबके लिये पालन योग्य हैं ।"

"पर बाबा ! इन दैत्यों की हत्या जो विष्णु ने की थीं, किस प्रकार उचित थी ?"

"यह इस प्रकार कि यदि एटामिक अन्वेषण-शाला में कोई जासूसी करने चोरी-चोरी घुस आये और वह कुछ भी रहस्य की बात जान जाये तो जो कुछ करना चाहिये, वही विष्णु ने किया था ।

"एक बात मैं और समझा देना चाहता हूँ । एक पिता के दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्र हों और दोनों में एक कार्य करने में अति कुशल हो, परन्तु साथ ही चरित्र का हो हीन। वह परिवार का काम करता हो, परन्तु अपना पूरा वेतन नित्य लेकर भोग-विलास में व्यय कर देता हो। दूसरा बेचारा कार्य-कुशल तो न हो, परन्तु परिश्रमी, मितव्ययी, सद्चरित्र का पालन करने वाला और सरल चित्त हो। दोनों किसी पारिवारिक कार्य में संलग्न हों। एक कार्य से उपलब्ध फल को नित्य भोग कर जाता हो और दूसरा अपने फल को तुरन्त भोग न कर कार्य में ही लगाता चला जाये तो भला कार्य के अन्त में तुम दोनों का भाग बराबर का कैसे मान सकते हो ?"

"आज किसी कारखाने में कर्मचारी वेतन किंचित्-मात्र भी कम होने पर हड़ताल कर देते हैं। कारखाने को आग लगा देते हैं और काम करने वालों की हत्या कर देते हैं। ऐसी अवस्था में उस कारखाने के सफल होने पर प्राप्त ज्ञान एवं सुख-सम्पद् में इन कर्मचारियों का भला क्या अधिकार हो सकता है ?

"मैं किसी पूँजीपति के कारखाने की बात नहीं कह रहा। मैं सरकारी क्षेत्र में कर्मचारियों की बात कह रहा हूँ। हैवी इलैक्ट्रिकल्स भूपाल तथा भिलाई इस्पात कारखानों की बात कह रहा हूँ।

"वहाँ के कर्मचारियों ने वेतन में वास्तविक अथवा काल्पनिक कमी के आधार पर हड़ताल कर दी। कारखानों को क्षति पहुँचायी गई, अधिकारियों को कष्ट दिया गया और वेतन में वृद्धि करवा ली गयी।

"यह ठीक हुआ अथवा गलत हुआ, इस पर मैं कुछ नहीं कह रहा। मैं तो यह कह रहा हूँ कि इन कारखानों में जब लाभ होने लगे तो उस लाभ से इन कर्मचारियों को लाभ किसलिये पहुँचे ? यह लाभ तो उस जनता का अधिकार है जो हड़ताल के समय अपने पूर्ववत् वेतन पर भी कार्य पर डटे रहे।

"इसी बात को तनिक व्यापक दृष्टि से देखा जाये। देश का धन-सम्पत्ति समाज के वितरण के समय उन कर्मचारियों को कुछ भी पाने का अधिकार क्या है जो काम करते-करते एकाएक हड़ताल कर, धीरे-धीरे काम करते हुए अथवा भीतर बैठ काम न करने की नीति से जाति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उत्पीड़ित कर अपने वेतन तथा अन्य उपलब्धियों में वृद्धि करा लेते हैं।"

अमृत अभी भी सन्तुष्ट नहीं हुआ। वह बोल उठा, "उनका अधिकार यह है कि वह अपनी बात मनवाने की स्थिति में हैं। उन्होंने संगठन से शक्ति प्राप्त की है और वे शक्ति का प्रयोग करने में पूर्ण रूप से सक्षम हैं।"

"इसका अर्थ यह निकलता है कि किसी बात को प्राप्त करने के अधिकार का आधार शक्ति है। न्याय एक सत्य नहीं है। तब तुम राहु, केतु की हत्या कर देने के लिये विष्णु को दोषी किसलिये मानते हो? वह शक्ति सम्पन्न था और उसने उस शक्ति का प्रयोग कर उनकी हत्या कर दी।

"और तुम भला उन दैत्यों को अमृत पान का अधिकारी कैसे मान सकते हो जो ठीक अमृत वितरण के समय किसी नर्तकी के सुन्दर अंगों के स्पन्दन पर मुग्ध हो अमृत का पान ही भूल गये थे।

"देखो अमृत! मैं तुम्हें शक्ति का ही वृत्तान्त बता रहा हूँ। यह अमृत-मंथन प्रकृति से शक्ति प्राप्त करने का ही एक बृहत् आयोजन था। प्रकृति तो प्रजा को कहते हैं। यह मानव-समाज का निम्नतम भाग होने से समुद्र कहलाता है। इसमें दैत्यों का सहयोग प्राप्त किया गया। वे कुशल शिल्पी थे। नागों का भी सहयोग प्राप्त किया गया। वे कठोर मेहनत-मज़दूरी कर सकते थे। गन्धर्वों और यक्षों का भी सहयोग प्राप्त किया गया। वे योजना को रसमय बनाते रहते थे और योजना में काम करने वालों के लिये अन्नादि उत्पन्न करते थे। इस सब योजना में मस्तिष्क आदित्यों का था और पूर्ण योजना उनकी थी।

"जब योजना चल रही थी तो दैत्यों ने पूर्ण त्रिलोकी पर अपना राज्य ही स्थापित कर लिया और अर्जित धन-सम्पद् का प्रयोग भोग-विलास में और अपने पास आये याचकों में बाँटने लगे थे। पूर्ण त्रिलोकी की जनता त्राहि-त्राहि करने लगी तो एक चतुर आदित्य ने त्रिलोकी को मुक्ति दिला भूमण्डल में स्वतन्त्रता और स्थानीय स्वराज्यों की स्थापना करवा दी।

"दैत्य तो अपने परिश्रम का भोग कर चुके थे। इस कारण विष्णु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्यादि आदित्यों ने अपने पूरा वेतन पा जाने वाले दैत्यों को समाजवाद का नारा लगाने नहीं दिया।

"परन्तु संसार की कथा यहीं समाप्त नहीं हुई। आगे का वृत्तान्त कल बताऊँगा। अब तुम सब जाओ। बेटी गरिमा अपने मन का संशय निवारण के लिये एकान्त में कुछ जानना चाहती है।"

सब उठ खड़े हुए। इनमें भृगुदत्त और भगवती भी थे। ये सब चाय के कमरे में चले गये। वे वहाँ चाय पीने लगे थे। महिमा और अमृत भी वहीं थे। अमृत मौन था। वह समझ रहा था कि गरिमा अपने उससे हुए सम्बन्ध के विषय में बाबा से कहने आयी है और कदाचित् वह उसके साथ रहने की स्वीकृति माँगेगी। वह यह भी पूछ सकती है कि कैसे बिना महिमा को तलाक दिये वह उसे अपने पास रख सकता है?

वह विचार कर रहा था कि इस विषय में उससे भी पूछताछ की जा सकती है और उसे कुछ बातों का समाधान करने के लिये कहा जायेगा।

वह गम्भीरता-पूर्वक विचार कर रहा था कि उसे क्या कहना अथवा करना चाहिये? यों तो वह अब अपने माता-पिता से स्वतन्त्र रहने की क्षमता प्राप्त कर चुका था। इन्जीनियरिंग की परीक्षा उत्तीर्ण कर पिता के क्रान्तिकारी होने की ख्याति से लाभ उठा एक उच्च पदवी पर नियुक्त हो स्वतन्त्र हो गया था। वैसे घूस से प्राप्त धन के आश्रय वह एक-आध रखैल का भी व्यय वहन करने की सामर्थ्य रखता था। इस पर भी वह यह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि वह दोनों बहनों को अपने साथ रखे अथवा एक से छुट्टी पा ले।

जब उसके मस्तिष्क में एक को निकाल देने का विचार आया तो बड़ी बहन को ही निकालने का विचार आ रहा था। बासी से ताज़ा पकवान अधिक स्वादिष्ट होता है।

आधा घण्टा-भर सबको चाय की मेज़ पर प्रतीक्षा करनी पड़ी। चाय समाप्त हो चुकी थी, परन्तु बाबा और गरिमा नहीं आये थे। गरिमा के माता-पिता उसे साथ लेकर ही वहाँ से जाना चाहते थे। इस कारण वे बैठे लड़की की प्रतीक्षा कर रहे थे और पूर्ण परिवार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठा था।

बातों का सूत्र प्रज्ञा ने अपने हाथ में ले लिया था। वह बताने लगी थी कि उसके पति ज्ञानस्वरूप के पिता अमृतसर से उसे लेने के लिये आने वाले हैं।

भगवती ने पूछ लिया, "तुम आयी किसके साथ थीं ?"

"अपने-आप अकेली ही बच्चों के साथ आयी थी।"

"तो अपने आप जा नहीं सकतीं ? बेचारे वेदस्वरूप को व्यर्थ में आने का कष्ट दोगी।"

"यह बात नहीं मौसी ! वह आयेंगे मुझे ले चलने के बहाने से। परिणाम यह होगा कि अपने काम से एक-दो दिन पृथक् होने से विश्राम हो जायेगा और फिर माताजी तथा बाबा की भी यही सम्मति है कि उनके दर्शन हुए बहुत दिन हुए हैं, अतः उनको भी कभी यहाँ आना चाहिये। वैसे तो मैं पिछले वर्ष भी आयी थी। स्वतः ही आयी थी और स्वतः ही बच्चों के साथ चली गयी थी।"

"तो यह बात है। बहाना कर बाबा के दर्शन करने के लिये बुला रही हो ?"

"हाँ मौसी ! बहाना ठीक प्रस्तुत किया है, झूठ नहीं बोला। मैंने उनको लिखा है कि माता-पिता तथा बाबा की इच्छा है कि आप दर्शन दें। अतः मैं यहीं टिकी रहूँगी जब तक वह मुझे लेने नहीं आते।"

भगवती हँस पड़ी। हँसते हुए पूछने लगी, "यदि न आये तो क्या तुम्हारे बिना उनका काम रुक जायेगा ?"

"मैं समझती हूँ कि मैं अब इतनी आवश्यक नहीं रही। वास्तव में कभी भी नहीं थी। घर पर नौकर-चाकर, रसोइये इत्यादि हैं। परन्तु तब मेरी आवश्यकता थी उनको सन्तान देने के लिये और अब आवश्यकता है उनकी सन्तान की देखभाल करने की। बच्चे अब पढ़ने लगे हैं और उनको तो वे लेने आयेंगे ही।"

भगवती मुस्कराकर चुप हो गयी।

गरिमा और बाबा आये। गरिमा के आते ही भृगुदत्त और भगवती उसे ले चले गये। गरिमा को चाय पीने के लिये कहा गया, परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने नहीं पी। ऐसा प्रतीत होता था कि वह बाबा के सामने रोती रही थी।

जब गरिमा ने कहा कि वह चाय नहीं पीयेगी तो तीनों सबका नमस्कार कर चल दिये।

: ४ :

विष्णुशरण चाय पीने लगा, परन्तु किसी ने गरिमा के विषय में नहीं पूछा। सब जानते थे कि कई लोग उनसे गुप्त रूप से सम्मति लेने आया करते हैं और वे किसी के रहस्य की बात किसी दूसरे का बताते नहीं।

अमृत गरिमा के विषय में पूछने के लिये उत्सुक था, परन्तु अपने बाबा से न पूछ महिमा के द्वारा उसके माता-पिता से पूर्ण स्थिति को जानने का उसने विचार किया। वह उत्सुक था कि महिमा अपने माता-पिता तथा अपनी बहन से मिलने जाये और वहाँ की स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर उसे बताये।

चाय के उपरान्त वह अपने कमरे में गया और महिमा से कहने लगा, "महिमा ! तुम अपनी माँ तथा बहन से मिलने कब जाओगी ?"

"मैं विचार कर रही हूँ कि अब मैं वहाँ जाऊँ ही न। जिसको मिलने की इच्छा होगी, यहाँ आकर मिल जायेगा।"

"और यहाँ दिन-भर मक्खियाँ मारती रहा करोगी ?"

"नहीं। बाबा द्वारा वर्णित कथा को लिखा करूँगी। मैं कहानी कह तो नहीं सकती, परन्तु लिख सकती हूँ। मुझे ज्ञात नहीं था कि आपके बाबा इतने सुन्दर ढंग से कहानी कह सकते हैं।"

"कहानियाँ तो वह बाल्यकाल से ही कहने के अभ्यासी थे। सुना है कि यहाँ के महाराज के पिता बनारस में उनकी कथा पर मुग्ध हो उन्हें यहाँ ले आये थे। तब वह उन्नीस वर्ष के थे। तब से वह यहाँ रहते हुए कथा ही तो बाँचते रहे हैं। यह उनका नया व्यवसाय नहीं है।"

"परन्तु क्या अब वह व्यवसाय कर रहे हैं ?"

"हाँ। उन्होंने अब तुम्हें क्रय कर लिया है। यह अपने कथा कहने के बल से ही तो है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मुझे तो उन्होंने दान में पिताजी के घर से लाकर आपके हवाले कर रखा था, परन्तु आप तो अब किसी अन्य के पीछे भागने लगे हैं।"

"इसी कारण तो पूछ रहा हूँ कि तुम अपने पिता के घर कब जाओगी ? मैं उसके विषय में जानना चाहता हूँ जिसके पीछे मेरे भागने की बात तुम कह रही हो।"

"और मैं इस कार्य को कर नहीं सकती। आप स्वयं जाकर पता कर लीजिये।"

"तब तो मैं समझता हूँ कि तुम्हें बाबा को वापस कर देना चाहिये। तुम कह रही हो न कि तुम उनको दान में मिली थी ?"

"मिली तो थी पूर्ण परिवार को। बाबा को पोती के रूप में, सास-श्वसुर को पतोहू के रूप में और पोते को पत्नी के रूप में, ननंद को भाभी के रूप में। यदि आप पत्नी के रूप में रखना नहीं चाहते तो दूसरों के पास उनसे नियत रूप में तो रह सकती हूँ। आप जो मन में आये, करिये।"

"मैं तो पत्नी के रूप में रखना चाहता हूँ।"

"परन्तु आप तो जासूस के रूप में प्रयोग करना चाहते हैं। मैंने इस रूप में कार्य करना अस्वीकार किया है।"

अमृत गरिमा के सम्बन्ध में जानने के लिये उत्सुकता को मन-ही-मन में दबाकर रह गया। रात भोजनोपरान्त महिमा ने बाबा द्वारा उस दिन वर्णित कथा लिखनी आरम्भ कर दी।

जब रात के बारह बज गये और कहानी समाप्त नहीं हुई तो पलंग पर करवटें लेते हुए अमृत ने कहा, "अब बन्द भी करो।"

"अभी तो आधी ही लिखी है। शेष लिखकर ही सोऊँगी।"

"प्रातः लिख लेना।"

"प्रातःकाल का समय तो स्नान, ध्यान-पूजा का होता है। इस कार्य के लिये उसका प्रयोग नहीं कर सकती।"

"परन्तु मैं सोना चाहता हूँ।"

"तो सो जाइये। मैं तो काम समाप्त कर ही सोऊँगी।"

"परन्तु तुम्हारे बिना नींद नहीं आ रही।"

"मेरे अथवा गरिमा के ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने दोनों को समान पद दे रखा है।"

"नहीं, यह नहीं हो सकेगा। मैं आपके स्वास्थ्य और अपनी मनःस्थिति को ठीक रखने के लिये ही कह रही हूँ कि अब आप सो जाइये।"

अमृत करवटें लेता हुआ सोने का यत्न करता रहा। जब महिमा कथा लिखकर अवकाश पा सोने के लिये तैयार हुई तो अमृत सो रहा था।

अगले दिन भी जब महिमा ने माता-पिता के घर जाना और गरिमा के विषय में सूचना लाना स्वीकार नहीं किया तो अमृत नाराज़गी प्रकट करने लगा।

प्रातः के अल्पाहार के उपरान्त अमृत ने पत्नी से कहा, "मैं तुम्हारे माता-पिताजी से मिलने जा रहा हूँ। तुम भी चलो।"

"मैंने आपको अपना विचार बताया है कि मैं अब उस घर में नहीं जाऊँगी।"

"क्यों ?"

"कारण नहीं बताना चाहती। वास्तव में कारण आपको स्वतः समझ जाना चाहिये।"

"तुम गरिमा के विषय में सूचना नहीं लाना चाहती न ? मैं तुमको इस काम के लिये प्रयोग नहीं करूँगा। यह कार्य मैं स्वयं कर लूँगा। मैं तो तुमको अपने साथ औपचारिक रूप में ही चलने को कह रहा था।"

"आप मेरे गरिमा के विषय में न जानने की इच्छा तो ठीक ही समझ रहे हैं, परन्तु वहाँ न जाने का कारण दूसरा है। वह नहीं बताऊँगी।"

"अच्छी पत्नी हो तुम, जो पति से कुछ छिपाकर भी रखना चाहती हो ?"

"इसमें अपने एक दोष की बात है जो मैं आपके सामने प्रकट करना नहीं चाहती। पत्नियाँ अपने दोष तो अपने पतियों से छिपाती ही हैं। यही जग की रीति है।"

—७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परन्तु मैं तो अपने दोष-गुण तुमको बता देता हूँ।"

"मैं इस कथन को सर्वथा सत्य नहीं समझती। कम-से-कम एक दोष तो मुझे ज्ञात हो गया था जो आप बताना नहीं चाहते थे। वही जो पलंग के नीचे छुपाकर रखे हुए थे और मैंने उसे वहाँ देख लिया था।"

"मद्य की बात कह रही हो ?"

"जी।"

"तुम्हारे कहने का यह अर्थ है कि तुम्हारी भाँति मैं भी तुम पर जासूसी कर सकता हूँ ?"

"यह तो सब पति करते हैं। आपको भी सदा करनी चाहिये। मुझे इस पर रोष नहीं होगा।"

"और यदि दोष पा गया तो तुम्हारे लिये ठीक नहीं होगा। दोषी तो होगी ही और साथ ही उस दोष को छिपाकर रखने वाली होने से चोर भी बन जाओगी।"

"तो उस दोष के लिये और उसको छिपाकर रखने के लिये दण्ड दे दीजियेगा। मैं उसके लिये तैयार हूँ।"

"पर क्या बात है ? तुम बताती क्यों नहीं कि तुम किसलिये अपने माता-पिता से भी मिलना नहीं चाहती ?"

"बस यही तो रहस्य है। आप जाइये, मैं आपको मना नहीं कर रही।"

"अच्छी बात है।" यह कह वह अकेला ही अपने ससुराल को चल पड़ा।

अमृत मध्याह्न के भोजन के समय नहीं लौटा। भोजन के समय से पूर्व प्रज्ञा का पति वेदस्वरूप अमृतसर से आ गया।

भोजन करते हुए विष्णुशरण ने उससे पूछा, "कितने दिन यहाँ रहने का विचार है ?"

"विचार तो यही करके आया था कि सायंकाल की बस से चण्डीगढ़ चला जाऊँ और फिर रात की डाकगाड़ी से अमृतसर लौट जाऊँ, परन्तु प्रज्ञा कह रही है कि मैं पाँच वर्ष के उपरान्त आया हूँ; इसलिये मुझे चार-पांच दिन तो रहना ही चाहिये। इसलिए मैंने अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्णय नहीं किया।"

"वहाँ कौन-सा ऐसा काम है जो आपकी अनुपस्थिति में बिगड़ जाने वाला है ? जो भागे-भागे आये हो और भागते हुए ही चले जा रहे हो ?"

"काम तो वहाँ बहुत हैं। यद्यपि मेरे बिना बिगड़ता प्रतीत तो नहीं होता, परन्तु वह अधूरा रह सकता है।"

"क्या काम है जो संसार में किसी के बिना अधूरा रह सकता है ? कार्य कभी अधूरे नहीं रहते। सब कार्य पूर्णता को प्राप्त होते हैं, परन्तु अपने-अपने समय पर। देखो वेदस्वरूप ! सृष्टि रची गयी और यह विनष्ट होगी। तब यह पुनः मूल तत्त्व में लीन हो जायेगी। रचना और प्रलय के बीच में यह अवरुद्ध निरन्तर अपने विनाश की ओर चल रही है। इसे उस ओर चलने से कोई रोक नहीं सकता। न ही इसकी गति को कोई तीव्र कर सकता है। यही कार्य इस सृष्टि में हो रहा है। और यह अपनी गति से चलता जा रहा है।

"बताओ, तुम किस काम को गति दे रहे हो ?"

"बाबा ! इसका अर्थ तो यह है कि हम हाथ-पर-हाथ रखकर बैठ जायें। जो होना है सो हो रहा है। अतएव हम माला लेकर प्रभु का जप करें। मैं ऐसा नहीं मानता।"

सब भोजन कर रहे थे। महिमा अपने ननंदोई और बाबा में वार्त्तालाप को रुचि-पूर्वक सुन रही थी। बाबाजी की जीवन-मीमांसा पर वेदस्वरूप की आपत्ति बहुत प्रबल थी। वह इसका उत्तर जानने के लिये अति उत्सुक थी। अतः वह ग्रास हाथ में पकड़े रह गयी और बाबा के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी।

विष्णुशरण मुस्करा रहा था। उसने महिमा को कहा, "महिमा बेटी ! खाती जाओ। छोड़ दोगी तो पेट खाली रह जायेगा।"

"बाबा ! जीजाजी यही तो कह रहे हैं कि यदि संसार के सब काम चल रहे हैं तो फिर भोजन सामने रखकर बैठ जायें और यह स्वयं ही खाया जाना चाहिये।"

"परन्तु यह भोजन तुम अपने लिये खा रही हो अथवा भोजन के लिये तुम हाथ मुख चला रही हो ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri.

"यह तो अपना पेट भरने के लिये कर रही हूँ।"

"पेट खाली क्यों हुआ ? यह तो तुम्हारे अधीन नहीं। पेट में अग्नि कार्य कर रही है जिससे तुम्हें भूख लग आती है और तुम उसको शान्त करने के लिये खा रही हो।"

"मैंने यही कहा है कि भूख लगनी, खाने का पचकर शरीर का अंग बनना और फिर उन अंगों में टूट-फूट होकर शरीर का मृत्यु की ओर जाना एक अटल अपरिवर्तनशील गति से चल रहा है।"

अब पुनः वेदस्वरूप ने अपने प्रश्न को दोहरा दिया, "पर बाबा ! हम जीवन को छोटा और लम्बा तो कर सकते हैं ?"

"यह तो ठीक है। तुम अपने इस शरीर में निवाश को अधिक और कम तो कर सकते हो, परन्तु शरीर का विनाश तो अपनी गति से ही चलता जा रहा है।

"मैंने यह नहीं कहा कि तुम अपने लिये कुछ नहीं कर सकते। आत्मा अजर, अमर और चेतन है। उसकी न तो रचना हुई और न ही उसकी प्रलय होगी। चेतन होने से तुम इसमें और इसके लिये कुछ अवश्य कर सकते हो। परन्तु वेदजी, एक दूसरा भी चेतन है और वह भी कुछ कर रहा है। वह इस शरीर में चेतन से अधिक बलशाली और नियमानुसार काम करने वाला है। इस कारण उसके कार्य में हम हस्तक्षेप नहीं कर सकते।"

"पर मैं तो जीवात्माओं के सम्बन्ध में ही कुछ कर रहा हूँ और उसको गति देने का यत्न कर रहा हूँ। मेरा अभिप्राय है कि आर्य-समाज का वहाँ एक स्कूल है, कालेज है और कुछ प्राइमरी स्कूल हैं। इनमें मानव आत्मायें शिक्षा पा रही हैं। उनको गति दे रहा हूँ।"

"परन्तु मैं तो यह कह रहा हूँ कि उनकी अपनी अनन्त की ओर गति तो स्वतः चल रही है। वह निश्चित गति से चल रही है। जो कुछ तुम कर रहे हो, अपने लिये कर रहे हो। अपने जीव को ही तो गति दे रहे हो।

"मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि यदि तुम कहो कि तुम किसी दूसरे का कल्याण कर रहे हो तो यह बात ठीक नहीं। हाँ, तुम अपना कल्याण अथवा अकल्याण अवश्य कर रहे हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं यह समझ रहा हूँ कि हम जो कुछ भी कर रहे हैं, वह अपना ही अथवा अपने ही लिये कर रहे हैं।

"अपने लिये किये कर्म के विषय में विचार आवश्यक है। कारण यह कि यह प्रगति की ओर भी हो सकता है और विगति की ओर भी। यही चेतन का गुण है।

"इसलिये मैं कहता हूँ कि यह विचार करना भी मैं किसी दूसरे की भलाई कर रहा हूँ, अपनी बुराई करने वाला हो जाता है।"

"बाबा ! इस दृष्टि से भी विचार करूँगा कि यहाँ रहने में मेरा कल्याण है अथवा अमृतसर जाने में ?"

"हाँ, अब ठीक है। वहाँ का काम तुम्हारे अपने लिए अधिक कल्याणकारी है अथवा यहाँ रहना अधिक कल्याणकारी है।"

"बाबा ! अमृत कहाँ है ? उसके दर्शन नहीं हुए।"

"किसी मित्र को मिलने गया होगा। परन्तु मुझे बताकर नहीं गया। क्यों महिमा, कुछ बताकर गया है ?"

महिमा ने बताया, "नहीं, वह बताकर तो नहीं गये, परन्तु मेरा अनुमान है कि वे मेरे पिताजी से मिलने गये हैं। कदाचित् उन्होंने भोजन के लिये रोक रखा है।"

: ५ :

महिमा बाबा के कथन का अभिप्राय यह समझी थी कि हमें अपने जीवात्मा की प्रगति का ध्यान रखकर ही कार्य करना चाहिये। हम किसी दूसरे का कल्याण अथवा अकल्याण कर सकते ही नहीं। हमारा प्रत्येक कार्य अपने ही लाभ-हानि का सूचक हो सकता है। इस कारण अपना कल्याण किसमें है, यह जानना अत्यावश्यक है।

भोजनोपरान्त वह प्रज्ञा के कमरे में चली गयी और बहुत-से अनावश्यक विषयों पर बहन और जीजा से बातें होने लगीं तो वेदस्वरूप ने बाबा की बात पर चर्चा आरम्भ कर दी। उसने कहा, "बाबा की बात का अर्थ मैं यह नहीं समझा कि हमें लोक-कल्याण का कार्य बन्द कर देना चाहिये। उनका कहने का अर्थ यह प्रतीत होता है कि हम लोक-कल्याण कार्य भी तो अपने कल्याण के लिये ही करते हैं। वह कल्याण आत्मा का है, शरीर का नहीं। इस कारण करणीय है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तब तो आपको अमृतसर जाने से रोकना ठीक नहीं।"

"हाँ। किन्तु उन्होंने रोका नहीं। केवल एक बात कही है कि यह आत्मा चेतन है और चैतन्य का यह लक्षण है कि वह जहाँ कार्य का आरम्भ करता है वहाँ इसकी गति को भी दिशा देता है। एक युरोपीय मीमांसक ने कहा है कि चैतन्य अर्थात् 'लाइफ' का लक्षण है कि वह (काल) 'डिस्क्रीशन' और (दिशा) 'डायरैक्शन' निश्चय करता है। कार्य कब आरम्भ किया जाये और इसे किस दिशा में चलाया जाये, यह चेतन आत्मा के इच्छा और विचार की बात है।

"केवल करना तो जड़ पदार्थों का कार्य है। इन्हें सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा द्वारा कार्य पर लगा दिया गया था तब से ही ये लगे हैं। इनमें जड़त्व (इनर्शिया) होता है। अतः ये निर्धारित दिशा में चलते जा रहे हैं।

"काल और दिशा का निश्चय तो हमारी चेतन आत्मा करती है।

"प्रज्ञा कह रही है कि बाबा के कथन का अभिप्राय यह है कि समय-समय पर काल और दिशा पर चिन्तन करते रहना चाहिये और इसीलिये मैं कुछ दिन यहाँ ठहर कर चिन्तन करूँ।"

"बहनजी ठीक कह रही हैं। मैं भी कुछ दिनों से यहाँ पर रह कर यही कर रही हूँ। डेढ़ वर्ष तक चण्डीगढ़ में जीवन चलाती रही थी और अब समझ में आ रहा है कि मेरी चेतन आत्मा कार्य नहीं कर रही थी, वरंच प्रकृति के प्रवाह में बहती हुई जा रही थी। यहाँ आने पर बाबा के कथन पर चेतना जाग्रत हुई है और मैं अपने कल्याण के विषय में चिन्तन करने लगी हूँ।"

"और क्या परिणाम निकला है?" प्रज्ञा ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

"अभी तक तो इतना ही समझ में आया है कि चण्डीगढ़ में मेरी आत्मा सुषुप्ति अवस्था में थी। वह अपनी चेतनता का प्रयोग नहीं कर रही थी और इस कारण एक तिनके की भाँति प्रकृति के प्रवाह में बह रही थी। अब नींद खुल रही है और मैं अपने उस मृतप्राय अवस्था पर विस्मय कर रही हूँ।"

मध्याह्न भृगुदत्त, भगवती, गरिमा और अमृत इकट्ठे ही आये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृत का मुख ओज-विहीन और विवर्ण हो रहा था। महिमा इस सबका अर्थ समझी नहीं। उसके मन में कुछ ऐसी आशंका उत्पन्न हो रही थी कि गरिमा और अमृत में किसी प्रकार का समझौता हो गया है और उसके अपने साथ किसी प्रकार की दुर्घटना होने वाली है।

वे आये और सीधे बाबा के कमरे को चले गये। महिमा उनके सीढ़ियाँ चढ़ने का शब्द सुन अपने कमरे के द्वार पर आ खड़ी हुई थी और उनको ऊपर की मंज़िल पर जाते देख वह भी उनके पीछे चली गयी।

वेदस्वरूप और प्रज्ञा तथा उसके बच्चे वहाँ पहले ही बैठे थे। विष्णुशरण बैठा सुरेश्वर से व्यवसाय के विषय में पूछताछ कर रहा था।

भृगुदत्त इत्यादि को आया देख बाबा ने कहा, "लो, गरिमा भी आ गयी है। अब मुझे अपनी कथा आरम्भ कर देनी चाहिये।"

सब बैठे तो बाबा ने कहना आरम्भ किया—

"जब देवता अमृत पान कर चुके तो शेष अमृत को गरुड़ विमान पर रखकर वहाँ से अन्य स्थान पर भेज दिया गया। इस समय विष्णु के संकेत से मोहिनी ने नृत्य बन्द किया और बोली, 'अब मैं थक गयी हूँ।'

"दैत्य उससे वहीं उनके मध्य में ही रह जाने का आग्रह करने लगे, परन्तु वह चुपचाप वहाँ से चल दी। अब दैत्यों को चेतना हुई कि वे तो अमृत पान करने आये हुए हैं। अतः वे उस स्थान पर गये जहाँ देवता अमृत पान कर जीवन में स्फूर्ति और बल अनुभव कर रहे थे।

"दैत्यों ने पूछा, 'अमृत ?'

"उत्तर मिला, 'हम पान कर चुके। आप आये नहीं और वह समाप्त हो गया है।'

"इस पर तो दैत्यों को क्रोध आ गया और वे उच्च स्वर से पुकारने लगे, 'अमृत लाओ, अन्यथा तुम्हारा कल्याण नहीं।'

"तभी किसी ने राहु और केतु के शव देखे। उनके सिर शरीर से कट कर पृथक् रखे थे। इसे देख तो उन्होंने अपने खड्ग निकाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये। वहीं अमृत पान के स्थान पर युद्ध आरम्भ हो गया।

"इस युद्ध का समाचार पा दैत्य और आदित्य दूर-दूर से एकत्रित हो उसमें सम्मिलित होने लगे। अमृत-मंथन के काल में एक नवीन समुदाय का जन्म हुआ था। वह मानव समुदाय था। यद्यपि उनको अमृत पान के समय बुलाया नहीं गया था; इस पर भी वे दोनों दैत्यों और आदित्यों से विलक्षण होने के कारण स्वेच्छा से इस युद्ध में आदित्यों की ओर से लड़ने आये थे। उन्होंने भी अमृत-मंथन के काल में हुए आविष्कारों को ग्रहण किया था। उनके भाग में भी दिव्य धनुष-बाण आये थे और मानवराज अपनी सेना सहित दैत्यों को परास्त करने चले आये।"

"उनको दैत्यों से क्यों गिला था?" भृगुदत्त का प्रश्न था।

"बलि के राज्यकाल में उनके साथ भी वही अन्याय हुआ था जो त्रिलोकी के अन्य प्राणियों से हुआ था। बलि उनके परिश्रम पर भी वैसे ही अधिकार कर स्वयं दान-दक्षिणा करता रहता था। कभी कोई मानव उससे याचना करने जाता तो उसको भी मिलता था। इस पर भी उनको मिलने वाला दान दैत्यों के पुरोहितों से बहुत कम होता था। साथ ही अधिकांश दैत्य मनुष्यों को घृणा की दृष्टि से देखते थे।

"मानवराज ने अपने विद्वानों से सम्मति कर यह निश्चय किया कि उनको स्वतन्त्रता विष्णु और इन्द्र ने दे रखी थी किन्तु दैत्यराज बलि के काल में उनको वह स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं थी। अतः मानवराज अपने दिव्य शस्त्रास्त्र लेकर युद्ध में सम्मिलित हुआ था। गन्धर्व, यक्ष, नाग और किन्नर सब आदित्यों की ओर थे। उन सबको दैत्यराज बलि के राज्यच्युत होने के उपरान्त ही स्वतन्त्रता का लाभ हुआ था और दैत्यराज को राज्यच्युत किया था आदित्यों के छोटे भाई ने। अब तक यह विख्यात हो चुका था कि वामन इन्द्र का छोटा भाई ही था।

"इन सबके दैत्यों के विरुद्ध एकत्रित होने पर भी दैत्य संख्या और शक्ति में अधिक और युद्ध-विद्या में पारंगत थे। युद्ध में एक समय तो ऐसा लगने लगा था कि आदित्यों की पराजय होगी।

"इस समय विष्णु ने अपना सुदर्शन चक्र निकाल लिया। समद्र-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्थन के समय ही इस शस्त्र का निर्माण हुआ था और इस देवासुर संग्राम में ही इसका प्रथम प्रयोग हुआ।

"जब यह शस्त्र आया तो शत्रुओं को सन्तप्त करने वाला यह चक्र सूर्य और अग्नि के समान जाज्वल्यमान हो उठा और फिर शत्रुओं का विनाश करने लगा। दैत्यों ने इसकी अग्नि को बुझाने का यत्न किया, परन्तु न केवल उनके प्रयत्न विफल गये, वरंच वे स्वयं उसमें जलकर भस्म हो गये। पर्वतों-के-पर्वत इसके ताप से पानी की भाँति पिघल कर बहने लगे। पर्वतों की दशा कुछ ऐसी हो गयी जैसे कि गरम तवे पर मोम पिघलती चली जाती है।

"सुदर्शन चक्र के इस भयंकर कार्य को देख बचे-खुचे दैत्य भाग कर समुद्र में छलाँगें लगा अपने को शीतल रखने का यत्न करने लगे। जब युद्ध-भूमि को दैत्यों से रिक्त देखा तो विष्णु ने सुदर्शन चक्र को वापस बुला लिया और इसे शान्त कर कवच में छिपा लिया।"

"सब कल्पना की उड़ान है।" अमृत ने अपनी सम्मति बता दी।

"यह तो ठीक है। यह कल्पना की उड़ान है, परन्तु कल्पना कथा कहने वाले की नहीं, वरन् यह कल्पना है इसके निर्माण की।"

'परन्तु कल्पना भी तो किसी आधार पर ही की जा सकती है।"

"हाँ। आधार वह ज्ञान-विज्ञान था जिसका आविष्कार समुद्र-मंथन के द्वारा किया गया था। बिना कल्पना के वर्तमान विज्ञान की भी उन्नति नहीं हुई और न सम्भव थी। आधार-युक्त कल्पना तो होती ही है जिससे उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है।

"सुदर्शन चक्र के भय से बचे-खुचे दैत्य समुद्र में, अभिप्राय यह कि निम्न कोटि की जनता में छिप गये थे। अमृत-मंथन के पश्चात् आदित्यों के आचार-विचार और जीवन-पद्धति की ससार में महिमा बहुत बढ़ गयी।"

इस पर भृगुदत्त ने पूछ लिया, "बाबा! यदि यह मान भी लिया जाये कि समुद्र-मंथन का अभिप्राय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक उन्नति है तो संशय यह उत्पन्न होता है कि वह उन्नति गयी कहाँ? वह सुदर्शन चक्र और दिव्य अस्त्र कहाँ चले गए थे? वह विमान और मायावी शक्ति किधर लोप हो गयी थी। जब मुसलमान यहाँ आये थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो न देवता, न मनुष्य उनके यहाँ आने में बाधक हो सके थे और यहाँ घोर अत्याचार एवं अनाचार का राज्य स्थापित हो गया था।"

"बात यह है कि प्रकृति का एक अटल नियम है जिससे बचा नहीं जा सकता। वह है जो बनता है वह विनष्ट भी होता है। जो उत्क्रमण अर्थात् उन्नति करता है, वह उन्नति के शिखर पर पहुँच कर अवनति की ओर लुढ़कता भी है।

"समय पाकर ऐसा हुआ। सहस्रों वर्ष प्रयोग के बिना पड़े रहने से शस्त्रास्त्र विनष्ट हुए और उनका निर्माण भी भुला दिया गया।"

"परन्तु वर्तमान उन्नति तो मिटने वाली प्रतीत नहीं होती।"

"हाँ। इस उन्नति में एक विशेष यन्त्र का आविष्कार हुआ है। उस यन्त्र से ऐसा दिखायी देने लगा है कि इस काल की हुई उन्नति उस प्रकार नाश को प्राप्त नहीं होगी जिस प्रकार प्राचीन काल की उन्नति हुई है। यह यन्त्र है मुद्रणालय। इससे मानव ने अपने ज्ञान को स्थायी रूप देने का यत्न किया है।

"परन्तु इस अद्भुत आविष्कार के उपरान्त भी यह निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि वर्तमान ज्ञान भविष्य में सदा के लिये रहने में सक्षम हो गया है।

"अभी हमारे ज्ञान की पराकाष्ठा नहीं पहुँची कि इसको ताला लगाने का यत्न हो रहा है। जहाँ अणुबम्ब और प्रक्षेपणास्त्र का आविष्कार हुआ है वहाँ मानव-मन यह ही कल्पना करने लगा है कि किस प्रकार इस ज्ञान-विज्ञान को गुप्त एवं सीमित क्षेत्रों में बन्द करके रखा जा सकता है।

"अभी तो उच्च कोटि के शस्त्रास्त्रों के निर्माण को गुप्त रखने का यत्न किया जा रहा है, परन्तु ऐसा समय भी आ सकता है कि जब सामान्य शस्त्रास्त्र और अन्य प्रभुता लाने वाले पदार्थों के निर्माण के तथा प्रयोग के ज्ञान को छिपाकर रखना आरम्भ कर दिया जाये।"

"यह अब नहीं हो सकता?" अमृत का दावा था।

"हाँ। परन्तु तुम तो उस आसुरी प्रवृत्ति को नहीं समझ रहे हो जो कम्युनिस्ट देशों में विकास पा रही है। उन देशों से तो तुम किसी भी प्रकार की घटना की आशा कर सकते हो। मैं समझता हूँ कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलि का राज्य तो इस समय भी रूस में स्थापित हो चुका है और वह देश अपने मित्रों को अपना दास मानता है।"

: ६ :

महिमा चिन्तित थी कि उसके माता-पिता एवं गरिमा के साथ उसके पति का क्या वार्तालाप हुआ और उसका क्या परिणाम हुआ है? वह अपने पति से वहाँ हुई घटना का पूर्ण वृत्तान्त जानने के लिये उत्सुक थी। गरिमा, अमृत और उसकी माँ भगवती का मुख अति गम्भीर बना हुआ था।

अतः ज्यों ही बाबा ने कथा समाप्त की कि महिमा उठ गरिमा के समीप जा पहुँची। उसने पूछ लिया, "गरिमा! मुख का रंग फीका क्यों पड़ रहा है?"

गरिमा ने प्रश्न का उत्तर देने की अपेक्षा पूछ लिया, "दीदी! तुम जीजाजी के साथ क्यों नहीं आयीं?"

"इस कारण कि तुमने पहले दिन यहाँ आने के लिये जो बहाना बनाया था, यह छलना मात्र थी तुमने कहा था कि तुम्हा' ित्त मेरे साथ कुछ दिन रहने को करता है। इसी कारण मैं तुमको अपने साथ यहाँ लायी थी। माताजी ने पूछा भी था कि तुमको साथ क्यों ले जा रही हूँ तो मैंने तुम्हारे कथन के अनुसार ही कहा था कि बहिनें-बहिनें मिल सुख अनुभव करेंगी। परन्तु तुमने तो अपने जीजाजी से ही सहवास की इच्छा की थी।"

"हाँ, दीदी! भारी भूल हुई थी। कल बाबाजी को मैंने सब बात बतायी तो उन्होंने मुझे कुछ बातें समझायी थीं और मैं कल से अपनी करतूत पर पश्चात्ताप कर रही हूँ। इसका प्रायश्चित्त भी करना होगा, परन्तु बाबाजी ने कहा है कि जब तक मैं पश्चात्ताप से सन्तप्त नहीं हो जाती तब तक प्रायश्चित्त हो नहीं सकेगा।"

"ठीक है। पश्चात्ताप करो और फिर बाबा प्रायश्चित्त बतायेंगे और हम दोनों में भी कटुता मिट जायेगी।"

"मैंने जीजाजो को कह दिया है कि उन्होंने घोर पाप किया है और मुझसे भी पाप कराया है। इस कारण उन्हें तो मुझसे दुगुना पश्चात्ताप तदनन्तर प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"उन्होंने अनेकानेक योजनायें बतायी हैं, परन्तु मेरा तो यह कहना था कि अब उनसे मेरा सम्पर्क नहीं होगा।"

"परन्तु तुम्हारा उनके साथ आना-जाना भी तो भय से रिक्त नहीं।"

"यह मैं जानती हूँ, परन्तु उनके साथ रहने के भय से अधिक भय-युक्त स्थिति है पृथक् रहते हुए भी परस्पर एक-दूसरे का चिन्तन करते रहना। बाबा ने मुझे श्रेष्ठ और निकृष्ट में पहचान की एक कसौटी बतायी है। इसी के आधार पर जब मैं अपने जीवन का निरीक्षण करती हूँ तो वे मुझे वह बहुत घटिया प्रकार के व्यक्ति लगते हैं। ऐसा प्रतीत होने पर तो मेरी उनके प्रति विजिगुप्सा बढ़ती जाती है। यही करने मैं आयी हूँ और उसी के परिणामों पर अपने जीवन को चलाने का यत्न करना चाहती हूँ।"

"ठीक है। तुम्हारे प्रति मेरे मन की कटुता भी कम होगी। वह अभी भी कम हो रही है। मेरी कटुता का कारण यह नहीं था कि तुम उनको मुझसे छीन रही थी, वरंच तुम्हारे मेरे साथ वंचना के व्यवहार की प्रतिक्रिया थी। सरलता का व्यवहार रखोगी तो तुम मुझे सदा की भाँति प्रिय हो जाओगी।"

"बाबा कहते हैं कि मेरी वंचना भी मेरे उस दोष के कारण है जो मुझमें था। उनका कहना था कि यह दोष अमेरिकन उपन्यास पढ़ने तथा युरोपियन साहित्य के अनुशीलन से उत्पन्न हुआ है।"

जब दोनों बहनें बातें कर रही थीं तो भृगुदत्त और भगवती बाबा से सम्मति कर रहे थे। सुन्दरी सबको चाय के लिये आमन्त्रित कर रही थी। प्रज्ञा अपने पति से पूछ रही थी, "क्या समझे हैं बाबा के कहने से?"

"यही कि वर्तमान उन्नति भी वैसे ही विनष्ट हो सकती है जैसे कि प्राचीन ज्ञान-विज्ञान विलुप्त हो गया है।"

"अभी कुछ दिन यहाँ विश्राम करिये। बहुत लोक-कल्याण किया है आपने। उस लोक-कल्याण की यात्रा में मन पर जमी धूलि धुल जायेगी तो कदाचित् आपको अपने लोक-कल्याण की निस्सारता का ज्ञान हो जायेगा। पिछले चार दिन से मैं प्रातः एक घण्टा नित्य बाबा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की संगति प्राप्त करती हूँ। उस समय आपके लोक-कल्याण की चर्चा होती रहती है। पहले दिन तो मैं यह समझी थी कि बाबा स्वयं सनातन धर्मानुयायी होने से आर्यसमाज की निन्दा करते हैं; परन्तु धीरे-धीरे यह भ्रम दूर होता जा रहा है और कुछ ऐसा समझ में आ रहा है कि बाबा तो आधुनिक विचार वालों से भी आगे बढ़े हुए हैं। इस पर भी उनके मन की डोर पुराने ऋषियों के हाथ में प्रतीत होती है। उनका मन-रूपी पक्षी पूर्ण संसार की उड़ान करता हुआ सुख और आराम तो अपने प्राचीन में ही अनुभव करता है।

"बाबा अभी भी स्वाध्याय करते हैं और नवीनतम खोजों के विषय में बहुत जानकारी रखते हुए भी प्राचीन को उनसे श्रेष्ठ मानते हैं।"

"ऐसा प्रतीत होता है कि बाबा ने तुमको 'हिप्नोटाइज़' (सम्मोहित) कर रखा है?"

"वह तो मैं पहले ही थी। मैं इसी घर में और उनकी छाया के नीचे पली और बड़ी हुई हूँ। उनकी बातों का प्रभाव तो पहले भी मस्तिष्क पर था, परन्तु अमृतसर में ऐसी समस्यायें सम्मुख आयी थीं जिनका समाधान नहीं मिलता था। वह समस्यायें एक-एक कर प्राचीन विधि-विधानों से सुलझ रही प्रतीत होने लगी हैं।"

"एक बात समझ में आयी है कि अमृत के लिये हुए देवासुर संग्राम की सफाई बाबा ने बहुत कुशलता से दी है। आज स्वराज्य-प्राप्ति के सत्रह-अठारह वर्ष के इतिहास के अनुशीलन से मैं समझा हूँ कि स्वराज्य मिलने पर यदि भारत में भी वैसा ही देवासुर संग्राम हो जाता जैसा कि अमृत प्राप्ति के उपरान्त दैत्यों और आदित्यों में हुआ था तो हम अमृत पान करते होते।

"जो लोग अमृत निर्माण के समय दिनानुदिन की उपलब्धि का भोग कर रहे थे, उनका अमृत पान करने का अधिकार नहीं था। जिन लोगों ने उन दिनों अपने जीवन जेलों में, निर्धनता में लाठियाँ और गोलियाँ खाते हुए व्यतीत किया था, स्वराज्य उनका था; न कि सरकारी नौकरियाँ, पदवियाँ और भोग-विलास में जीवन व्यतीत करने वालों का था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं समझा करता था कि विष्णु एक अति दुष्ट व्यक्ति था जिसने मोहिनी का रूप धारण कर दैत्यों को मोह-जाल में फँसा आदित्यों को अमृत पिला दिया था। परन्तु बाबा के कथन से तो यह सिद्ध हुआ है कि यदि दैत्य मोहिनी के सौन्दर्य और उसके नृत्य के आकर्षण में अमृत भूल गये थे तो यह मोहिनी का दोष नहीं था, वरंच दैत्यों की वासनामय प्रवृत्ति का था। आदित्यों को वह मोहित नहीं कर सकी थी।

"यही बात अंग्रेज़ी काल में हिन्दुस्तान में हुई। अंग्रेज़ी सरकार मोहिनी का रूप धारण कर अपने सौन्दर्य और कला से पूर्ण हिन्दुस्तानी समाज को मोहित कर रही थी, परन्तु हिन्दू त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करते हुए स्वराज्य-प्राप्ति में संलग्न रहे और मुसलमान सरकारी धूप की ऊष्मा का रसास्वादन करते रहे।

"अतः बाबा के कथन से तो मैं यह समझा हूँ कि सन् १९४५ में गांधीजी का यह कहना कि जब मुसलमान पाकिस्तान माँगते हैं तो वह कैसे इन्कार कर सकते हैं, सर्वथा अयुक्ति-संगत और अव्यावहारिक था। विष्णु ने आदित्यों को यह कहा कि जब निर्माण-कार्य चल रहा था तब दैत्य दिनानुदिन के अर्जन को भोग-विलास में व्यय कर रहे थे। उस समय आदित्य भूखे रहकर, कठोर यन्त्रणा सहन कर भी कार्य में लगे रहे थे। अतः अमृत उनका है, दैत्यों का नहीं। इस पर मुझे ऐसा समझ आ रहा है कि गांधी बृहस्पति का अवतार थे। उस समय इस देश में विष्णु के समान सूझ-बूझ वाला कोई व्यक्ति नहीं था जो बृहस्पति के कथन का निराकरण करता। अतः अमृत बाँट दिया गया और अब दैत्य आदित्यों को पुनः कष्ट देने लगे हैं। पुनः बलि का राज्य स्थापित होने की सम्भावना बन गयी है। पुनः हिन्दुओं की लक्ष्मी और शचि के अपहरण का आयोजन होने लगा है।"

भृगुदत्त और भगवती की बातचीत विष्णुशरण से समाप्त हुई तो वे विना चाय लिये चल दिये। जाने से पूर्व भगवती ने महिमा से पूछा, "महिमा! आज मिलने नहीं आयी?"

"माँ! मैं अभी भी वहाँ न आने का विचार रखती हूँ। यह मेरे लिये एक संकटावस्था उत्पन्न हो रही है। उसकी रूप-रेखा बनने की प्रतीक्षा कर रही हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवती इसका अर्थ समझने का यत्न करती हुई चली गयी। जब सब लोग खाने के कमरे में चाय के लिये आए तो सबने देखा कि अमृत वहाँ नहीं है। बाबा ने पूछा, "महिमा ! अमृत कहाँ है ?"

"बाबा ! मैं उनकी 'कस्टोडियन' (परिरक्षक) नहीं हूँ। न ही उन्होंने मुझे कभी इस रूप में समझा है।"

सबने चाय पी। चाय पीते हुए सब गम्भीर भाव में थे। केवल बाबा ही सन्तुष्ट और प्रसन्न प्रतीत होते थे। चाय के उपरान्त महिमा अपने कमरे में गयी तो उसने देखा कि उसके पति का सूटकेस वहाँ नहीं है। वह इसका अभिप्राय समझने का यत्न करती रही। उसकी समझ में नहीं आया कि उसके पति ने उसका त्याग कर दिया है। इस विचार के मन में आते ही वह सास के कमरे में गयी और उसने उनके पुत्र के सूटकेस के लापता होने की बात बतायी और अपना अनुमान भी बता दिया।

"कुछ कह कर गया है ?"

"नहीं।"

"कुछ झगड़ा हुआ था ?"

"हाँ। रात उन्होंने मेरी संगति की याचना की थी, परन्तु मैंने कहा था कि गरिमा की संगति का पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त कर लें तो मेरी उपलब्धि हो सकती है। इसके उपरान्त कोई विशेष बात नहीं हुई। हाँ, आज वह मुझे कह रहे थे कि मैं अपने मायके में जा गरिमा के विचार जानकर उन्हें बताऊँ। मैंने जाने से इन्कार किया था। मैं जासूसी का कार्य करना नहीं चाहती थी।"

सुन्दरी महिमा को लेकर बाबा के कमरे में चली गयी और जब महिमा ने अमृत के विषय में बताया तो बाबा ने कह दिया, "मैं समझता हूँ कि इस पूर्ण घटना में तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं। परन्तु तुम्हें अब स्वयं त्याग और तपस्या के लिये तैयार हो जाना चाहिये और अपने अच्छे दिनों के लौटने की प्रतीक्षा करनी चाहिये।

"अमृत आत्म-हत्या करने वाले प्राणियों में नहीं। जो दूसरों की हत्या करते हैं वह आत्महत्या नहीं करते। इस कारण मेरा यह विचार है कि वह चण्डीगढ़ लौट गया है और वहाँ जाकर तुम्हें बुलायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब तुम विचार कर लेना कि तुमको जाना है अथवा नहीं ?"

"बाबा ! तब आपसे सम्मति कर लूँगी ।"

यद्यपि अमृत के नाराज़ होकर चले जाने से घर में अस्वाभाविक वातावरण उत्पन्न हो गया था, परन्तु सब अपने-अपने कार्य में लीन थे । प्रज्ञा और वेदस्वरूप अगले दिन प्रात: के अल्पाहार से पूर्व बाबा के कमरे में जा पहुँचे । पिछले चार दिन से प्रज्ञा इसी समय बाबा की संगति में डेढ़-दो घण्टे व्यतीत किया करती थी ।

जिस समय विष्णुशरण अपने प्रात: के पूजा-पाठ से अवकाश पाता तब प्रज्ञा आ जाया करती थी और अनेकानेक विषयों पर वार्तालाप एवं परामर्श किया करती थी । आज उसके साथ वेदस्वरूप भी आया । उसके आने पर विष्णुशरण ने मुस्कराते हुए पूछा, "व्यवसाय में तो बहुत हानि हो रही होगी ?"

"क्यों ? ऐसा क्यों होगा ?"

"तुम यहाँ ठहरे हुए हो न ?"

"बाबा ! वहाँ न जाने से व्यवसाय में तो कुछ हानि नहीं होगी । होने की सम्भावना भी नहीं । मैं अपने व्यवसाय को छोड़ चुका हूँ । अब तो एकत्रित धन के ब्याज एवं कुछ कारखानों में हिस्सों के द्वारा निर्वाह हो रहा है । मैं आनन्दपुर चीनी मिल के पचास प्रतिशत का भागीदार था । सरकार ने नियम कर दिया है कि मैं इतने अधिक हिस्से नहीं रख सकता । अत: मैंने उनको प्रज्ञा और इसके बच्चों में बाँट दिया है । सरकार ने मैनेजिंग एजेंसियों को न रखने का नियम किया है तो मैं अमृतसर 'मैथिलेटिड स्पिरिट' का मैनेजिंग डायरेक्टर बन गया हूँ ।

"इस प्रकार सरकार के नियन्त्रणों में छिद्र ढूँढने में समय व्यतीत हो रहा है । इस पर भी मुझे इनकी चिन्ता नहीं है । चिन्ता है वहाँ स्कूल और कालेजों की, जिसकी प्रबन्ध समिति का मैं प्रधान हूँ । सरकार उनके लिये सहायता देती है और हमें उस सहायता का सरकारी नियमों के अनुसार प्रयोग का ब्यौरा देना होता है । इसी की चिन्ता लगी रहती है । सरकारी ऑडिटर हिसाब-किताब देखते हैं और हिसाब में अनेक भूलें निकालते हैं । फिर हम उनकी सफाई देते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वह सफाई अधिकारियों को सन्तोष नहीं दे सकती तो हमें उनका मुख मीठा करना पड़ता है।

"इस प्रकार के काम व्यवसाय से अधिक चिन्ता का कारण बने रहते हैं।"

"तो आय-व्यय निरीक्षण करने वालों का मुख मीठा करना पड़ता है ?"

"हाँ, बाबा ! यदि न करें तो वे ऐसी-ऐसी बेतुकी आपत्तियाँ उठाते हैं जिनका उत्तर बन सकना असम्भव हो जाता है। भूलें तो हम बहुत कम करते हैं। कार्य में हम बहुत सावधानी रखते हैं। सरकारी नियमोपनियमों को हमने कण्ठस्थ कर रखा है; फिर भी मनुष्य से छोटी-मोटी भूलें होती रहती हैं और वे बाल की खाल उतारते हैं। इस कारण ऑडिट की मशीन को सरलता से चलने में सहायता के लिये उसमें तेल देना पड़ता है।"

"आप यह सार्वजनिक कार्य कब से कर रहे हैं ?"

"लगभग तीस वर्ष हो गये हैं। मैं पहले आर्य युवक समाज का मन्त्री था। तब मैं लाहौर कालेज में पढ़ता था। तदनन्तर आर्य-समाज अमृतसर लौहगढ़ का मन्त्री बना। तदुपरान्त प्रधान बना। अब पन्द्रह वर्ष से डी० ए० वी० कालेज कमेटी का प्रधान हूँ। कालेज के साथ तीन स्कूल सम्बद्ध हैं। इनका प्रबन्ध करना पड़ता है। अस्सी प्रतिशत सहायता सरकार देती है। कभी इमारत बनानी पड़े तो लागत का पचहत्तर प्रतिशत सरकार देती है।"

"अच्छा, यह बताओ कि जब तुम कालेज में पढ़ते थे तो विद्यार्थी और पढ़े-लिखे लोग चरित्र, स्वास्थ्य, त्याग, तपस्या के जीवन और परोपकार में तब अधिक रस लेते थे अथवा आज लेते हैं ?"

वेदस्वरूप हँस पड़ा और बोला, "बाबा ! एक आँधी आ रही है। इसका स्रोत अमेरिका और फ्रांस है। वह आँधी समस्त भूमण्डल में छा रही है और यह भारत के छात्र वर्ग को भी प्रभावित कर रही है।"

"भला तेरह हजार मील दूर अमेरिका की आँधी यहाँ कैसे आ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी ?"

"बाबा ! यह तो पृथ्वी के गुह्यतम गुफाओं और कन्दराओं में भी पहुँच रही है।"

"पर यहाँ तो कम है।"

"इसका कारण है। यहाँ के लोग बाहरी दुनियाँ से कम सम्पर्क रखते हैं। यहाँ अभी भी ऐसे बालक और युवक हैं जो स्कूलों, कालेजों में शिक्षा ग्रहण नहीं कर रहे। यहाँ समाचार-पत्र कम आते हैं और लोग हिमाचल प्रदेश से बाहर कम जाते हैं।"

"अभिप्राय यह कि बाहर की प्लेग यहाँ अभी कम फैली है ?"

"परन्तु यह देश पिछड़ा हुआ भी तो है।"

"पिछड़े हुए से क्या अभिप्राय है ?"

"यह निर्धन देश है। यहाँ ऐसे स्थान हैं जहाँ लोगों ने अभी रेल, तार और बिजली भी नहीं देखी। देहातों में ऐसे लोग भी हैं जिनके लिये काला अक्षर भैंस बराबर है।"

"ये पिछड़े होने के लक्षण हैं ?"

"ऐसा दुनियाँ-भर में माना जाता है।"

"नहीं। इसका अर्थ यह होगा कि यहाँ के लोग तुम्हारे अमृतसर की अपेक्षा झूठे, चोर, पाखण्डी, क्रोधी और दुराचारी कम हैं। पिछड़ा होना एक पृथक् बात है और निर्धन होना पृथक् है। पिछड़े का अर्थ तो मैं यह समझा हूँ कि झूठ बोलना, चोरी करना, सामाजिक नियमों को भंग करना और निजी भोग-विलास के लिये क्रोध करना, विद्या का तिरस्कार करना और बुद्धि के प्रयोग को अवांछनीय मानना है। ये पिछड़े होने के लक्षण हैं। बिजली, रेल, तार इत्यादि से पिछड़ा और उन्नत नहीं हो सकता। इनके उन्नत होने में कुछ अन्य कारण हैं। वे नगरों में अधिक हैं और देहातों में कम। इसी कारण मुझे नगरों में देहातों से अधिक पिछड़े लोग हुए दिखायी देते हैं।

"देखो वेद! यह अन्तर बिजली, रेल, तार के देखने अथवा न देखने से सम्बद्ध नहीं है। इसका सम्बन्ध है स्कूल, कालेजों की उस शिक्षा-प्रणाली से जिन स्कूलों, कालेजों को चलाने के लिये तुम दिन-रात एक कर रहे हो और जिनको चलाने के लिये आपको 'ऑडिट' विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अधिकारियों का मुख मीठा करना पड़ता है।"

"तो क्या किया जाये ? स्कूल, कालेज तो रहेंगे। यह इस कारण कि सरकारी और गैर-सरकारी नौकरी के लिये वर्तमान शिक्षा लेनी आवश्यक हो गयी है। हम नहीं देंगे तो वे किसी अन्य स्कूल, कालेज में भरती होंगे और उनसे तो अधिक ही हम धर्म, कर्म, वेद और शास्त्र की शिक्षा देते हैं। कुछ तो हम करते ही हैं।"

"हाँ, यह तो मानना ही पड़ेगा कि आपने स्कूलों में धर्म-शिक्षा का एक घण्टा रखा हुआ है। मैं पूछता हूँ कि क्या आपके कालेज में संस्कृत अथवा हिन्दी ही एक अनिवार्य विषय है ? क्या आपके कालेज में शास्त्र की शिक्षा ग्रहण करनी अनिवार्य है ? क्या आपके कालेज में कोई ऐसा विभाग भी है जहाँ विज्ञान के विद्यार्थियों को संस्कृत पढ़नी आवश्यक हो ? ये हैं धर्म के, संस्कृति के और नैतिकता के साधन।"

"यह सब कुछ तो हम कर नहीं सकते। कालेज को विश्व-विद्यालय से सम्बन्ध रखने के लिये हमें वही कुछ और उतनी मात्रा में ही पढ़ाना पड़ेगा जितना कि वहाँ से आदेश आता है और हम साम्प्रदायिक शिक्षा देते हैं तो सरकारी अनुदान नहीं मिल सकता।"

"तो सरकारी अनुदान लेना अधिक आवश्यक है और विद्यार्थियों के नैतिक उत्थान की उतनी आवश्यकता नहीं है ?"

वेदस्वरूप समझने लगा था कि वह तो जी -भर पानी मथता रहा है। पानी में नवनीत है, नहीं, इसलिए मथने से वह निकल भी नहीं सकता। इस शिक्षा-प्रणाली में नैतिकता लेश-मात्र भी नहीं। इस कारण इसको चलाने से मक्खन नहीं निकल रहा।"

"तो बाबा !" उसने पूछ लिया, "यह नैतिकता जिसे आप धर्म कहते हैं, कैसे स्थिर रखा जा सकता है ?"

"यह बात एक वाक्य में नहीं बतायी जा सकती। इसके लिये तो पूर्ण शिक्षा-पद्धति पर विवेचना करने की आवश्यकता होगी।"

: ७ :

इस दिन भृगुदत्त व भगवती के साथ गरिमा और शम्भुदत्त भी आये। उनको पता चल गया था कि अमृतलाल पत्नी से रूठकर घर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से चला गया है। यह सूचना शम्भुदत्त ही लाया था। उसने पिछली सायंकाल अमृत को सूटकेस हाथ से लटकाये हुए बस स्टैण्ड पर खड़े देखा था। उसने पूछा भी था, "जीजाजी ! कहाँ जा रहे हैं ?"

अमृत का उत्तर था, "जहन्नुम में।"

"वहाँ क्या है जीजाजी ?"

"भाई साहब ! वहाँ क्या है, यह बताने की आवश्यकता नहीं। हाँ, इतना बता देता हूँ कि वहाँ आपकी बहन नहीं होगी ?"

इस प्रकार शम्भुदत्त समझ गया कि अमृत अपनी पत्नी से लड़कर जा रहा है और वह अपनी बुद्धि से इसमें कारण भी विचार कर रहा था। घर पर माता-पिता को अमृत की बात बताने पर उसे गरिमा से अमृत के दुराचार का पता चल गया।

शम्भुदत्त को आज काम पर नहीं जाना था। अतः वह भी अपनी बहन महिमा से मिलने और वस्तुस्थिति जानने के लोभ में चला आया। वह बाबा की कथा एक दिन सुन गया था और उसको उसमें रस नहीं आया था। उस दिन के उपरान्त वह अपने पिता के साथ बाबा की कथा सुनने नहीं आया था। आज भी वह बहन की बात जानने की इच्छा लेकर ही आया था। कथा में उसे रुचि नहीं थी।

जब भृगुदत्त इत्यादि आये तो सुरेश्वर का पूर्ण परिवार पहले ही बाबा के कमरे में बैठा हुआ था और बाबा कथा आरम्भ करने ही वाले थे। अतः शम्भुदत्त को पूर्ण कथा में बैठना पड़ा।

विष्णुशरण बता रहा था—

"जब अमृत की प्राप्ति का युद्ध समाप्त हुआ तो दैत्यों की हानि इतनी हुई थी कि वे पुनः सिर नहीं उठा सके। श्री और यश दोनों को खोकर वे दास-वृत्ति में लीन हो गये।

"कुछ दैत्यों ने उन्नति की और आदित्यों से विवाहादि सम्बन्ध बना पुनः स्वतन्त्र नागरिक की भाँति रहने लगे थे। परन्तु अधिकांश तो दास वृत्ति करते हुए अधिकाधिक अधःपतन को पहुँचते गये।

"इनमें से कुछ जब बहुत आतुर हो गये तो ब्रह्मा के पास गये और उससे याचना करने लगे, 'भगवन् ! हम भी तो दैत्य हैं, परन्तु हमसे पशुओं का-सा व्यवहार किया जाता है। हमें पशु मान हमसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोझा ढोने का कार्य लिया जाता है ।'

'और तुम कौन हो ?'

'मैं दैत्यराज बलि का लड़का हूँ । मेरे पुत्र आदित्यों से युद्ध में मारे गये थे और मैं निराश्रय एक आदित्य के अधीन चाकरी करता हूँ ।'

'क्या कार्य करते हो ?'

'मैं लेखाकार हूँ ।'

'क्या मिलता है कार्य के प्रतिदान में ?'

'नकद कुछ नहीं मिलता । अन्न, वस्त्र और निवास-गृह मिला हुआ है । इससे मैं अति कष्ट में हूँ ।'

'और ये अन्य लोग कौन हैं ?' ब्रह्मा ने उसके साथियों की ओर संकेत कर पूछ लिया ।

'ये भी मेरी ही प्रकार सेवा-कार्य करते हैं । इनमें से कुछ अन्न पैदा करने का कार्य करते हैं और कुछ व्यवसायी आदित्यों के व्यवसाय में सहायक हैं ।'

'तुम क्या चाहते हो ?' ब्रह्मा का प्रश्न था ।

'हम आदित्यों के समान स्थिति चाहते हैं । हमारे साधन आदित्यों ने युद्ध के उपरान्त छीन लिये थे और वह हम जुटा नहीं सके ।'

'तुम्हारा अभिप्राय यह है कि मैं तुमको फोकट में साधन दिलवा दूँ ?'

'भगवन् ! फोकट की बात नहीं कर रहे । हमारा छीना हुआ धन-सम्पद् मकान और अन्न-निर्माण के यन्त्र वापस दिलवा दीजिये ।'

'क्या नाम है तुम्हारा ?' ब्रह्मा ने दैत्यों के प्रवक्ता से पूछा ।

'त्वष्टा ।' प्रवक्ता ने नाम बता दिया ।

'देखो त्वष्टा ! तुम्हारा सब-कुछ देवताओं ने छीन लिया है, मैं जानता हूँ । और यह भी जानता हूँ कि तुमने अपने पिता बलि के राज्य में आदित्यों का सब-कुछ छीन लिया था । आदित्य कहते हैं कि यह सब कुछ उनका ही था जो उन्होंने वापस ले लिया है ।

'देखो ! मैं यह छीना-झपटी पसन्द नहीं करता । मैं एक बात में विश्वास रखता हूँ और वह है मितव्ययता । अपनी उपलब्धियों के

Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar Library 167882

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीच में रहना। तुम अपनी आय के भीतर जीवन व्यतीत करते होते तो दस वर्ष में ही तुम पूँजी एकत्रित कर लिये होते और उस पूँजी से कहीं खेत ले धन-धान्य उत्पन्न करते होते अथवा व्यवसाय के लिये सम्पन्न हो गये होते।

'इसके अतिरिक्त भूमण्डल में बहुत भूमि परती पड़ी हुई है। तुम नयी भूमि तोड़ उसे उपजाऊ बना लिये होते।'

'महाराज! समीप तो कहीं एक अंगुष्ट-भर भी भूमि रिक्त नहीं है।'

'अच्छा यह बताओ! यदि मैं तुम्हें भूमि बता दूँ तो तुम वहाँ जाकर निर्वाह कर सकोगे?'

'हाँ, महाराज! बताइये?'

'देखो, तुम दक्षिण में चले जाओ। सागर में बहुत से द्वीप हैं। उनमें अभी किसी का वास नहीं। वहाँ भूमि अभी अनिकृष्ट पड़ी है। तुम सब लोग वहाँ चले जाओ। वे द्वीप तुम्हारे हुए और मैं आश्वासन देता हूँ कि वहाँ आदित्य तुमको कष्ट नहीं देंगे।

'देखो त्वष्टा! परिश्रम ही धन है और व्यय करने से बचा धन सम्पत्ति कहलाता है। उस सम्पत्ति को जब साधन रूप में प्रयोग किया जाये तो वह पूँजी बन जाता है। तुम भी वह रख सकते हो।

'यहाँ भी कुछ दैत्यों ने इस प्रक्रिया से पूँजी निर्माण की है और आदित्यों ने उनसे विवाह-सम्बन्ध भी बनाये हैं।'

'तो भगवन्! यह प्रमाण-पत्र दे दीजिये कि हम उन द्वीपों में स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकेंगे। उनमें स्वतन्त्रता से कार्य कर सकेंगे और हमारी जीवन-चर्या में कोई विघ्न-बाधा नहीं बनेगा।'

'वह तो यहाँ भी है। परन्तु तुमने अपने में वह योग्यता उत्पन्न नहीं की जिससे कि तुम सदाचारी, मितव्ययी और बुद्धिमान आदित्यों के मुकाबले में उन्नति कर सको।

'तुमको इन्द्र से प्रमाण-पत्र मिल जायेगा और वहाँ स्वतन्त्रता से जीवन चला सकोगे।'

"जब वह प्रमाण-पत्र दैत्यों को मिला तो ब्रह्मा ने उनसे कहा, 'यदि तुम चाहते हो कि वहाँ तुम्हारी स्वतन्त्रता बनी रहे तो उन द्वीपों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की रक्षा और वहाँ अपने तथा वहाँ के जीव-जन्तुओं के पालन का प्रबन्ध तुमको करना होगा।

'यह नहीं हो सकता कि तुम वहाँ रहो और वहाँ की स्वतन्त्रता एवं वहाँ के धन-धान्य का भोग करो, परन्तु तुम्हारी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये किसी अन्य राज्य अथवा व्यक्ति को प्रयत्न करना पड़े।'

"वे लोग इन्द्र से वहाँ की भूमि का स्वतन्त्रता से भोग करने का प्रमाण-पत्र ले दक्षिण को चल पड़े। प्रथम पारी में ही जो देवलोक में अपना निर्वाह करने में कठिनाई अनुभव करते थे, ऐसे सहस्रों निर्धन और योग्य दैत्य चल पड़े।

"इन लोगों के दक्षिण में स्थापित हो जाने का समाचार पा अन्य भी कई लोग देवलोक छोड़ दक्षिण के द्वीपों में जा बसे।

"इस प्रकार एक नये समुदाय और राज्य की नींव पड़ी। रक्षों ने दक्षिण के द्वीपों की रक्षा का कार्य-भार अपने ऊपर लिया और यज्ञों ने कृषि इत्यादि से वहाँ के रहने वालों के जीवन चलाने का प्रबन्ध किया।

"रक्ष ही समय पाकर राक्षस हो गये। ये ही रावणादि के पूर्वज बने।

"इसी दैत्य-वंश के अंश राक्षस वंश में दो महाबली भाई उत्पन्न हुए। एक का नाम था हेति और दूसरे का नाम प्रहेति।

"राक्षस अभी-अभी सौ-दो सौ वर्ष पूर्व ही देवलोक से उत्प्रवास कर दक्षिण में आये थे और अभी भी वहाँ के आचार-विचार से प्रभावित थे। वे यद्यपि वेदों के विषय में ज्ञान नहीं रखते थे, परन्तु वैदिक संस्कारों से सदाचार और सद्नियमों की परम्परा रखते थे।

"इन संस्कारों का ही परिणाम था कि इसी समुदाय में हेति और प्रहेति विख्यात हो गये। हेति बड़ा भाई था और प्रहेति छोटा। हेति महान् योद्धा था और प्रबन्ध करने में बहुत कुशल था। वह राज्य भोगने लगा। उसने पहली बार राक्षस समुदाय में व्यवस्था स्थापित की और राज्य-पद्धति चलायी। प्रहेति की रुचि राज्य-कार्य में नहीं थी। उसके बड़े भाई ने उसे कहा भी, 'प्रहेति! अब तुम सज्ञान हो गये हो। तुम विवाह कर लो तो मैं तुम्हें किसी एक द्वीप का राजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बना स्थापित कर दूँगा। इससे तुम स्वतन्त्रतापूर्वक सुख भोग कर सकोगे।'

'भैया ! इससे क्या होगा ?'

'तुम्हारे सन्तान होगी और तुम्हारा वंश चलेगा।'

'मैं जब देवलोक में गया था तो वहाँ एक महर्षि अगस्त्य से भेंट हुई थी। उन्होंने मुझे बताया था कि यह जो मुझमें बोलता है, सुनता है, देखता है, सूँघता है अथवा स्पर्श करता है, यह मेरा शरीर नहीं। इसके भीतर एक पृथक् पदार्थ है। जब मनुष्य मरता है तो वह पदार्थ इसको छोड़ जाता है। उसको समझना चाहिये और उसी के कल्याण का विचार करना चाहिये।

'महर्षि ने बताया था कि वह चेतनस्वरूप है और अनादि है। अजर है अमर है और अति सूक्ष्म है। उसको समझ लिया जाये तो उसके कल्याण का प्रबन्ध हो सकता है।

'महर्षि ने मुझे उसके साक्षात् करने का भी एक उपाय बताया है। मैंने उस उपाय का अभ्यास किया है और मैं समझता हूँ कि उसका प्रयत्न मैं कर पाऊँगा।

'ज्यों-ज्यों उसका अनुभव होने लगा है, मैं अपने में एक विशेष प्रकार का आनन्द अनुभव करने लगा हूँ।

'अतः भैया ! मैं तो उसकी खोज में लगा हूँ। मुझे विवाह में अथवा राज्य-पाट में रस नहीं आता।'

"हेति व उसकी पत्नी ने तथा अन्य सगे-सम्बन्धियों ने भी उसे समझाया, परन्तु वह राज्यप्रासाद छोड़ वन को चला गया और हेति दक्षिण सागर के द्वीपों पर निष्कण्टक राज्य करने लगा।

"दैत्य-वंशोत्पन्न और रक्ष की उपाधि प्राप्त हेति राज्य को धर्म-राज्य बनाने में बहुत ख्याति लाभ कर रहा था। उन दिनों दैत्य वैसे नहीं रहे थे जैसे बलि के तथा प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु के काल में थे। यह तथ्य है कि यथा राजा तथा प्रजा।"

भृगुदत्त ने पूछ लिया, "बाबा ! जब राक्षसों की ऐसी परम्परायें थीं तो फिर उनमें रावण क्यों उत्पन्न हुआ ? कुछ लोग उसे भी धर्मात्मा कहते हैं। उसकी लंका में घी, दूध की नदियाँ बहती थीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी किंवदन्ति है।"

"हाँ, यह तो था।" बाबा का कहना था, "रावण के काल में लंका अति उन्नत और समृद्ध राज्य था। वहाँ इतना सोना था कि पूर्ण लंका नगरी ही स्वर्णमयी हो रही थी।

"वैसे भी नगरी में बलिष्ट, सुन्दर और ज्ञानवान लोग भी रहते थे और वे नगरी को उत्तरोत्तर सुखप्रद और समृद्ध बनाते चले जा रहे थे।

"राम-रावण युद्ध के उपरान्त एक बार तो लक्ष्मण के मन में भी लोभ आ गया था कि लंका जैसी सुन्दर नगरी को जीतने के उपरान्त इसके राज्य का भोग क्यों न किया जाये? राम ने ही उसे इस बात से मना किया था। राम का कहना था, 'जननी और जन्म-भूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ होती है, अतः हमें लौट चलना चाहिये।'

"इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि लंका में कितनी सुख-सामग्री एकत्रित की हुई होगी और वह कितनी सुन्दर बनी होगी?

"परन्तु पण्डितजी! किसी देश, नगर, गाँव तथा परिवार की श्रेष्ठता उसके धन-दौलत से नहीं आँकी जा सकती। यह उस देश, नगर अथवा गाँव के निवासियों तथा परिवार के घटकों के आचार-विचार और दूसरों से व्यवहार से ही मानी जा सकती है। और इस विचार से ही लंका को नरक और अयोध्या को स्वर्ग मान राम वापस अयोध्या को चल पड़ा था।"

"परन्तु बाबा!" अब भम्भुदत्त ने बात में रुचि लेते हुए कहा, "आज अमेरिका में धन-दौलत इतनी मात्रा में है कि वह चाहे तो पूर्ण भूमण्डल को मोल ले सकता है और उसे ही भूमण्डल के सब देशों से श्रेष्ठ माना जाता है। अपने देश के लोग भी अमेरिका जाने के लिये लालायित रहते हैं।"

"हाँ। परन्तु इसमें कारण यह नहीं कि अमेरिका किसी प्रकार से श्रेष्ठ देश है। इसमें कारण यह है कि हम भारतवासियों में दृष्टि-दोष आ गया है। हम श्रेष्ठ और निकृष्ट में पहचान भूल गये हैं। हमारे मन में ही श्रेष्ठता के लक्षण विकृत हो गये हैं।

"यह धन-वैभव न तो किसी मनुष्य को सुख और आनन्द दे सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और न ही किसी जाति की वास्तविक प्रभुता धन-सम्पद् से लगायी जाती है। बड़ी-बड़ी धनी और समृद्ध जातियाँ संसार से मिट गयी हैं और उनका नाम लेने वाला कोई नहीं रहा। अन्यतम योद्धाओं और विजेताओं को भी लोग भूल जाते हैं, परन्तु भारत के झोंपड़ों में रहने वालों का नाम आज भी मानव-समाज में गूँजता है।

"कणाद के विषय में सुना है शम्भु?"

"नहीं बावा।"

"वह व्यक्ति खेतों में बिखरे अन्न के दाने उठा-उठाकर जीवनयापन करता था, परन्तु उसकी सृष्टि-रचना की खोज आज भी वैज्ञानिकों के लिये पथ-प्रदर्शन करने वाली बनी हुई है।"

"क्या विशेष बात उसने पता की थी जो आज स्वतन्त्र रूप से वैज्ञानिक पता नहीं कर सके?"

"जानते हो यह ऐटम-बम्ब क्या है?"

"हाँ, बावा! पढ़ा है। संसार के सब पदार्थ लगभग एक सौ तत्त्वों से बने हैं और ये तत्त्व इतने ही प्रकार के ऐटमों का समूह ही होते हैं।

"कुछ काल पूर्व ये ऐटम प्रकृति का अविभक्त कण माना जाता था। इनको परमाणु कहा जाता था, परन्तु इस शताब्दी के आरम्भ में यह पता किया गया है कि ऐटम भी विभक्त हो सकते हैं और इन सौ प्रकार के ऐटमों को विभक्त करने पर केवल तीन प्रकार के कण मिलते हैं। ये सब ऐटमों के कण एक जैसे ही होते हैं।

"इन कणों में एक प्रकार के कण प्रोटोन कहलाते हैं। यह समझा जाने लगा है कि वे शक्ति का पुंज ही हैं। वे जब क्षरित होते हैं तो प्रकाश और ऊष्मा ही प्रकट होते हैं, जो कालान्तर में विनष्ट हो जाते हैं।"

"कणाद मुनि ने यह ज्ञात किया था कि वे तीन प्रकार के कण एक रूप प्रकृति के कणों से कैसे बनते हैं और वह शक्ति जिसे वर्तमान वैज्ञानिक प्रोटोन के क्षरित होने पर देखते हैं, वह ईश्वरीय तेज है जो प्रकृति के परमाणुओं में जाकर सृष्टि की रचना का आरम्भ करता है।

"इसका अभिप्राय यह है कि अभी बहुत कुछ इनको ज्ञात नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो खेतों में से एक-एक दाना अन्न का उठाकर जीवनयापन करने वाले को ज्ञात था।

"देखो शम्भु ! वर्तमान वैज्ञानिकों के उत्पन्न होने से सहस्रों वर्ष पूर्व यह मुनि लिख गया है, 'सद् अकारणवत् नित्यम्। तस्य कार्य-लिङ्गम्।'

"इसका अर्थ है कि उपस्थित वस्तु का कारण (मूल) होना चाहिये। शून्य से कुछ भी उत्पन्न नहीं हो सकता। वह मूल पदार्थ नित्य अर्थात् सदा रहने वाला होना चाहिये। यह नित्य पदार्थ प्रकृति है और इसका प्रमाण यह कार्य-जगत् अर्थात् सब इन्द्रियों से जाना जाने वाला पदार्थ है।

"अभी तक वर्तमान युगीन वैज्ञानिक यही पता कर पाये हैं कि परमाणु क्षरित होकर शून्य हो जाता है। यह नहीं है। कदाचित् अभी कई शताब्दियाँ लगेंगी जब ये जान पायेंगे कि मूल पदार्थ क्या है, कैसा है और किस प्रकार इस दृश्य-जगत् में परिवर्तन होता है।"

शम्भु विज्ञान का विद्यार्थी नहीं था, अतः वह वार्त्तालाप को आगे नहीं चला सका।

: ८ :

शम्भुदत्त के आने का प्रयोजन बाबा की कथा सुनना नहीं था। इस पर भी उसको यह बात जानकर आश्चर्य हुआ था कि रावण के पूर्वज भी योग, ध्यान, तपस्या में तथा घर-बार त्याग कर वनों में जाने पर विश्वास रखते थे। संसार को त्याग कर सत्य की खोज में जाने की लालसा देवताओं के अतिरिक्त किसी अन्य में भी थी। यह बात उसके लिये सर्वथा नवीन थी।

अतः जब चाय पी जा चुकी तो वह बहन महिमा के कमरे में जा पता करने लगा। उसने पूछा, "बहन ! जीजाजी चले गये हैं ?"

"हाँ, भैया।"

"कहाँ और क्यों ?"

"बताकर नहीं गये। ऐसा प्रतीत होता था कि मुझसे नाराज़ हैं। मैं इस नाराज़ होने में कारण नहीं समझी।"

"माताजी कह रही हैं कि उनका गरिमा से व्यवहार ठीक नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था और जब जीजाजी को इससे मना किया गया तो वह नाराज़ हो गये हैं।"

"परन्तु भैया ! इससे मेरा सम्बन्ध नहीं था। मुझसे भाग जाने में यह कारण नहीं होना चाहिये था।"

"मैं कल चण्डीगढ़ जा रहा हूँ। कहो तो उनसे मिलकर पता करूँ ?"

"हाँ, कर सकते हो और यदि मेरे कुछ करने से हो सकता है तो बताना। वहाँ से कब तक लौटने का विचार है ?"

"वैसे तो एक सप्ताह का कार्यक्रम है, परन्तु यदि जीजाजी के कारण शीघ्र ही आने की आवश्यकता पड़ी तो आ जाऊँगा।"

"कम-से-कम लिखना कि क्या पता चला है।"

गरिमा भी महिमा से मिली और आज वह महिमा के साथ ही रह गयी। जब उसने बहन को वहीं रह जाने की बात कही तो महिमा की हँसी निकल गयी। गरिमा ने पूछ लिया, "दीदी ! हँसी क्यों हो ?"

"मेरे ससुराल वाले समझेंगे कि तुमने ही जीजाजी को यहाँ से भगाया है और अब तुम उनके जाने से प्रसन्न हो पुन: यहाँ रहने चली आयी हो।"

"और दीदी ! तुम भी यही समझती हो क्या ?"

"नहीं ! मैं तो यह जानती हूँ कि यदि मैं अपना व्यवहार अनुकूल रखती तो वह न जाते।"

"और तुम्हें अपने व्यवहार पर शोक है ?"

"नहीं ! मैंने तो उनके हित में ही अपना व्यवहार बनाया था, परन्तु वह गलत समझे प्रतीत होते हैं।"

"दीदी ! मैं बताती हूँ।" गरिमा ने गम्भीर भाव बनाकर कहा, "वास्तव में वह यहाँ से चले जाने का निश्चय तो कल मुझसे वार्तालाप के उपरान्त ही कर चुके थे। मैंने उनको डाँटा था और उस डाँट-फटकार के उपरान्त तो उनके लिये यहाँ रहना असम्भव ही था। इस पर भी मैं समझती थी कि वह दीदी को साथ लेकर गये होंगे।"

"भला ऐसा समझने का क्या कारण था ?"

"दो रात वह मेरे पास रहे और दोनों रात ही तुम्हारी प्रशंसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते रहे। यही एक बात थी जिससे कि मैं दूसरे दिन यहाँ से भागी थी।"

महिमा गरिमा के रहस्योद्‌घाटन में कारण नहीं समझ सकी थी। वैसे तो वह यह जानती थी कि चण्डीगढ़ के डेढ़ वर्ष के प्रवास में वह एक दिन भी उससे लड़े नहीं थे। साथ ही सदा उसके प्रेममय व्यवहार की प्रशंसा किया करते थे।

इस पर भी गरिमा के इस प्रकार कहने पर उसके मन में बहन के अनुभवों को और अधिक जानने की उत्सुकता बढ़ गयी थी। इस कारण उसने बात बदल कर कहा, "अब तो तुमको यहाँ रहने के लिये पहले माताजी से पूछना चाहिये। बाद में अपनी सास से कहूँगी। दोनों की अनुमति होने पर ही यहाँ रह सकती हो। पिछले चार-पाँच दिन की घटनाओं के कारण स्थिति अब वह नहीं रही जो पहले थी। मैं स्वयं को अब इस घर में दूसरों की इच्छा से रह रही अनुभव कर रही हूँ। इस घर से मेरी कड़ी टूट रही प्रतीत होती है।"

"परन्तु दीदी! बाबा ने तो कहा है कि मुझे निर्भय होकर सर्वत्र आना-जाना चाहिये। भय बाहर की बातों से नहीं। वह तो अपने मन में बैठे चोर से है। वास्तव में मेरा मन ही कलुषित हो रहा था जो मैं अनायास उनके फंदे में फँस गयी थी। बाहरी अनाचार का आरम्भ भीतरी, मन की अव्यवस्था से आरम्भ हुआ था।"

"यह तो ठीक है, परन्तु मैं तुम्हारे यहाँ रहने के विषय में कह रही हूँ।"

"दीदी! मैं भी उसी विषय में बता रही हूँ। मैं कह रही हूँ कि मुझे यहाँ रहने से डरना नहीं चाहिये और रह सकती हूँ। यही बाबा ने कहा है।"

"और माँ क्या कहती हैं?"

"वह कहती हैं कि मुझे तुम्हारे साथ तब तक रहना चाहिये जब तक जीजाजी लौटते नहीं।"

"और यदि वह नहीं लौटे तो?"

"तो मैं स्वेच्छा से यहाँ और माँ के घर में रह सकती हूँ।"

"तो मैं अपनी सास से बात करूँगी यह उनका घर है। बिना उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा के ज़बरदस्ती यहाँ डेरा डाल देना तो जहाँ अनधिकार-युक्त होगा वहाँ तुम्हारे और मेरे लिये अपमान का कारण भी हो सकता है।"

"तो दीदी! तुम पूछ लो। मैं तो एक विचार से यहाँ रहने आयी हूँ।"

"किस विचार से?"

"बता दूँ?"

"हाँ।"

"इसलिये कि तुम जीवन से निराश न हो जाओ।"

"परन्तु गरिमा! यदि निराश हुई तो उस निराशा को कैसे रोकोगी?"

"यह पहले कैसे बता सकती हूँ? अभी केवल यह कह सकती हूँ कि जैसे कहीं से मिली मिठाई बाँटी जा सकती है, वैसे ही अज्ञात से आयी मुसीबत भी बाँटी जा सकती है।"

महिमा पुनः हँसी और बोली, "मैं समझती हूँ कि न तो मिठाई बाँटी जा सकती है और न ही मुसीबत का विभाजन हो सकता है। मिठाई खाने की इच्छा न हो तो कैसे बाँट दोगी? उस बाँटने में उसे व्यर्थ गँवाना होगा। यही बात मुसीबत की है।"

"अभी तो तुमने बताया है कि मनःस्थिति ही मनुष्य के आचार-व्यवहार का निश्चय करती है। बिना मिठाई के भी मन प्रसन्न रह सकता है और मुसीबत आने पर भी मनुष्य शान्त और प्रसन्न हो सकता है।

"यह सब पीछे देख लूँगी। पहले तुम जीजाजी की माँ से मेरे विषय में पूछ लो।"

"अच्छा ठहरो!" महिमा उसे वहीं छोड़ अपनी सास के कमरे में चली गयी। वह और उसका श्वसुर बावा के कमरे में थे। महिमा वहीं जा पहुँची। उसने कमरे के द्वार पर खड़े होकर पूछा, "मैं भीतर आ सकती हूँ?"

"हाँ, आओ बेटा।" सुरेश्वर ने कहा महिमा घर के तीनों पुरखों को इकट्ठे देख अपनी बात सबके सामने कहने का अवसर देख भीतर जा बैठ गयी। बावा ने महिमा को आया देख उसी से कहना आरम्भ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर दिया, "महिमा बेटी ! तुम आ गयी हो। यह अच्छा हुआ है। हम सब तुम्हारे पास आने की बात ही विचार कर रहे थे।

"हम विचार कर रहे थे कि तुम्हें अमृत के पीछे चण्डीगढ़ जाना चाहिए कि नहीं। हमने एक व्यक्ति यहाँ से चण्डीगढ़ भेजा था और वह यह समाचार लाया है कि कल रात अमृत वहाँ अपने मकान में रहा है। मैं समझता हूँ कि उसका वहाँ अकेला रहना ठीक नहीं।"

"पर बाबा ! मेरे विवाह से पूर्व भी तो वह अकेले रहते थे।"

"परन्तु अब बात दूसरी प्रतीत हो रही है। उस समय वह कुछ अनिष्ट करता तो केवल हम परिवार के लोग ही घाटे में रहते। अब उस घाटे में सबसे अधिक भागीदार तुम हो गयी हो। इस कारण तुम्हारे अपने भाग्य को सुधारने का अवसर तुमको मिलना चाहिये।

"तुम्हारी सास कल जाना चाहती है। यदि तुम्हें आपत्ति न हो तो तुम भी चली जाओ तो अच्छा होगा।" सुरेश्वर ने प्रस्ताव रख दिया।

इस नयी स्थिति पर वह कुछ निश्चय नहीं कर सकी। वह मौन गम्भीर विचार में निमग्न बैठी रह गयी। सुन्दरी ने कहा, "मैं उसकी सब करतूत जान चुकी हूँ। इससे भी मैं यह उचित समझती हूँ कि उसे उस नरक से निकलने का अवसर दिया जाये जिसमें वह जा रहा प्रतीत होता है। हम उसे इस कार्य में सहायता भी देना चाहते हैं। मेरी इच्छा है कि तुम भी हमारे प्रयास में सम्मिलित हो जाओ।"

महिमा ने जब सास को अपनी इच्छा व्यक्त करते सुना तो अपना हठ छोड़ बोली, "माताजी ! आपकी इच्छा का मैं विरोध नहीं कर सकती और उसकी पूर्ति में सहयोग भी देना अपना कर्त्तव्य मानती हूँ। कितने बजे की बस में चलेंगे ?"

"प्रात: सात बजे की। तुम साढ़े छ: बजे चलने के लिये तैयार रहना।"

"मैं तो इस कारण आयी थी कि आपको सूचित कर दूँ कि गरिमा रात यहाँ रहने का विचार रखती है।"

उत्तर बाबा ने दिया, "हाँ ! मुझे बता गयी है। वह भी अपने उद्धार के लिये यत्न कर रही है और मैंने उसको भी इसमें सहायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने के लिये आश्वासन दिया है। प्रथम पग उसकी समझ में यह आया है कि वह मेरे सम्पर्क में अधिक-से-अधिक काल तक रहे। इसके लिये जब तक अमृत यहाँ नहीं है वह यहीं रहना चाहती है।"

"जैसी आपकी आज्ञा है।"

अगले दिन सास-पतोहू चण्डीगढ़ चली गयीं। उसी सायंकाल वे लौट आयीं। सुन्दरी ने बाबा को बताया, "अमृत चण्डीगढ़ में नहीं है। उसके एक मित्र ने बताया है कि वह कश्मीर चला गया है। कोठी को ताला लगा है और चौकीदार वहाँ था। उसने तो कहा था कि ताला तोड़ हम वहाँ रह सकती हैं, परन्तु मैंने इसे व्यर्थ समझ लौट आना उचित समझा है। उसकी छुट्टी समाप्त होने पर पुनः जायेंगे।"

उस दिन मध्याह्नोत्तर भृगु और भगवती आये तो उन्होंने बताया कि शम्भु भी चण्डीगढ़ गया हुआ है और हम उसे लिख देंगे कि वह अमृत की टोह लेता रहे।

: ६ :

विष्णुशरण ने अपनी कथा आरम्भ करते हुए कहा, "कल शम्भुदत्त ने पूछा था कि राक्षसों में रावण कैसे उत्पन्न हो गया? जहाँ प्रहेति जैसे धर्म-निष्ठ, योग-ध्यान, तपस्या करने वाले लोग थे, वहाँ रावण जैसा अनाचार करने वाला कैसे उत्पन्न हो गया और फिर वह राजा कैसे बन सका?

"इसके लिये हमें यह जानने की आवश्यकता है कि मनुष्य के आचार-विचार कैसे बनते हैं? आचार-विचार मनुष्य की प्रवृत्ति का परिणाम होते हैं। प्रवृत्ति संस्कारों से बनती है। संस्कार वातावरण, शिक्षा और कर्म करने से उत्पन्न होते हैं।

"कर्म प्रकृति से प्रेरित होकर किये जाते हैं और कर्म परिणाम में संस्कार, तदनन्तर प्रवृत्ति बनाते हैं।

"अतः प्रवृत्ति के दो स्रोत हैं। संस्कार और कर्म। दोनों को दिशा देने वाली शिक्षा है। शिक्षा के साधन स्कूल, कालेज की पढ़ाई के अतिरिक्त भी हैं। यह तो माना ही जाता है कि माता-पिता और आचार्य ज्ञान के दाता हैं। आज के युग में आचार्यों के स्थानापन्न भी उत्पन्न हो गये हैं। ये हैं समाचारपत्र, पत्रिकायें, सामान्य साहित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और नेतागण। नेताओं ने गुरुओं का स्थान ग्रहण कर लिया है। समाचारपत्रों ने तथा सामान्य साहित्य ने धर्म-शास्त्रों का स्थान ले लिया है।

"उस काल में जिसका मैं वर्णन कर रहा हूँ, समाचारपत्र थे नहीं। गुरुजन जो सत्य ज्ञान के ज्ञाता थे, वे रक्ष लोग अपने साथ देवलोक से लाये नहीं अथवा यह कहो कि देवलोक के विद्वानों ने रक्षों के साथ सहस्रों मील दूर की यात्रा करना उचित नहीं समझा। उस समय रक्षों का पथ-प्रदर्शन करने वाले किसी गुरु का उल्लेख मिलता नहीं। इसी कारण धर्म-शास्त्र इन द्वीपों में उपलब्ध नहीं थे। इस पर भी कुछ लोग देवलोक जाते रहते थे और उनसे एक प्रकार क्षीण-सा सम्पर्क बना हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रहेति के संस्कार इसी कारण बने हुए थे और यह भी सम्भव प्रतीत होता है कि कुछ सौ वर्ष पूर्व देवलोक में रहते हुए बने संस्कारों का अभी कुछ प्रभाव राक्षसों पर शेष था।

"कुछ भी हो हेति का राज्य अति सुखप्रद और उन्नति का था। जबसे यक्ष और रक्ष वहाँ पहुँचे थे, अभी भूमि को समतल कर कृषि के योग्य बनाने में लगे थे। उन्होंने अभी पृथ्वी से अन्य मूल्यवान उपलब्धियों को प्राप्त नहीं किया था यह हेति के राज्य में हुआ।

"जातियों में उत्थान एवं पतन विवाह सम्बन्धों से भी होते हैं। हेति के परिवार में भी एक परिवर्तन उसके विवाह से हुआ।

"हेति एक दिन मृगया के लिये वनों में घूम रहा था कि उसे एक कुमारी के दर्शन हुए। देखते ही उस पर वह आसक्त हो गया। उसने कुमारी के समीप जाकर पूछा, 'देवी! क्या परिचय है तुम्हारा?'

"उस लड़की ने उत्तर देने की अपेक्षा कह दिया, 'बहुत असभ्य हो तुम। अपना परिचय दिये बिना एक कुमारी का परिचय जानना चाहते हो।'

'क्षमा करो कुमारी! भूल हो गयी है। मैं रक्षराज हेति हूँ, यहाँ मृगया के निमित्त वन में घूम रहा हूँ।'

'अब ठीक है। देखो नरेश, मैं इस वन में रहने वाले काल मुनि

—९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बहन भया हूँ। मैं आपको अपनी कुटिया में चलने का निमन्त्रण देती हूँ। कुटिया में फल-फूल ही हैं जो हम अपने नरेश की भेंट कर सकते हैं।'

"यह निमन्त्रण हेति के मन की बात थी और वह कुमारी के साथ चल पड़ा। उसने मार्ग में ही यह प्रस्ताव कर दिया, 'देवी ! मैं समझता हूँ कि तुम अभी कुमारी हो, परन्तु विवाह करने की वयस को प्राप्त कर चुकी हो। मैं तुम्हारे भाई काल मुनि से प्रस्ताव करना चाहता हूँ। तुम इसे कैसा समझोगी ?'

"भया चलती-चलती खड़ी हो गयी और हेति का सिर से पाँव तक निरीक्षण करने लगी। दो ही क्षण तक उसने उसे देखा और फिर मन में निश्चय कर बोली, 'प्रस्ताव सुन्दर है, परन्तु मैं तो उससे विवाह करूँगी जो मुझे अपने निजी कार्यों में पूर्ण स्वतन्त्रता देने की सामर्थ्य रखता हो।'

'सामर्थ्य की बात मैं नहीं समझा।' हेति ने अपने मन की प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए कहा, 'मैं यहाँ का राजा हूँ और इस देश में रहने वालों से सबसे अधिक मेरी सामर्थ्य है।'

'मैं धन और सैन्य-शक्ति की बात नहीं कर रही। मैं आपके मानसिक बल एवं सन्तुलन की बात कर रही हूँ। अधिकांश पुरुष उन बातों में भी जिनका सम्बन्ध पत्नी का केवल अपने से ही होता है, उनमें भी आज्ञायें करने लगते हैं।

'पति-पत्नी के साँझे कामों में तो दोनों एक-दूसरे से सहयोग करते ही हैं, परन्तु अनेक ऐसे कार्य हैं जिनका सम्बन्ध दूसरे से नहीं होता, उनमें भी पति पत्नी पर शासन करना चाहता है। मैं यह नहीं मानूंगी।'

'और कौन-कौन से काम हैं जिनको देवी पति से पृथक् मानती हैं ?'

'यह मैं इस समय नहीं बता सकती। सिद्धान्त की बात बताती हूँ। एक-आध उदाहरण भी दे सकती हूँ। शेष समय-समय पर विचार और निश्चय किया जा सकता है।'

'उदाहरण ही बता दें जिससे कुछ तो समझ में आ जाये।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'उदाहरण के रूप में वस्त्र पहनने की बात है। मैं पहनूं अथवा न पहनूं और क्या पहनूं अथवा क्या न पहनूं, इसमें पति का सम्बन्ध नहीं है।'

'यदि देश की रानी अवस्त्र नगर में घूमती फिरे, यह तो अति भयंकर बात हो जायेगी।'

'इस भयंकरता को पत्नी स्वयं समझेगी तो वैसा नहीं करेगी, परन्तु पति की आज्ञा से यह नहीं हो सकेगा।'

"हेति इससे गम्भीर भाव में स्तब्ध रह गया। वह कुमारी भया के साथ चल रहा था। इस समय उसे एक बात सूझी। उसने कहा, 'यदि देवी किसी एक ऐसी बात का भी उदाहरण दे दें जिसे वह पति-पत्नी में साँझी मानती है तो अत्यन्त कृपा होगी।'

'हाँ। एक बात जो मेरे मन में इस समय है, वह बता देती हूँ। सन्तान उत्पन्न करना पति-पत्नी का साँझा कर्त्तव्य है।'

"इस पर हेति प्रसन्न हो गया। उसने कहा, 'ईश्वर का धन्यवाद है कि देवी विवाह के मुख्य लक्ष्य में स्वतन्त्रता नहीं माँग रहीं। इस पर भी इसके साथ ही यदि इतना और जोड़ दूँ तो कैसा रहेगा? वह यह कि सन्तान को उत्पन्न करना, पालन करना और शिक्षित करना पुरुष-स्त्री दोनों का काम है।'

'इसे मैं उत्पन्न करने के अन्तर्गत ही मानती हूँ।'

तब मैं आपके भाई के सम्मुख अपना प्रस्ताव रखूँगा।'

"दोनों काल मुनि की कुटिया पर जा पहुँचे। काल मुनि देवलोक से इस द्वीप में एकान्तवास की लालसा से आये थे। वह कुटिया के बाहर एक बरगद के पेड़ के नीचे आसन लगाये बैठे थे। वे मृग-चर्म का उत्तरीय कमर पर बांधे शेष शरीर से नग्न बैठे थे। भया ने भाई से कहा, 'भैया! यह अतिथि हैं।'

"काल ने अपने समीप बिछे आसन पर हेति को बैठने के लिये कहा और उसका नाम-धाम पूछने लगा। भया अतिथि को बैठा छोड़ कुटिया में चली गयी।

"हेति ने अपना परिचय दिया और बताया, 'मैं एक मृग के पीछे-पीछे आ रहा था कि मुझे यह मृगनयनी दिखायी दी। मैं इसे विवाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर अपने प्रासाद में ले जाने की इच्छा करने लगा हूँ। जब देवी ने बताया कि वह अपने भाई के साथ यहाँ रहती है तो मैं यहाँ चला आया हूँ। अब आपको देख यह याचना आपसे कर रहा हूँ।'

'इसमें वह स्वतन्त्र है। यदि चाहे तो आपकी पत्नी बन सकती है। आपको यह प्रस्ताव उसके सम्मुख करना होगा।'

'वह मैंने किया है...।' इस समय भया कदली के पत्ते पर वन के फल रखे कुटिया से निकल आयी, हेति बात करते-करते इस कारण रुक गया था कि भया सर्वथा अवस्त्र आ रही थी।

"वह भया के कथन का, कि अपने व्यवहार में वह सर्वथा स्वतन्त्र होगी, अर्थ समझ गया। वह इसे भय की बात इस कारण समझता था कि रक्ष जाति के बलिष्ठ लोग ऐसी अनिन्द्य सुन्दरी को देख उसके भोग की लालसा करने लगेंगे और फिर वह नगर में घोर विप्लव का कारण बन जायेगी। इस पर भी वह भया के सुन्दर शरीर को देख अपने प्रस्ताव को वापस नहीं ले सका।

"काल ने हेति के मन के भावों का अनुमान लगा कह दिया, 'राजन्! देख लिया है भया को। यह मृगनयनी ही नहीं वरंच इस वन की सर्वश्रेष्ठ मृगी भी है। यह वनों में इसी प्रकार विचरती है। जब इसकी इच्छा होती है तो यह मृग-चर्म पहन लेती है। यह भी इस कारण कि मैंने इसे बताया है कि इसके शरीर का सौन्दर्य और कोमलता बदलती ऋतुओं के जलवायु से ऐसे हो जायेगा जैसे पेड़ का रूप और छाल होती है। अतः यह जब बाहर भ्रमण के लिये जाती है तो मृग-चर्म शरीर पर लपेट लेती है। कुटिया में यह इन उत्तरीयों को व्यर्थ का झंझट समझ उतार डालती है।'

'भगवन्!' हेति ने कहा, 'मैंने अपना प्रस्ताव इस कुमारी के सम्मुख रखा है और इसने इसे स्वीकार किया है। इसने उस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए एक शर्त रखी है कि इसके अपने निजी कार्यों में मैं इस पर आज्ञा नहीं करूँगा। उनमें यह स्वतन्त्र होगी।

'मैंने इसकी शर्त स्वीकार कर ली है और अपनी एक शर्त यह की है कि यह अपने निज के कामों में मेरी सम्मति सुना करेगी। प्रेरणा देना मेरा अधिकार होगा। उस प्रेरणा का मानना अथवा न मानना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका अधिकार होगा।'

'देखो भया!' मुनि ने सामने अवस्त्र खड़ी युवती की ओर देखकर कहा, 'यह इस देश के नरेश हैं और तुमको अपनी रानी बनाना चाहते हैं।'

'भैया! मेरी इनसे बात हो गयी है और मैं इनके साथ जाने के लिये उद्यत हूँ।'

'तो बैठो।' काल मुनि ने कहा।

"वह बैठी तो मुनि ने दोनों को एक-दूसरे से प्रेमपूर्वक रहने और जीवन में सहयोग देने की सम्मति दे आशीर्वाद दे दिया। उन्होंने कहा, 'मैं इच्छा करता हूँ कि आप दोनों का जीवन सुख एवं रसमय हो। आप चिरकाल तक जीवित रहते हुए पुत्र-पौत्रों से युक्त हो स्वर्ग को सिधारें।'

"इस प्रकार हेति वन की सबसे श्रेष्ठ मृगी का शिकार कर अपने नगर को लौट आया। मार्ग में ही उसने भया को बताया कि प्रकृति ने पुरुष-स्त्री में परस्पर आकर्षण बनाया है और इससे प्रकृति का प्रयोजन सन्तानोत्पत्ति है, परन्तु इस आकर्षण का परिणाम यह भी होता है कि सुन्दर पुरुषों से अनेक स्त्रियाँ और सुन्दर स्त्रियों से अनेक पुरुष सन्तान उत्पन्न करना चाहते हैं। इससे पुरुष और स्त्रियों को अपने शरीर के वे अंग जो इस आकर्षण में सहायक हैं, एक-दूसरे से छुपा कर रखने आवश्यक हैं। उन अंगों को देखकर आकर्षण तीव्र हो जाता है और फिर पुरुष अथवा स्त्रियाँ प्रकृति से विवश हो एक-एक के लिये कई-कई झगड़ने लगते हैं और मानव-समाज का दुर्बल अंग क्षत-विक्षत हो जाता है। मेरे कहने का अभिप्राय है कि हानि स्त्री-वर्ग को अधिक होती है।

"इस कारण समाज के विद्वानों ने यह निश्चय किया है कि पुरुष और स्त्रियां अपने विशेष अंगों को ढक कर रखें जिससे आकर्षण कम-से-कम हो सके।

"भया साथ जाने के समय तो मृग-चर्म अपने ऊपर लपेटे हुए थी। यह इस कारण कि उसके भाई ने उसके मन में भय उत्पन्न कर दिया था कि उसकी त्वचा भी पेड़ों की छाल की भाँति कठोर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुरदरी और फटी हुई हो जायेगी। अब उसे एक नयी बात का ज्ञान हुआ था। वह यह कि शरीर को गर्मी, सर्दी से बचाने के लिये ही नहीं ढाँपा जाता, वरंच इस कारण भी ढाँपना उचित समझा जाता है कि पुरुष-स्त्री के कुछ अंग दोनों में आकर्षण उत्पन्न करते हैं और उस आकर्षण को नियन्त्रण में रखने के लिये उन अंगों को ढाँप कर रखना चाहिये।

"भया मन में विचार करती थी कि उसके साथी का मुख भी तो अत्यन्त आकर्षण रखता है। तो क्या उसे भी ढाँप कर रखा जाये? उसने अपने मन की बात हेति से बतायी तो उसने कहा, 'हाँ। आकर्षण में मुख और आँखों का विशेष प्रभाव होता है। परन्तु इसको नंगा रखे बिना जीवन चल नहीं सकता। इस पर भी कुछ स्त्रियाँ और कहीं-कहीं पुरुष भी इनका शृंगार कर और अधिक आकर्षक बनाने का यत्न किया करते हैं। यह भी एक सीमा तक ही उचित है।'

"भया इस सत्य कथन का स्वयं भी अनुभव करती थी। इस पर उसने पूछ लिया, 'आपने मुझसे विवाह कर प्रस्ताव क्या मेरे प्रति आकर्षण अनुभव कर ही किया था?'

'हाँ। मुझे तुममें बहुत प्रबल आकर्षण अनुभव हुआ था और मैं प्रस्ताव करने पर विवश हुआ था।'

'वैसे तो मुझे भी आपकी संगति में रहने की इच्छा हुई है, परन्तु मैं जानना चाहती हूँ कि आपको मुझमें क्या बात देखकर आकर्षण हुआ था?'

'किसी एक बात का कथन नहीं कर सकता। तुम्हारी ऊँचाई, तुम्हारी चौड़ाई, तुम्हारा मुख, होंठ, गोल-गोल बाँहें और पिण्डलियाँ अर्थात् प्रत्येक अंग जो दिखायी दिया था, बहुत ही सुन्दर और आकर्षक प्रतीत हुआ था, परन्तु विशेष आकर्षण तुम्हारी आँखों में था। यह अद्भुत है।'

'मैं नहीं बता सकती कि कि आपमें क्या बात थी जिससे आकर्षित हो मैं अपने भाई को छोड़ आपके साथ चल पड़ी हूँ।'

'यह प्रकृति ही है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: १० :

"हेति और भया जीवन के अन्त तक सुखपूर्वक रहे। भया ही नगर में समाज के नियमोपनियमों का पालन करती हुई सुख अनुभव करती थी। वन में तो वह वन-पशुओं को नग्न घूमते एवं विचरते देखती थी। वह उनको सन्तानोत्पत्ति में संलग्न देखती थी और उसे पशु-व्यवहार समझ अनुसरणीय नहीं मानती थी। उसके भाई ने उसे मनुष्य और पशु का सैद्धान्तिक अन्तर समझा रखा था। इससे वह अपने को सृष्टि की एक विशेष तथा अद्वितीय कृति मान जीवन व्यतीत कर रही थी।

"परन्तु ज्यों-ज्यों वह यौवन प्राप्त करती जाती थी, वह अपने में एक अभाव अनुभव करने लगी थी। एक दिन काल मुनि ने उसे बताया था, 'मैं तुम्हें कुछ और बड़ी हो जाने पर एक नगर में ले जाऊँगा। वहाँ हमारे जैसे प्राणी इसी प्रकार एक बड़ी संख्या में घूमते-फिरते दिखायी देंगे। तब तुमको कोई ऐसा एक प्राणी मिल जायेगा और तुम मुझे छोड़कर उसके साथ विचरने की इच्छा करोगी। मैं तुमको वहाँ छोड़ पुनः वन में आ जाऊँगा। तब तुम वहीं रहती हुई गाय के बछड़े-बछड़ियों की भाँति अपने जैसे बच्चे उत्पन्न करोगी और इससे तुमको सुख प्राप्त होगा।'

'पर भैया! तुम नगर में क्यों नहीं रहते?'

'मुझे यहीं सुख मिलता है। मैं चिन्तन में बहुत सुख अनुभव करता हूँ।'

'वह क्या होता है?' चिन्तन के विषय में वह समझना चाहती थी और वह भी वहाँ रहते हुए वही सुख प्राप्त करना चाहती थी।'

'चिन्तन का अर्थ है कि किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने के लिये उसके गुणों को देखकर उस वस्तु के अभ्यान्तरिक तथ्य को समझने का यत्न करना। उदाहरण के लिये यह पेड़ है। इसे हम आम का पेड़ कहते हैं। जब मैं यहाँ आया था तो यह एक छोटा-सा पेड़ था। तब यह फल नहीं देता था। अब इसके फल होते हैं जो हम प्रति वर्ष खाते हैं। यह क्यों हैं? इसके फल क्यों निकलते हैं और यह कब तक चलता रहेगा? यह सब मैंने चिन्तन से जाना है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भैया ! आप यहाँ कब आये थे ?'

'जब तुम इतनी-सी थी।' काल ने भूमि से डेढ़ फुट ऊँचा हाथ कर बता दिया।

'हम कहाँ से आये थे ?'

'दूर एक नगर था। मैं और तुम अपने माता-पिता के साथ वहाँ रहते थे। एक बार हमारे सजातीय और आदित्यों में युद्ध हुआ था। उन्होंने हमको पराजित कर दिया और फिर हमारे नगरों को अपने एक अस्त्र से भस्म कर दिया। मैं तुमको लेकर भाग खड़ा हुआ। नगर के मध्य में एक नदी बहती थी। मैं तुम्हें लेकर नदी में कूद पड़ा और फिर उसमें बहता हुआ अस्त्र के प्रभाव क्षेत्र से बाहर हो गया।

'तब मैं उन आदित्यों के भय से यहाँ वन में आकर रहने लगा था।'

'तो हमारे भी माता-पिता थे ?'

'हाँ।'

'उन आदित्यों से युद्ध क्यों हुआ था ?'

'हमारे सजातीय मदिरा का अति सेवन करते थे और फिर उसके मदात्य में बहुत अनाचार करते थे।'

'अनाचार का क्या अर्थ है ?'

'जो वस्तु अपनी नहीं, वे उसे बलपूर्वक उठा भोग करने लगते थे। आदित्य परिश्रमी, मितव्ययी, सदाचारी और उचित-अनुचित में भेद करते थे। परिणाम यह होता था कि वह धन-सम्पद् के स्वामी थे और हमारे सजातीय पहले तो मद्य का सेवन करने से कुछ अधिक अर्जन नहीं कर सकते थे। दूसरे यह कि जो कुछ भी अर्जन करते थे, वह व्यर्थ के भोगों में व्यय कर देते थे। अतः ये प्रायः निर्धन और उचित-अनुचित नहीं समझते थे। जब हमारे सजातीयों के पास निर्वाह के लिये नहीं बचता था तब वे आदित्यों के पास धन-धान्य प्रचुर मात्रा में देख उन पर आक्रमण कर उनका छीन लेते थे।

'इससे दोनों समुदायों में वैमनस्य था और एक दिन युद्ध हुआ। उनके एक विष्णु नामक आदित्य हैं। उसके पास एक सुदर्शन चक्र है। उसने क्रोध में उस चक्र को निकाल लिया और एक ही बार में सब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भस्म कर दिया।'

'बहुत दुष्ट था वह ?'

'नहीं, भया ! हमारे सजातीयों का व्यवहार उचित नहीं था। तब तो मैं उनको ठीक मानता था, परन्तु यहाँ रहते हुए मुझे चिन्तन करने से यह समझ में आया है कि हमारा व्यवहार उचित नहीं था।'

'कैसे पता लगा है कि उचित नहीं था ?'

'मेरी समझ में एक बात आयी है। जो कुछ मेरा है, उसको मैं अपने पास रखना चाहता हूँ। ऐसे ही कोई दूसरा भी जो कुछ उसका है, अपने पास रखना चाहेगा। जैसे मेरी वस्तु कोई छीनना चाहे तो मुझे ठीक प्रतीत नहीं होता वैसे ही दूसरे की वस्तु छीनने पर उसे भी ठीक प्रतीत नहीं होगा। इस कारण जैसा व्यवहार मैं किसी से अपने साथ चाहता हूँ वैसा ही मुझे दूसरों के साथ करना चाहिये।

'हम ऐसा नहीं करते थे। इस कारण हमारा व्यवहार उचित नहीं था।'

"इस प्रकार की बातों से भया की बुद्धि का विकास हुआ था और जब वह नगर में जाकर रहने लगी तो उसको वहाँ का व्यवहार देख भला प्रतीत हुआ। लोग अपने-अपने काम में लीन थे। परोपकारी कार्य करते थे और जिनका कार्य किया जाता था, परिश्रम करने वाले को प्रतिकार स्वयं देते थे।

"हेति ने न्याय-संगत नियम बना रखे थे और वह सरल, सुगम और सुखकर थे।

' हेति के भया से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। जो महान पराक्रमी और ओजस्वी था। उसका नाम विद्युतकेश रखा गया। विद्युतकेश जल में कमल समान बड़ा हो अपने पिता के राज का विस्तार करने लगा। भया ने अपने भाई के ज्ञान के प्रभाव से और अपनी बुद्धि के बल से लड़के को सुयोग्य और सबल बनाया था और वह एक सुयोग्य शासक हुआ था, परन्तु पिता के राज्य मे समृद्धता होने से और सुव्यवस्था होने से विद्युतकेश की प्रवृत्ति सुख-भोग की हो रही थी।

"आदित्यों की परम्परा थी कि विद्यार्थी काल में बालक-बालिकाओं को गुरु-आश्रम में तपस्या के जीवन का अभ्यास कराया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता था। वह इन रक्षों में प्रथा नहीं बन सकी। जब रक्ष इन दक्षिण के द्वीपों में आये तो गुरुजन इनके साथ नहीं आये। विद्वान् गुरुजनों की देवलोक में बहुत प्रतिष्ठा थी। अतः वे अपना देश छोड़ कर इधर आने की इच्छा नहीं कर सके। परिणाम यह हुआ कि ये रक्ष उन शुभ प्रथाओं के ज्ञान से वंचित हो गये जो देवलोक में प्रचलित थीं। ये लोग अपनी बुद्धि से अपने आचरण का निर्माण करते रहे।

"परिणाम यह हुआ कि जब तक इन द्वीपों की आर्थिक दशा सुधरी नहीं तब तक ये लोग परिश्रम और तपस्या का जीवन व्यतीत करते रहे। जीवन-यापन में लगे हुए इनको भोग-विलास के लिये अवसर और अवकाश ही प्राप्त नहीं हुआ। परन्तु हेति के काल में सुव्यवस्था के कारण द्वीपों में धन-सम्पदा में वृद्धि होने लगी थी और विद्युतकेश के काल में उस समृद्धि के भोग का काल आ गया। इस भोग में विद्वानों का नियन्त्रण रहा नहीं। परिणाम स्वरूप भोग-विलास की प्रवृत्ति बढ़ने लगी।

"हेति का एक मात्र पुत्र भी भोग की लालसा में इधर-उधर घूमने लगा। इस कार्य में वह निशाचर हो गया।

"निशाचरों की अवस्था में इसका सन्ध्या की लड़की सालकटंकटा से सम्बन्ध बन गया। एक सायंकाल वह नगर की वीथिकाओं में भोग की इच्छा से घूम रहा था कि रात में चाँद के समान उज्ज्वल और लुभायमान मुख वाली सालकटंकटा सामने से आती दिखायी दी।

"विद्युतकेश उसकी मोर की-सी गति और मृग की भाँति नयनों को देख चकित रह गया। सालकटंकटा समीप से निकल जाती, परन्तु वीथिका संकीर्ण थी और विद्युतकेश उसका मार्ग रोक खड़ा हो गया। सालकटंकटा विद्युतकेश को पहचान गयी। वह देश का राजा और निशाचर सन्ध्या-पुत्रियों से अपरिचित नहीं रहा था।

"सन्ध्या-पुत्रियों का अभिप्राय वेश्याओं की सन्तान था। सालकटंकटा ने पहचान कहा, 'राजन्! मार्ग छोड़ दीजिये! मैं काम से जा रही हूँ।'

'किसकी लड़की हो?'

'इस वीथिका में रहने वाली सन्ध्या की।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तो रात हमारे साथ व्यतीत करो।'

'माँ से पूछकर बता सकती हूँ।'

'कहाँ है तुम्हारी माँ?'

'वह सामने वाले मकान में है।'

'हमें उसके पास ले चलो।'

"सालकटंकटा लौट पड़ी और विद्युतकेश उसके साथ था। लड़की उसे एक मकान के सुसज्जित आगार में ले गयी। सन्ध्या बगल के आगार में कई युवकों से घिरी बैठी थी। लड़की भीतर जाकर माँ को बुला लायी। विद्युतकेश ने लड़की को माँगा तो माँ ने कह दिया, 'स्वीकार है। परन्तु यह स्वेच्छाचारिणी है। इसकी इच्छा पर छोड़ोगे तो इसे पा सकोगे।'

'मुझे स्वीकार है।'

'यह पटरानी बनेगी।'

'यह भी स्वीकार है। जब तक मेरे पास रहेगी, पटरानी रहेगी।'

'तो विवाह करोगे?'

'हाँ।'

"इस प्रकार सन्ध्या-पुत्री सालकटंकटा से विद्युतकेश का विवाह हो वह रानी घोषित हो गयी।

"तब विद्युतकेश-परिवार का और रक्ष समुदाय का पतन आरम्भ हुआ। समय पाकर सालकटंकटा के गर्भ ठहरा और जब वह पति की सेवा में कष्ट अनुभव करने लगी तो मंथराचल पर्वत पर जा पहुँची और वहाँ एक बच्चे का प्रसव कर उसे वन में पशुओं के भोजन के लिये छोड़ नगर में अपने पति के पास लौट आयी।

"विद्युतकेश को सालकटंकटा के चले जाने का बहुत दुःख हुआ था और वह अपने भोग की सामग्री अभी ढूँढ ही रहा था कि वह मन्थराचल पर्वत से अपने बोझे से निर्मुक्त हो लौट आयी।

"विद्युतकेश ने पूछ लिया, 'देवी! कहाँ गयी थीं?'

'मैं रोग-ग्रस्त हो गयी थी। रोग की निवृत्ति के लिये एकान्त स्थान पर गयी थी।'

'क्या रोग था?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'स्त्रियों वाला रोग था।'

'हमारे यहाँ योग्य-से-योग्य चिकित्सक रहते हैं। भला कहीं दूर जाने की क्या आवश्यकता थी?'

'महाराज! इस रोग में किसी चिकित्सक की आवश्यकता नहीं होती। एकान्त-स्थान और किसी दासी की आवश्यकता होती है।'

'विद्युतकेश समझा नहीं, परन्तु सालकटंकटा की एक दासी ने महाराज को बताया कि महारानी के गर्भ ठहर गया था और यह बच्चा प्रसव करने गयी थीं। इस पर तो विद्युनकेश को भारी शोक हुआ और उसने कुछ डाँट के भाव में पूछ लिया, 'कहाँ फेंक आयी हो अपने बच्चे को?'

'मन्थराचल पर्वत पर।'

'क्यों?'

'मुझे वह पसन्द नहीं था। मैं माँ का उत्तरदायित्व सिर पर उठाना नहीं चाहती।'

'परन्तु उस पर मेरा भी तो अधिकार था। वह तुमने अकेले निर्माण नहीं किया था।'

'ओह! यह तो मुझे सूझा ही नहीं।'

'और क्या सूझा है जो उसे वहाँ अरक्षित छोड़ आयी हो?'

'मुझे तो आपकी संगति ही सूझ रही थी। इसी कारण मैं अव-काश पाते ही शीघ्र लौट आयी हूँ।'

'परन्तु उस बच्चे का क्या होगा?'

'मैं क्या जानूं?'

'चलो, बताओ कहाँ फेंक आयी हो उसे?'

'पति-पत्नी दोनों गये, परन्तु वह बच्चा वहाँ पर नहीं मिला। उसके किसी अंग का कोई चिह्न भी नहीं मिला।' "

११ :

गरिमा को विष्णुशरण ने यह समझाया था, "तुमने दोहरा पाप किया है। एक सामाजिक पाप है और दूसरा व्यक्तिगत। सामाजिक पाप तो यह है कि समाज का नियम भंग किया है। समाज द्वारा नियत विधि-विधान का पालन किये बिना तुमने एक पुरुष से यौन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध बनाया है।

"यह ठीक है कि इस पाप का दण्ड समाज नहीं दे सकता। तुम दोनों ने स्वेच्छा से सम्बन्ध बनाया है। इस कारण सरकार का कानून भी इसमें दण्ड नहीं दे सकता। इस पर भी यह पाप है और इसका फल भी मिलेगा।"

"कैसे मिलेगा और कौन देगा?" गरिमा ने लज्जा से आँखें नीचे कर पूछ लिया।

"प्रत्यक्ष रूप में तो दण्ड देने वाला कोई दिखायी नहीं देता, परन्तु इसका फल समाज के पतन के रूप में प्रकट होगा। इस पतन में तुमने इस कुकर्म से योगदान दिया है। समाज में उच्छृङ्खलता उत्पन्न करने में तुम्हारा यह कर्म सहायक हो रहा है।

"दूसरा पाप तुमने अपने साथ किया है। तुमको यह समय और शक्ति अपनी पढ़ाई में व्यय करना चाहिये था। अब तुमको इस बात की चटक लग गयी है और तुम्हारा चित्त बार-बार इसी दिशा में चिन्तन किया करेगा। परिणाम यह होगा कि पढ़ाई के काम पर तुम अपने मन और बुद्धि को केन्द्रित नहीं कर सकोगी। इसका प्रभाव तुम्हारे पूर्ण जीवन पर होगा।"

"बाबा! भूल हो गयी है। प्रश्न यह है कि अब क्या करूँ?"

"अब तुम प्रायश्चित्त करो और पूर्व कर्म पर पश्चात्ताप करो।"

"प्रायश्चित्त कैसे करूँ? पश्चात्ताप तो मैं कर रही हूँ।"

"इस प्रकार नहीं। सामाजिक पाप का और व्यक्तिगत पाप का पश्चात्ताप तो नित्य गायत्री मन्त्र के जाप से हो सकता है और प्रायश्चित्त हो सकेगा अपनी बहन की सेवा करने से।"

इस सीख का ही परिणाम था कि गरिमा महिमा के साथ रहने के लिये आयी थी। माँ को तो उसने केवल यह कहा, "मैं बहन से क्षमा-याचना करना चाहती हूँ और वहाँ उससे पढ़ाई करूँगी।"

भगवती ने कहा, "बहन से पूछ लो।"

वह बहन से पूछने गयी तो बहन अपनी सास से पूछना चाहती थी। वह समझ नहीं सकी थी कि इसका क्या परिणाम हो सकता है? वहाँ उसका चण्डीगढ़ जाने का कार्यक्रम बन गया। उसने पहली रात तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह समझ कि वह कदाचित् चण्डीगढ़ में ही पति के पास रह जायेगी; इस कारण उसने गरिमा के विषय में कुछ अधिक विचार किये बिना उसे रहने दिया। परन्तु चण्डीगढ़ से लौटी और अब अपनी सास के घर में एक लम्बे काल तक अकेले रहने की सम्भावना के सन्दर्भ में गरिमा का विचार करने लगी। गरिमा उस दिन अपनी माँ के घर लौट गयी थी और मध्याह्नोत्तर आयी तो महिमा को वापस अपनी सास के घर में रहने के लिये आया देख पुनः उसके पास रहने का विचार बना बैठी।

दोनों बहनों में कथा के उपरान्त बात हुई। महिमा ने कहा, "गरिमा! मैं नहीं जानती कि तुमको मेरे साथ रहने से क्या लाभ होगा? इस कारण तुम अपने विषय में विचार कर लो। मैंने अपनी सास से बात की है। उन्होंने कहा है कि गरिमा को अपने माता-पिता की स्वीकृति से ही यहाँ अथवा कहीं भी रहना चाहिये।"

"दीदी!" गरिमा नें बताया, "माँ से और बाबा से इस विषय पर मेरी बातचीत हुई है। उससे ही मेरा यह विचार बना है कि मेरे लिये यहाँ रहना कल्याणकारी है। माताजी के घर में मेरी आयु की कोई लड़की नहीं है। दो भाई हैं। वे मुझसे छोटे हैं और मैं उनसे अपने मन की बात नहीं कर सकती। साथ ही मैं अब उपन्यास पढ़ने छोड़ रही हूँ। इससे प्राप्त अवकाश में क्या करूँ, वह तुमसे सीखना चाहती हूँ।"

महिमा को भी अपने एकान्त में एक साथिन मिलने से सुख हुआ। दोनों रहने लगीं। पिछली रात और इस रात भी जब महिमा बाबाजी द्वारा कही कथा को लिखने लगी तो गरिमा समीप बैठ पढ़ने लगी। उसने महिमा को कई सुझाव दिये। वह उपन्यास पढ़ने से उपन्यासों की शैली को समझती थी। अतः कथा इतिहास के रूप की अपेक्षा उपन्यास के ढंग पर लिखी जाने लगी।

इस नवीन शैली पर लिखने से कथा का विस्तार होने लगा। साथ ही महिमा से इतिहास के पढ़ने में वह अधिक और अधिक रुचि लेने लगी थी और वह बाबा से कथा में अधिक और अधिक प्रश्न पूछने लगी।

भृगुदत्त सेवा निवृत्त होने से खाली था। वह प्रायः मध्याह्न के समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मित्रों के साथ शतरंज खेलने में समय व्यतीत किया करता था। वह अब एक बार कथा सुनने आया तो फिर नित्य ही आने लगा। उसे रावण के पूर्वजों की कथा में कई नवीन रुचिकर और तत्कालीन घटनाओं पर उत्पन्न संशयों के निवारण करने वाली बातों का ज्ञान होने लगा था। अतः उसे शतरंज खेल कर समय व्यतीत करने से कथा में समय व्यतीत करना अधिक लाभप्रद प्रतीत हुआ। वह भी नित्य नियम से आने लगा।

पण्डित विष्णुशरण तो पहले भी योग्य कथा-वाचक माना जाता था और अपनी साठ वर्ष की वयस तक तो वह महाराजा के प्रासाद में कथा करने जाता रहा था। परन्तु अब उसने यह काम छोड़ दिया था। उसने एक दिन तो अमृत को कुछ अपने प्राचीन इतिहास में रुचि उत्पन्न करने के लिये कथा कही थी, परन्तु जब महिमा ने बताया कि वह उस कथा को लिखने लगी है तो उसने कथा को विस्तार से कहना आरम्भ कर दिया।

अगले दिन विद्युतकेश और सालकटंकटा की कथा का सूत्र पकड़ विष्णुशरण ने बताया, "जब विद्युतकेश और सालकटंकटा मंथराचल पर निष्फल खोज कर लौटे तो विद्युतकेश को क्रोध आ रहा था, परन्तु सन्ध्या-पुत्री अपने सहज कटाक्षों से विद्युतकेश पर पुनः अपना प्रभाव जमा राज्यप्रासाद में रहने लगी। उनके घर में पुनः कोई सन्तान नहीं हुई।

"यह बात कई वर्ष तक चलती रही। ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता जाता था विद्युतकेश को सन्तान न होने का दुःख बढ़ता जाता था। वह देख रहा था कि उसके राज्य का उत्तराधिकारी नहीं बन रहा। वह कई बार नवीन विवाह करने की इच्छा करता था, परन्तु सालकटंकटा का मोह-जाल इतना प्रबल था कि वह उसकी संगति मे आ सब-कुछ भूल जाता था।

"उक्त घटना को पांच वर्ष व्यतीत हो चुके थे कि एक दिन उसे समाचार मिला कि मंथराचल पर्वत पर पड़ा एक शिशु महादेव और उसकी पत्नी पार्वती को मिला था और अब वह शिशु एक अति सुन्दर एवं पार्वती का प्रिय पुत्र बन उनके पास रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"विद्युतकेश के मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि इस बालक को देखा जाये और यदि यह सिद्ध हो जाये कि उनका ही है तो महादेवजी से उसे माँग लिया जाये। अत: एक दिन उन्होंने अपना विमान निकाला और उस पर सवार हो पति-पत्नी कैलाश-यात्रा को चल पड़े।

"महादेव अपने गुणों के साथ कैलाश नगरी में रहता था और वहाँ पहुँच उन्होंने महादेव को अपने वहाँ आने की सूचना भेज दी। महादेव और पार्वती के पास जो पाँच वर्ष का बालक रहता था, उसका नाम उन्होंने सुकेश रखा हुआ था।

"जब विद्युतकेश और सालकटंकटा महादेव के सामने उपस्थित हुए और विद्युतकेश ने बताया कि वह दक्षिण सागर के द्वीपों का शासक है और उसके साथ उसकी पत्नी है तो उनका यथोचित स्वागत और सम्मान किया गया। उन्हें नगर के अतिथि-गृह में ठहरा दिया गया।

"इस आतिथ्य काल में उन्होंने उस बालक के विषय में बहुत जाँच-पड़ताल की और साथ ही उसे देखा। सालकटंकटा का यह विचार था कि यह लड़का उन्हीं का है। उसने बच्चे के रूप का अपने पिता के समान होने पर ध्यान दिया और फिर अपने पति से चर्चा की।

"एक दिन शिवजी के कहने पर विद्युतकेश ने अपने वहाँ आने का कारण वर्णन कर दिया। उसने कहा—

'भगवन्! हमारा एक बच्चा आज से पाँच वर्ष, तीन मास और चार दिन पूर्व मंथराचल पर्वत-पर रह गया था। हमने सुना है कि आपके घर रहने वाला लड़का सुकेश वही बालक है। अत: हम आपसे उसके वापस कर लेने की याचना करने आये हैं।'

"शिव ने आँखें मूँद अन्तर्ध्यान होकर चिन्तन किया और फिर कहा, 'यह ठीक है कि सुकेश हमें मंथराचल पर पड़ा और रोता मिला था। मैं और पार्वती दोनों अपने वृषभ विमान पर सवार उधर से जा रहे थे कि हमें यह वहाँ निस्सहाय पड़ा रोता दिखायी दिया। पार्वती के मन में दया आ गयी और उसने वहाँ भूमि पर जा उस बच्चे को उठा लिया और उसे यहाँ साथ ले आयी। यहाँ उसने ही इसका पालन-पोषण किया है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'भगवन् ! वह बालक हमको दे दिया जाये।'

'तुम्हारा उस पर कुछ भी अधिकार दिखायी नहीं देता। इस पर भी वह पार्वती का पालित-पोषित पुत्र है। यह अधिकार उसका है कि वह इसे आपको दे अथवा न दे।'

'तो हमें उसके सम्मुख अपनी याचिका उपस्थित करने का अवसर मिले।'

'हाँ।' इतना कह भगवान् महादेव ने पार्वती को बुला लिया। पार्वती आयी तो विद्युतकेश ने अपनी प्रार्थना उसके सामने उपस्थित कर दी। पार्वती ने पूछा, 'तुम इसके क्या लगते हो जो हम इसे तुम्हें दे दें ?'

'यह मेरा पुत्र है। मैंने इसे जन्म दिया है।"

'जन्म देने से कोई किसी का स्वामी अथवा माता-पिता नहीं बन जाता। अनेक वनस्पतियाँ हैं जो वनों में उत्पन्न होती हैं उनको जो भी उखाड़ कर ले जाता है, वह ही उसका स्वामी हो जाता है। माता-पिता तो उसके पालन-पोषण, शिक्षा-दीक्षा से बनते हैं। मैं उसे आपकी सन्तान नहीं मानती।'

'देवी ! हम निःसन्तान हैं।'

'वह तो मैं भी हूँ।'

'आपके एक सन्तान तो गणपति हैं।'

'वह अब सन्तान के पद से ऊपर हो गया है।'

'ऐसा तो यह भी कुछ वर्ष उपरान्त हो जायेगा।'

'जब हो जायेगा तब तुम इसे ले जाना। यदि इसकी इच्छा हुई तो आपके राज्य में जाकर राज्याधिकारी बन जायेगा।'

'तब आप आपत्ति नहीं करेंगी ?'

'सज्ञान पुत्रों पर माता-पिता का कुछ भी अधिकार नहीं रह जाता। यही हमको ज्ञात है। उस समय तो स्नेह का ही बन्धन रह जाता है, परन्तु इसका निर्णय करने में तो उस समय बालक स्वतन्त्र हो जाता है। बहुत-से ऐसे भी देखे हैं जो सज्ञात होने पर अपने पालन-पोषण करने वालों के साथ स्नेह करना छोड़ देते हैं। यह सज्ञान

—१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक का अधिकार होता है।'

"इस पर शिवजी ने निर्णय दे दिया, 'देखो विद्युतकेश ! तुमने इसको जन्म देने के लिये प्रयत्न नहीं किया था। तुम्हारे परस्पर भोग-विलास के परिणाम से यह बन गया तो विधि-विधान से बना है। यह तुम्हारा नहीं। अतः यह तुम्हारी इच्छा के विपरीत हुआ है।

'इसका प्रमाण यह है कि तुमने जन्म होते ही इसका त्याग कर दिया। मैं इसे तुम्हारा पुत्र नहीं मानता। शेष रहा यह कि यह तुम्हारे राज्य का उत्तराधिकारी हो। वह तो यह बिना पुत्र कहलाये भी हो सकता है। 'वीर भोग्या वसुन्धरा' की बात तुमने सुनी होगी। यदि यह वीर हुआ और इसकी इच्छा हुई कि यह उन द्वीपों का राज्य ले तो उनको प्राप्त कर लेगा।

'एक बात मैं कर सकता हूँ कि तुम इससे यहाँ आकर मिलते रहा करो। इससे यदि इसके मन में तुम्हारे प्रति किसी प्रकार का लगाव हुआ तो तुम इसे अपना राज्य स्वेच्छा से भी दे सकते हो। हम मना नहीं करेंगे।'

"इस निर्णय ने बात समाप्त कर दी और कुछ दिन वहाँ रहकर विद्युतकेश सपत्नीक वहाँ से अपने राज्य को लौट गया।"

इस दिन की कथा समाप्त हुई तो गरिमा ने पूछ लिया, "बाबा ! यह कथा सृष्टि उत्पत्ति के कितने काल उपरान्त की है ?"

"प्राणी-रचना तो बहुत पहले हुई थी। यह चाक्षुष मन्वन्तर में हुई थी। एक मन्वन्तर इकतीस करोड़ छियासठ लाख वर्ष का होता है।

"जगत-रचना को आरम्भ हुए पांच मन्वन्तर समाप्त हो चुके थे और तब छटा चाक्षुष मन्वन्तर चल रहा था। इस मन्वन्तर में पृथ्वी बनने के उपरान्त ठण्डी हो चुकी थी और इस पर वनस्पतियाँ उत्पन्न हो चुकी थीं। पशु भी उत्पन्न हो चुके थे।

"मानव-सृष्टि तो वर्तमान सातवें मन्वन्तर में कभी हुई है। इस पर इतना कहा जा सकता है कि इस चतुर्युगी के आरम्भ में मनुष्य एक बहुत बड़ी संख्या में यहाँ विद्यवान थे।

"परन्तु इस चतुर्युगी ने सतयुग और त्रेतायुग की संधि पर यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अति भयंकर जल-प्लावन हुआ था। उस जल-प्लावन के उपरान्त नयी सृष्टि हुई है। इस सृष्टि को हुए भी कई लाख वर्ष व्यतीत हो जाने पर वह काल आया था जिसका वृत्तान्त मैं अपनी कथा में बता रहा हूँ।

"व्यतीत काल इतना बड़ा है कि उसकी ठीक-ठीक गणना मनुष्य भूल गया है। कुछ एक ग्रन्थों में वर्णन किया गया है और उनको पढ़ने से ही हमें इतना मात्र ज्ञान है।"

"पर बाबा ! मैं तो वह जानना चाहती हूँ कि शिवजी, जिनको देवों के देव भी कहते हैं, वह कितनी बड़ी आयु के थे ? यह क्या वही हैं जो जब मानव-सृष्टि हो रही थी, तब भी थे ? इनकी पत्नी सती दक्ष की कन्या थी और दक्ष प्रजापति ब्रह्मा का पुत्र था। वह सतयुग में था। आपके कहे अनुसार यह प्लावन से पूर्व था तो फिर इस कथा काल में शिवजी की वयस तो लाखों वर्ष की होगी। यह सम्भव है क्या ?"

"यह सम्भव प्रतीत नहीं होता।" विष्णुशरण का उत्तर था, "यह नियम है कि जो उत्पन्न होता है, वह जरा अवस्था को प्राप्त होकर मरता भी है। इस कारण वह शिव जिसका ब्रह्मा के पुत्र दक्ष प्रजापति की लड़की सती से विवाह हुआ था और जिसकी पत्नी ने पति के अपमान से क्रुद्ध होकर आत्म-दाह कर लिया था, वह यह शिव नहीं था।

"मैं तो 'शिव' एक उपाधि मानता हूँ जो कैलाश देश के राजा को प्राप्त थी और जो आदि देव महादेव की सन्तति में से होता था। यह उपाधि आदि काल से चलती हुई महाभारत काल तक चलती प्रतीत होती है। तदनन्तर इस उपाधि को प्राप्त किये हुए कहीं लिखा नहीं मिलता।

"शिव महादेव की भाँति ही ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु पहले तो विशेष व्यक्तियों के नाम थे, परन्तु पीछे ये भी उपाधियाँ मात्र ही रही हैं। या तो उन स्थानों पर किसी प्रकार के विप्लव के कारण यह राज्य नहीं रहे और उपाधियाँ समाप्त हो गयी हैं अथवा इन महापुरुषों की सन्तान नहीं रही और उपाधि का कोई अधिकारी नहीं रहा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप इतने लम्बे काल तक इन राज्यों और उपाधियों की बात सत्य मानते हैं ?"

"मैं इसमें निर्णय नहीं दे सकता। मैं तो लिखी कथा का वर्णन कर रहा हूँ। यह तो तुम युवकों का अधिकार है कि इस विषय में खोज करो।"

"परन्तु आप यह क्यों नहीं मान लेते कि शिव, इन्द्र, विष्णु इत्यादि लोग तो काल्पनिक हैं। यह कथा काल्पनिक है और घटनायें काल्पनिक हैं।"

"मान लेता हूँ। तो क्या मैं यह मान लूँ कि मेरे पूर्वज निपट जंगली और गँवार थे ? उन गँवारों ने ही वेद कहे और महाभारत इत्यादि ग्रन्थ लिख दिये ? ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद और अन्य ज्योतिष, आयुर्वेद, धनुर्वेद इत्यादि की बातें उन अनपढ़, अनभिज्ञ गडरियों ने लिख दी हैं ?

"मैं तो यह भी मानने को तैयार हूँ, परन्तु उस मानने के उपरान्त यह भी मानना पड़ेगा कि आज के विद्वान् उन गडरियों से अधिक अनभिज्ञ और गँवार हैं। जब मैं वेदों में यह पढ़ता हूँ कि—

यो यज्ञो विश्वतस्तन्तुभिस्तत एकशतं देवकर्मेभिरायतः।
इमे वयन्ति पितरो य आययुः प्र वयाप वयेत्यासते तते ॥

"यह ऋग्वेद के दशम् मण्डल के १३०वें सूक्त का प्रथम मन्त्र है। यह जगत्-रचना आरम्भ का वर्णन करता है। इससे पूर्व सूक्त १२९ में जगत्-रचना से पूर्व की अवस्था का वर्णन है। उसमें लिखा है कि जगत्-रचना से पूर्व चारों ओर अन्धकार था। उस समय परमात्मा ने यह महान् यज्ञ अर्थात् प्रकृति के तत्त्वों से विश्व का निर्माण किया था। तब प्रकृति परमात्मा की कृपा से सर्वत्र, सक्रिय हो गयी। अन्य सब सोया हुआ था। इस मन्त्र में यह कहा है कि यह विश्व उस सोयी हुई प्रकृति के तत्त्वों से बना है। देवों (पंच-महाभूतों) के कर्मों से यह एक सौ (आयत) देव वर्ष तक बना रहता है। तब पितर अर्थात् पूर्व कल्प की आत्मायें यहाँ आती हैं और फिर ऊपर, भीतर और नीचे के प्राणियों की सृष्टि होती है। यह सृष्टि पर सम्वत्सरों और ऋतु इत्यादि का भोग करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह गडरियों और मूर्खों की बात मान लूँ तो आज के वैज्ञानिकों को क्या मानूँ ?

"देखो गरिमा ! तिथि काल जिसे अंग्रेज़ी में 'क्रोनोलॉजी' कहते हैं वह इतिहास का एक अंग है, परन्तु यह पूर्ण इतिहास नहीं। वास्तविक इतिहास का सर्वाधिक आवश्यक अंग है कथावस्तु, जिसमें मानव के आचार-विचार का वर्णन है। यह हमारे इतिहास में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। उसी का एक अंश बता रहा हूँ।"

: १२ :

गरिमा और महिमा अब दोनों बाबा द्वारा कहे कथानक को विस्तार से लिखने लगी थीं। बाबा नित्य कथा का कुछ अंश बताता था और दोनों बहनें बैठकर उस पर मुलम्मा चढ़ा लिख देती थीं। उन्होंने ऊपर के वृत्तान्त के पश्चात् लिखा—

"विद्युतकेश और सालकटंकटा देवलोक से लौट आये। आते हुए दोनों निराश थे। दोनों में सालकटंकटा की निराशा अधिक थी। उसकी निराशा का कारण तो यह था कि निःसन्तान होने से वह सदा भयभीत रहती थी कि कहीं उसका पति किसी अन्य युवती को सम्राज्ञी बना उससे सन्तान उत्पन्न न करले। निराशा का दूसरा कारण यह था कि उसने भोग-विलास की लालसा में अपनी सन्तान को मर जाने के लिये निर्जन स्थान पर छोड़ दिया था। उसे अब यह भी पता चला कि यदि वह राज्यप्रासाद में रहती हुई प्रसव करती तो वह अपने में वे दोष उत्पन्न न होने देती जो वहाँ एकान्त में प्रसव होने के कारण उत्पन्न हुए थे। इन दोषों के कारण ही उसके अन्य सन्तान नहीं हो रही थी।

"अब वह अपने पति से पहले से भी अधिक प्रेममय व्यवहार रखती हुई उसे अपने मोह-जाल से निकलने नहीं देती थी। साथ ही वह अपने पुत्र सुकेश के सुन्दर एवं तेजोमय मुख और शरीर की प्रशंसा कर पति की अभिरुचि उसकी ओर आकृष्ट करती रहती थी।

"परिणाम यह हुआ कि प्रति वर्ष वे देवलोक में महादेव और पार्वती से मिलने जाने लगे और वहाँ सुकेश से अपने सम्बन्ध सुदृढ़ करने लगे। विद्युतकेश को भी अनुभव होने लगा कि स्त्री के मोह में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फँसने का एक अल्प-काल ही होता है। वह काल व्यतीत होने पर वासनामय कामनायें शिथिल पड़ने लगती हैं और तब विवाहित जीवन के अन्य गुणों की कामना होने लगती है।

"यों तो सन्ध्या-पुत्री सालकटंकटा में अन्य भी कई गुण थे। वह संगीत, नृत्य, चित्रकला इत्यादि गुणों से भी विभूषित थी। गृह को सुखमय और सुन्दर बनाने में भी वह चतुर थी और वह किसी दूसरी युवा स्त्री को राजा के पास फटकने नहीं देती थी।

"इसका परिणाम यह हो रहा था कि विद्युतकेश घर के सुख-भोग का विचार छोड़ राज्य की ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगा था। अपने पिता के सुव्यवस्थित और धन-धान्य से परिपूर्ण राज्य में वह वृद्धि करने लगा। राज्य में वृद्धि तो इस कारण भी थी कि विद्युतकेश अपने राज्य का प्रलोभन इतना अधिक निर्माण करना चाहता था कि सुकेश विवश हो देवलोक को छोड़ दक्षिण द्वीपों के राज्य का भोग करने चला आये।

"प्रति वर्ष जब पति-पत्नी दोनों देवलोक में जाते थे तो सुकेश से मिलकर अपने राज्य के गुण गाते रहते थे।

"इस पर भी सुकेश को दक्षिण के राज्य में भ्रमण पर चलने के लिये तैयार करने में कई वर्ष लगे।

"सुकेश दक्षिण के द्वीपों में भ्रमण के लिये आया तो वहाँ उसके मनोरंजन और सुख-आराम का बहुत प्रबन्ध किया गया। उसके दिल बहलाने के लिये सैकड़ों नर्तकियाँ, संगीत में प्रवीण और मोह-जाल फैलाने वाली सुन्दर ललनायें उसके चारों ओर उसे घेरने के लिये एकत्रित कर दी गयीं। इस पर भी कई मास के प्रवास के उपरान्त वह निर्लेप भाव से ही देवलोक को लौट गया।

"यह प्रक्रिया जब कई वर्ष तक दोहरायी गयी और तभी वह देवलोक का मोह छोड़ दक्षिण के द्वीपों में रहने और वहाँ शासन करने के लिये तैयार हो सका।

"इस समय तक वह पच्चीस वर्ष की आयु का हो चुका था और दो माता-पिताओं के स्नेह से उच्छृङ्खल आचरण करने लगा था। सन्ध्या-पुत्री सालकटंकटा के चरित्र और विचारों के संस्कार जो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ में ग्रहण कर चुका था और देवलोक के नियन्त्रित जीवन के प्रभाव से अनुशासित आचरण। इन दो परस्पर विपरीत आचरणों को धारण कर ही वह संसार में अवतीर्ण हुआ। उसके देवलोक से प्राप्त व्यवहार के कारण देवलोक-निवासी ग्रामणी नाम्नी गन्धर्व स्त्री ने अपनी अति सुन्दर कन्या देववती से उसका विवाह कर दिया।

"यह विवाह पार्वती के प्रयत्न से हुआ था। जब सुकेश ने अपने पिता विद्युतकेश के राज्य को सम्भालने का विचार प्रकट किया तो उस समय पार्वती ने उससे कहा, 'तुम्हारे पिता ने सन्ध्या-पुत्री से विवाह कर लिया था और तुम भी उसी प्रकार के चरित्र की स्त्री के मोह-जाल में न फँस जाओ, इस कारण मैं तुम्हारा विवाह यहीं से ही कर देना चाहती हूँ।'

'माताजी! कर दीजिये। मुझे वहाँ की लड़कियाँ पसन्द भी नहीं।'

"तब पार्वती ने गन्धर्व कन्या से उसका विवाह कर दिया। सुकेश देववती को लेकर दक्षिण राज्य में चला आया। वहाँ वह पत्नी के साथ विहार करता हुआ पिता के राज्य में स्वेच्छा से भ्रमण करने लगा।

"ग्रामणी गन्धर्व स्त्री थी। उसको अपनी लड़की के पिता का नाम-धाम विदित नहीं था और यह रहस्य देववती को ज्ञात था। इस समाचार के संस्कारों से वह दक्षिण के राज्यों में आयी थी। इसने राक्षस वंश में एक नये तत्त्व का समावेश कर दिया इस तत्त्व से उस तत्त्व को सहायता मिली तो सालकटंकटा के माता के गृह के संस्कारों से प्रकट हो रहे थे।

"इसके अतिरिक्त सुकेश में एक अन्य दुर्गुण उत्पन्न हो गया था। जब सुकेश देवलोक से दक्षिण को प्रस्थान करने लगा था तब वह अपने माता-पिता पार्वती और महादेव से आशीर्वाद प्राप्त करने दोनों के सामने उपस्थित हुआ। उसने दोनों के चरण-स्पर्श कर आशीर्वाद माँगते हुए कहा, 'पिताजी! मैं दक्षिण के राज्य का कार्य-भार सम्भालने जा रहा हूँ। इस पर भी मैं सदा आपके पुत्र होने का गौरव मन में रखूंगा। इस कारण आपका संरक्षण और आशीर्वाद प्राप्त करना चाहता हूँ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"भगवान् शिवजी ने आशीर्वाद दिया और इस आशीर्वाद के रूप में अपना एक अति सुन्दर और सुदृढ़ विमान उसे भेंट में दिया। साथ ही कहा, 'तुम सदा विजयी रहो।' इन दोनों बातों ने उसमें अभिमान उत्पन्न कर दिया। वह देवों के देवता का आशीर्वाद प्राप्त कर और उपहार में एक विमान, जिसे वह स्वयं चला सकता था, लिये हुए दक्षिण में गया था। इसके साथ उसकी गन्धर्व पत्नी थी जो नृत्य, संगीत और स्त्री-सुलभ गुणों को प्रचुर मात्रा में रखती थी। परिणाम यह हुआ कि अनेकों गन्धर्व स्त्रियाँ और पुरुष वहाँ बुलाकर जन-जन में संगीत और कला का समावेश करने लगे।"

इस पर भृगुदत्त ने पूछ लिया, "बाबा ! शास्त्र में तो लिखा है कि गन्धर्व आनन्द मानवी आनन्दों से कई सहस्र गुणा अधिक होता है। परन्तु यहाँ आपने गन्धर्व कन्या के राक्षस राज्य-परिवार में आने को दोष-युक्त बताया है ?"

"हाँ ! गन्धर्व उस श्रेणी का नाम है जो गाने-बजाने, नृत्य, संगीत का कार्य करते हैं, परन्तु जब भी कोई कला प्रतिकार पाने के लोभ में चलायी जाती है तो वह पतन का साधन बन जाती है। गन्धर्व लोक में दोनों प्रकार के लोग थे। वे भी थे जो संगीत-कला का प्रयोग आत्म-विकास के लिये करते थे। ऐसे गन्धर्व देवलोक में बहुत आदर की दृष्टि से देखे जाते थे। ये लोग उद्गीथ गान करते थे और वह पुरस्कार पाने के विचार से नहीं होता था।

"परन्तु ऐसे गन्धर्व भी थे जो अपनी संगीत-कला का प्रयोग जीविकोपार्जन के लिये करते थे। इनको अपने संगीत एवं नृत्य में ऐसे भावों का समावेश करना होता था जो श्रोता और दर्शक-गण पसन्द करते थे। साथ ही इन संगीत करने वालों का सम्पर्क ऐसे लोगों से होता था जो कामनाओं से ग्रस्त इस मनोहर कला का भी कामनाओं की वृद्धि में ही प्रयोग करते थे।

"ग्रामणी ने इसी प्रकार के दूषित वातावरण में पड़ देववती को जन्म दिया था, तदनन्तर वह पार्वती के सम्पर्क में आकर भगवत्-भजन की शिक्षा में अपनी कला का प्रोग्राम करने लगी थी।

"देववती देवलोक में रहते हुए ही पिता-विहीन होने का अर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझ गयी थी। उसके मन में विवाह और पति-पत्नी के आचार-विचार के विषय में धारणाएँ ढीली होने लगी थीं।

"ऐसे विचारों के साथ उसका विवाह सुकेश के साथ हुआ। वह स्वयं तो एक सुन्दर, स्वस्थ, बलशाली युवक से विवाह होने के कारण अपने जीवन से सन्तुष्ट थी, परन्तु जो इतनी सौभाग्यशालिनी नहीं थीं, उनके विषय में वह छूट देने में संकोच अनुभव नहीं करती थी।

"इस विचार-शिथिलता का परिणाम यह हुआ कि जब दक्षिण के द्वीप संगीत एवं नृत्य से गूंजने लगे तो वैवाहिक सम्बन्ध ढीले पड़ने लगे और राज्य की ओर से इसमें बाधा की अपेक्षा प्रोत्साहन ही मिला।

"देववती ने बारी-बारी से तीन पुत्रों को जन्म दिया। सबसे बड़े का नाम माल्यवान, दूसरे का माली और तीसरे का सुमाली रखा गया।

"तीनों पुत्र बलवान, ओजस्वी और क्षत्रिय प्रवृत्ति वाले हुए। क्षत्रिय-प्रवृत्ति का अर्थ है कि कर्म करने में सदा तत्पर प्रवृत्ति अर्थात् कर्म करने के स्वभाव को यदि सात्विकी प्रवृत्ति का नियन्त्रण और दिशा-दर्शन न हो तो क्षत्रिय-प्रवृत्ति उच्छृङ्खल हो जाती है। दक्षिण द्वीपों में देवलोक से आने वाले रक्ष अपने साथ विद्वानों को नहीं ला सके थे और न ही वे देवलोक के वेद-विद्या के ज्ञाताओं के लिये अपने राज्य में आकर्षण उत्पन्न कर सके।

"समय पाकर माल्यवान, माली और सुमाली बड़े हुए और पिता के राज्य में वृद्धि करने लगे। वह भाग जो आजकल विन्ध्याचल के दक्षिण में है पूर्ण रूप से राक्षस-राज्य में आ गया।

"माल्यवान अभी अविवाहित ही था कि उसके पिता ने उसे राज्य-विस्तार के लिये समर पर भेजा। वह उन सब क्षेत्रों में जो नर्मदा नदी तक फैले हुए थे, गया और वहाँ से प्रत्येक प्रकार के दुर्लभ पदार्थों को बटोर कर ले आया। इन पदार्थों में कई सहस्र सुन्दर युवतियाँ भी थीं।

"जब वह इनको लेकर राजधानी श्रीलंका में पहुँचा तो पिता ने पूछा, 'इनको किसलिये ले आये हो?'

'विजित देश की ये विभूति थीं और इनसे अपने देश की शोभा बढ़ेगी।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बेटा ! यह तो ठीक है, परन्तु वहाँ के युवक इनकी सेवा से वंचित हो जायेंगे और वहाँ जनसंख्या कम हो जायेगी ।'

'पिताजी ! यह भी हमारे पक्ष में होगी । अधीनस्थ देश की तथा शत्रु-देश की जनसंख्या बढ़ने नहीं देनी चाहिये । अल्पसंख्यक देश को हम अपने अधीन सुगमता से रख सकेंगे ।'

'पर बेटा ! इनको अपने देश में रखोगे ? कहाँ ये सब युवा हैं, सुन्दर हैं और बिना पति के हैं । ये तो इस देश में वह व्यभिचार मचायेंगी कि यहाँ के लोगों का शौर्य और तपस्या क्षीण करने लगेंगी ।'

'तो ऐसा करता हूँ कि इनको अपने सैनिकों में वितरण कर देता हूँ ।'

'इससे तो झगड़ा खड़ा हो जायेगा । ये सब युवतियाँ एक समान गुण वाली नहीं और जिसको तुम गुणवान युवती दोगे, वह तो प्रसन्न होगा, परन्तु दूसरे तुमसे और उस सुन्दर युवती पाने वाले से रुष्ट हो जायेंगे । यह तो वैमनस्य का एक बहुत बड़ा कारण बन जायेगा ।'

'पिताजी ! इसका एक अन्य उपाय भी है । इनको नीलाम कर दिया जाये । जो किसी युवती का अधिक-से-अधिक मूल्य दे, वह उसको पा जाये ।'

'यह ढंग कुछ ठीक प्रतीत होता है ।'

"बस अगले दिन से युवतियों की एक-एक कर नीलामी की गयी और जिसने जिसका अधिक-से-अधिक मूल्य दिया, वही उस युवती का पति अर्थात् स्वामी मान लिया गया ।

"इससे अनेक परिवारों में द्वेष, ईर्ष्या और विद्रोह उत्पन्न होने लगा ।

"इस पर भी राक्षसराज की जनसंख्या बढ़ने लगी । उनकी उच्छृङ्खलता और उद्दण्डता में अपार वृद्धि हुई । जम्बू द्वीप के दक्षिणी भाग में अभी देवताओं और मानवों का पदार्पण नहीं हुआ था कि वे लोग जो देव समाज के कठोर नियमों का पालन करने में असमर्थ थे अथवा जो देवताओं के कष्ट-मय जीवन को हितकर नहीं मानते थे, वे देवलोक को छोड़-छोड़कर इस दक्षिणी भाग में आ वनों में बस गये । वे असंगठित लोग सुगमता से राक्षसों के अधीन हो जाते थे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राक्षस उनको विजातीय मान उनका उत्पीड़न करते थे।

"माल्यवान के प्रथम आक्रमण के पश्चात् तो स्त्रियों का व्यापार करने वाले बड़े-बड़े सेना-गुट्ट बना-बनाकर इन क्षेत्रों में भ्रमण करने लगे थे और जहाँ कहीं स्त्रियाँ मिल जातीं, उनको पकड़ अपने देश में ले जाकर वेचने लगे थे।

"इसके परिणामस्वरूप जम्बू द्वीप के पूर्ण दक्षिणी भाग में कोहराम मच गया। लोग राक्षसों की गंध पाते ही घरों को छोड़ अपनी स्त्रियों को ले वनों में छिप जाते थे।

"इसका एक परिणाम यह भी हो रहा था कि देश में नगरों की संख्या कम हो रही थी। देहात और छुट-पुट सैनिक-बस्तियाँ रह गयी थीं। कभी उनसे युद्ध भी होता था, परन्तु संख्या में कम और साधन-विहीन होने के कारण असंगठित राक्षस-सैनिकों का विरोध नहीं कर सकते थे। अतः राक्षसों के आने की सूचना मिलते ही वे अपनी बस्तियों को छोड़ वनों में जा छुपते थे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय परिच्छेद

प्रज्ञा और वेदस्वरूप बिलासपुर में ही टिके थे। प्रज्ञा ने अपने पति को इस कारण बुलाया था कि अमृतसर के भीड़-भाड़ वाले वातावरण से निकल वह कुछ विकास कर सकेगा, परन्तु इसका प्रभाव एक दूसरी दिशा में भी हुआ। वेदस्वरूप विष्णुशरण की संगत में रहता हुआ अपने जीवन की व्यर्थता एवं मिथ्यात्व को भी समझने लगा था।

एक बार जब उसके मन में यह बात बैठ गयी कि संसार में सब लोग अपने ही कल्याण अथवा अकल्याण का प्रयास करते हैं तो उसके चित्त का अहंकार मिटने लगा था कि वह लोक-सेवा का कार्य कर रहा है। यह वह मानने लगा था कि कहा जाने वाला लोक-कल्याण वास्तव में उसके स्व-कल्याण के अर्थ ही है। जब यह अहंकार मिटा तो वह विचार करने लगा था कि दूसरों की सेवा करने में दूसरे के हानि-लाभ का विचार छोड़ दे तो उसका अपना क्या स्वार्थ है? इस दिशा में भी विष्णुशरण ने उसे संकेत किया था। संसार को सुखप्रद, स्वच्छ, सुन्दर और समाज को धर्मयुक्त बनाने में उसका अपना कल्याण है और उसका अपना जीवन सुखद होता है।

इस पर प्रश्न उत्पन्न हुआ कि वर्तमान शिक्षा से डाक्टर, इंजीनियर, कलाकार और कर्मकार निर्माण करने में समाज सुखद बन रही है। विद्यार्थियों के हुल्लड़, क्लर्कों और कर्मचारियों की हड़तालें और घेराव, राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं की तोड़-फोड़ और बुद्धिविहीनता क्या समाज और देश में सुख और शान्ति निर्माण कर रही है?

इसके साथ उसके मन में यह प्रश्न भी उत्पन्न हुआ कि जब वह अपने सार्वजनिक कार्यों में भी कर्मचारियों को रिश्वत देकर काम कराता है तो वह समाज को विकृत नहीं कर रहा क्या? और इस विकृत समाज में रहता हुआ क्या वह सुख-भोग की आशा कर रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ? वह स्वयं धन-सम्पद् युक्त होने से छल, बल और रिश्वत से अपने लिये सुख प्राप्त कर रहा है, परन्तु यह समाज को उत्तरोत्तर पतन की ओर ले जाने में सहायक हो रहा है और वह दिन दूर नहीं जब इस पतित समाज में भयंकर विस्फोट होगा और धनी, निर्धन सब विनाश को प्राप्त होंगे।

एक दिन विष्णुशरण ने फ्रांस की प्रथम क्रान्ति का दृश्य तथा रूस की सन् १९१७ की क्रान्ति का दृश्य चित्रित कर वेदस्वरूप को बताया कि भारत में भी यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है और इस स्थिति के लाने में उसका भी सहयोग हो रहा है। कष्ट और क्लेश तो पूर्ण समाज को होगा और अपने जिस कार्य को वह कल्याणकारी मान रहा है, वह वास्तव में उसे घोर नरक में ले जाने वाला सिद्ध होगा।

"तो मैं क्या करूँ ?"

"तुम अपने को इस समाज को पतन की ओर ले जाने वाले कुमार्ग से बचाओ। अपने समीप जो तुम्हारे अधीन हैं उनको सुधारने का यत्न करो। कार्य की मात्रा का ध्यान छोड़ कार्य की श्रेष्ठता की ओर चित्त लगाओ। यदि तुम अपने बच्चों को श्रेष्ठ, सद्चरित्र और सुन्दर, सुडौल बना सको तो इतना भी पर्याप्त है। यह तुम्हारा परलोक सुधारेगा। सहस्रों बालकों को सुख-सुविधा पहुँचाने के लोभ में पूर्ण समाज को नरक का मार्ग दिखाकर तुम कल्याण की क्या आशा कर सकते हो ?"

वेदस्वरूप के मन में क्रान्ति उत्पन्न हो गयी। जब वह बिलासपुर में दस दिन रहकर अमृतसर लौटा तो पहली बात उसने जो की थी वह थी अपने बच्चों को घर पर पढ़ाने का प्रबन्ध; और फिर उसने स्वयं कालेज कमेटी से त्याग-पत्र दे दिया।

बाबा से सुनी कथा महिमा लिख रही थी—

"सुकेश प्रसन्न था। उसके पुत्र अपने शौर्य से अपार धन-सम्पदा एकत्रित कर दक्षिण द्वीपों में ला रहे थे। वह धन राज्य-परिवार और सैनिकों में वितरण होता था और जब भोग-विलास में व्यय होता था तो सामान्य जनता में पहुँच जाता था। इस पर भी इसका बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ा अंश शिथिल चरित्र वाली स्त्रियों में वितरण होता था। ये स्त्रियाँ धन के लोभ में सायंकाल होते ही नगरों की वीथिकाओं में घूमती रहती थीं और युवक उनका क्रय करते रहते थे। क्रय एक रात के लिये, मास के लिये अथवा वर्षों के लिये भी होता था। जब किसी स्त्री का क्रय लम्बे काल के लिए होता तो वह उस युवक की पत्नी समझ ली जाती थी। नगर ऐसी विवाहित एवं अविवाहित स्त्रियों से भरे पड़े थे।

"परिणाम यह हो रहा था कि कुछ थोड़े से भले लोग जो शान्ति और व्यवस्था पसन्द करते थे, राक्षस नगरों को छोड़-छोड़ वनों में जाने लगे थे। ये स्वेच्छा से बने वनचर भी बस्तियाँ बना-बना रहने लगे थे। एक ऐसी ही बस्ती को पूर्ण रूप से विनष्ट और उसमें मानव अस्थियों के ढेर लगे देख सुकेश ने अपने अंगरक्षक से पूछा, 'यह सब क्या है ?'

"अंगरक्षक ने अस्थियों को पहचान कर कह दिया, 'महाराज ! ये मानव अस्थियाँ हैं।'

'परन्तु इतनी एक ही स्थान पर एकत्रित ये अस्थियाँ तो यह प्रकट करती हैं कि यहाँ कोई गाँव अथवा नगर था।'

'हाँ महाराज ! ऐसा ही समझ में आ रहा है।'

'परन्तु यह स्थान तो हमारे राज्य में है, यह विनष्ट कैसे हुआ ?'

"अंगरक्षक ने इस बात से अपनी अनभिज्ञता प्रकट की तो सुकेश ने आज्ञा दी कि इसकी जाँच की जाये।

"सुकेश अपने राज्य में भ्रमण के लिए निकला हुआ था। वह अपने विमान में घूम रहा था। स्थान-स्थान पर वह जाता था और विमान से उतर वहाँ के क्षेत्र का निरीक्षण करता था।

"इस भ्रमण में उसे एक अन्य बात दिखायी दी। एक स्थान पर कोसों तक समतल क्षेत्र फैले थे, परन्तु उन पर कृषि-कर्म किये अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके प्रतीत होते थे। महाराज ने अपने अंगरक्षक भद्रक से पूछा, 'यहाँ कोई कृषि-कार्य क्यों नहीं किया जा रहा ?'

'कोई खेती-बाड़ी करने वाला नहीं है।'

'परन्तु वह समीप ही गाँव तो है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तो वहाँ रहने वालों से पता करता हूँ।'

'हाँ, चलो हम भी चलते हैं।'

"महाराज और उनका अंगरक्षक चल पड़े। गाँव लोगों से भरा पड़ा था। दुकानें भी थीं और बहुत-सी हवेलियाँ भी थीं। सुकेश ने भद्रक से कहा, 'किसी को हमारे सामने लाओ। हम इस रहस्य को स्वयं जानना चाहते हैं।'

"अंगरक्षक महाराज के सामने एक अर्धायु के पुरुष को ले आया। वह व्यक्ति सामने आया तो सुकेश ने पूछ लिया, 'क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ?'

'मैं यहाँ का नायक हूँ। नाम 'शेष' है।'

'नायक महोदय! इस गाँव का क्या नाम है?'

'भगवन्! आप परदेशी प्रतीत होते हैं?'

"सुकेश ने अपने पद को छुपाते हुए कहा, 'हाँ. मैं देवलोक का रहने वाला हूँ।'

'आप यहाँ किस प्रयोजन से आये हैं?'

'केवल भ्रमण करने। भूमण्डल के भिन्न-भिन्न स्थानों पर रहने वालों के आचार-विचार एवं भाव जानने के लिये।'

'यहाँ सब लोग सुखी हैं। सब प्रसन्न हैं और सबके घर धन-धान्य से भरपूर हैं।'

'धान्य कहाँ से आता है यहाँ? गाँव के बाहर के खेत तो सूने पड़े हैं।'

'हम अन्न आदि सागर पार के प्रायः द्वीप से लेकर आते हैं।'

'और यहाँ कृषि-कार्य क्यों नहीं होता?'

'कृषि पर परिश्रम अधिक करना पड़ता है और लाभ कम होता है। वहाँ से अन्नादि हम बहुत कम मूल्य पर ले आते हैं।'

'अभिप्राय यह हुआ कि वहाँ की भूमि सुगमता से अन्न देती है?'

'हाँ भगवन्! वे भूमि में कुछ ऊपर से डालते हैं और उससे खेतों में कम परिश्रम से अधिक उपज होती है।'

'परन्तु इस गाँव वालों के पास अन्न क्रय करने के लिये धन कहाँ से आता है?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'यहाँ का स्त्री-समाज परिश्रम करता है और उसके सामान्य-से परिश्रम से भारी लाभ होता है।'

'वे क्या परिश्रम करती हैं ?'

'राजधानी में जाती हैं और वहाँ के पुरुषों का अर्जित धन बटोर लाती हैं।'

"सुकेश समझ गया कि यह वेश्याओं का गाँव है। उसने पुनः पूछा—

'तुम्हारी अपनी विवाहित पत्नियाँ नहीं हैं ?'

'हम इनका ही प्रयोग करते हैं। हमें विवाहित जीवन भारी झंझट-सा प्रतीत होता है।'

"सुकेश के देवलोक के संस्कार जाग्रत होने लगे थे और वह इस सबका बहुत बुरा परिणाम समझने लगा था। उसने एक अन्तिम प्रश्न पूछा, 'इन स्त्रियों को सन्तान तो होती होगी ?'

'बहुत कम। कभी कोई स्त्री गर्भवती होती है तो हम उसे सागर में ले जाकर डुबो देते हैं।'

'ऐसा क्यों करते हो ?'

'उसको एक वर्ष तक बिना आय के खिलाना-पिलाना पड़ता है।'

'परन्तु ये स्त्रियाँ जब बूढ़ी हो जायेंगी और नवीन सन्तान होगी नहीं तो फिर यह कारोबार कैसे चलेगा ?'

'आप सत्य हीं देवलोक के प्राणी प्रतीत होते हैं। हम जब अन्न आदि मुख्य भूमि के खण्ड से लाते हैं तो उनके स्त्री-वर्ग को भी धन का लोभ देकर ले आते हैं। यदि कोई अति सुन्दर हुई और धन के प्रलोभन में फँस नहीं सकी तो उसे बलपूर्वक उठा लाते हैं।'

: २ :

"अंगरक्षक को लेकर सुकेश राजधानी को लौट आया। वहाँ पहुँचते ही उसने अंगरक्षक से कहा, 'मालूम करो कि वह उजड़ा गाँव कौनसा है जहाँ अस्थियों के ढेर लगे थे ? साथ ही यह पता करना कि वह गाँव किस प्रकार उजड़ा है ?'

"इस समय माल्यवान अपने दोनों भाइयों सहित जम्बू द्वीप के दक्षिण भाग से भूमि-कर एकत्रित करने गया हुआ था। पीछे का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रबन्ध वहाँ का मुख्य मन्त्री करता था। भद्रक मुख्य-मंत्री के पास गया और उसने बड़े महाराज के भ्रमण में एक गाँव के विनष्ट होने के उपरान्त पड़े अवशेषों की बात बता कर कहा, 'महाराज चाहते हैं कि उस गाँव का नाम और उसके विनष्ट होने का कारण बताया जाये।'

"महामन्त्री निकुम्भ ने कहा, 'महाराज से कह दो कि राज्य की सूचना केवल उनके पुत्र राजकुमार माल्यवान को दे सकता हूँ।'

'पर वह अभी तक यहाँ के राजा हैं।'

'होंगे। मेरी नियुक्ति राजकुमार माल्यवान ने की थी। सेना उनका कहा मानती है। इस कारण मैं सर्वोच्च राज्याधिकारी उनको ही मानता हूँ।'

"अंगरक्षक सूचना लेकर आया तो सुकेश मुख देखता रह गया।

"माल्यवान की वयस इस समय इक्कीस वर्ष की हो चुकी थी। उसका छोटा भाई माली बीस वर्ष और सुमाली अट्ठारह वर्ष की वयस का था। सुकेश का अपना विवाह चौबीस वर्ष की आयु में हुआ था।

"जब वह दक्षिण राज्य में आया था तो उसका पिता पचास वर्ष की आयु का था। उसने स्वेच्छा से अपने पुत्र के हाथ में राज्य दे दिया था। कदाचित् वह इसे राज्य-कार्य में व्यस्त कर देवलोक लौट जाने से रोकना चाहता था।

"सुकेश ने वहाँ देवलोक की धर्म-व्यवस्था चलाने का यत्न किया था, परन्तु उसकी माता को वहाँ की व्यवस्था पसन्द नहीं थी। वह तो हेति के काल में प्रचलित व्यवस्था को श्रेष्ठ मानती थी। उससे ही राज्य का विस्तार विद्युतकेश के काल में हुआ था। इस कारण वहाँ का प्राचीन आचार-विचार ही चलता रहा था।

"एक बात का चलन तो सुकेश को भी पसन्द था। वह था जन-जन में संगीत, नृत्य-कला का अबाध प्रचार। ये ललित कलाए जब जनसाधारण में प्रचलित हुई तो उनकी रुचि अनुसार उनका प्रयोग होने लगा। जब देवलोक से गन्धर्व और वहाँ का स्त्री-वर्ग बुलाकर

—११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी कलाओं का प्रचार आरम्भ किया गया तो गन्धर्व लोक के उस प्रकार के कलाकार वहाँ आये। वासनाओं को उत्तेजना देने वाली कलाओं का प्रदर्शन होता था। उद्गीथ गान करने वालों की जन-साधारण में माँग नहीं थी। अतः वासनामय कलाओं का प्रचार व्यापक रूप में हो गया। इनका प्रचार बढ़ने लगा और सुकेश की चलायी प्रथायें प्रभावहीन होने लगीं।

"सुकेश अपने विमान में भ्रमण का बहुत लोभी था और जबसे माल्यवान राज्य-कार्य सम्भालने लगा था, वह सर्वथा निश्चिन्त हो भूमण्डल के दर्शन में लीन हो गया था।

"दो वर्ष बाद उसके मन में अपने राज्य के दर्शन की इच्छा हुई। पहली ही बात जो उसकी दृष्टि में खटकी, वह थी एक पूर्ण गाँव का जलकर भस्म होना और उसके बाहर एक बहुत बड़ा मानव-अस्थियों का ढेर। इसी भ्रमण में उसे दूसरी बात यह पता चली कि एक गाँव के लोग वेश्यावृत्ति को कृषि-कार्य से अधिक लाभदायक मानते हैं।

"इन बातों से वह मानो एक सुख-स्वप्न से जाग पड़ा और राज्य की अवस्था जानने के लिये उद्यत हो गया। उसने मुख्यमंत्री से पता किया तो वहाँ उसे एक बाहरी व्यक्ति मान राज्य-कार्य के विषय में बताने से इन्कार कर दिया गया।

"इस इन्कार के आते ही उसने राजधानी में डुग्गी पिटवा दी कि यदि किसी को राज्य से किसी प्रकार की शिकायत हो तो वह बड़े महाराज के दरबार में उपस्थित हो याचिका कर सकता है।

"इसके उपरान्त उसे सूचना मिली कि डुग्गी पीटने वाले को पकड़कर मुख्याधिकारी के सम्मुख उपस्थित किया गया है और उसे दो वर्ष के कारावास का दण्ड दिया गया है। सुकेश ने कारावास के अधिकारी को उस डुग्गी पीटने वाले को छोड़ देने की आज्ञा भेजी तो उसने इन्कार कर दिया। सुकेश ने मुख्याधिकारी को अपने आगार में बुलाया तो उसने बहाना बना दिया, 'मैं इस समय एक आवश्यक राज्य-कार्य से नगर के बाहर जा रहा हूँ। इस कारण आ नहीं सकता।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

''यह विद्रोह की पराकाष्ठा थी। वह समझ गया कि चुपचाप उसको राज्य-पद से हटा कर माल्यवान स्वयं राजा बन गया है।

''इस पर वह अपनी पत्नी देववती के आगारों में जा उसके पुत्रों पर आरोप लगाने लगा।

''देववती वे कहा, 'आपने कितने ही वर्षों से राज्यकार्य में हस्त-क्षेप नहीं किया। इस कारण सब राज्याधिकारी यह समझते हैं कि राजा आप नहीं, वरंच आपके पुत्र हैं। अब दो-तीन वर्ष के उपरान्त आपको यह क्या विचार आया है कि राज्य-कार्य में झाँकने लगे हैं?

'क्या आपको किसी प्रकार का कष्ट है? खाने-पीने, पहनने अथवा निवास के विषय में आपको कुछ त्रुटि प्रतीत होती है?'

'मुझे कुछ भी कष्ट नहीं। परन्तु प्रजा को तो कष्ट हो सकता है।'

'हाँ। परन्तु उनको जो राजाज्ञा का उल्लंघन करते हैं।'

'यही तो जानना चाहता था कि उस गाँव का विनाश किसने किया है?'

'मैं जानती हूँ कि वहाँ क्या और कैसे हुआ है?'

'क्या हुआ है?'

'आपके पिता ने आपको शिव-शक्ति नाम का एक अस्त्र दिया था। वह यहाँ बेकार पड़ा था। एक दिन माल्यवान ने मुझसे पूछा कि यह क्या है? मैंने बताया कि आपके पिता महादेव जी का त्रिशूल है। मैंने इसका गुण बताया कि यह नगर-के-नगर भस्म कर सकता है। उसने पूछा—'मैं इसकी परीक्षा कर देखूँ?'

'दुष्टों पर करना।'

'माँ! पहले इसके प्रयोग का ढंग तो सीख लूँ। कहीं शत्रुओं पर इसका प्रयोग करूँ तो यह उनको भस्म करने के स्थान मुझको ही भस्म न कर दे।'

'मैंने उसके प्रयोग का ढंग सिखाया तो वह एक दिन उसे लेकर चला गया। सायंकाल वह लौटा तो बताने लगा कि आपके पिता के नाम पर बसी नगरी कैलाशवती को वह भस्म कर आया है।

'उसने गाँव के रहने वालों को कहा था कि सब गाँव छोड़कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहर आ जायें। वे एक स्थान पर एकत्रित हुए तो माल्यवान ने शिव-शक्ति गाँव पर छोड़ी। शक्ति गाँव पर तो पड़ी, परन्तु साथ ही उन एकत्रित हुए लोगों पर भी जा गिरी और वे जहाँ खड़े थे, बाल-बच्चों सहित सब-के-सब जलकर भस्म हो गये।'

'तुमको यह सब विदित था, परन्तु तुमने मुझे बताया नहीं। यह कब की बात है?'

'पिछले वर्ष की है। माल्यवान से भूल यह हुई थी कि उसे शक्ति का लक्ष्य बाँधना नहीं आया।'

'तो उसे मुझसे इसका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए था।'

'मैंने उसे समझाया था, परन्तु मुझे विदित नहीं था कि वह उसी समय उसकी परीक्षा लेने चला जायेगा। बाद में उसने मुझे बताया तो मैंने समझाया कि भूल क्या हुई है? वह समझ गया था और मैं समझती हूँ कि अब वह भूल नहीं करेगा।'

'वह शक्ति अब कहाँ है?'

'वह समर पर साथ ले गया है।'

'परन्तु उसका प्रयोग नागरिकों पर अथवा मित्र नगरों पर करना वर्जित है।'

'तो किस पर किया जाये?'

'जो वास्तविक अर्थों में दुष्ट हो, शत्रु हो और अपने से अधिक शक्तिशाली हो। वह दिव्य शक्ति है और उसका प्रयोग दिव्यास्त्रों के विरोध में ही करना चाहिए।'

'जब हाथ में इतनी अद्‌भुत शक्ति है तो उसका प्रयोग भी तो करना चाहिए।'

'तुम नहीं जानतीं, देववती।'

'अब तो मैंने वह दे दी है। जब माल्यवान आयेगा तो उसको उसके प्रयोग के विषय में बता दीजिये। मुझे इस शर्त का ज्ञान नहीं था और मैंने उसको इस विषय में कुछ नहीं बताया।'

"सुकेश ने एक दूत माल्यवान के पीछे-पीछे भेजा जो उसे उसके प्रयोग के विषय में समझा सके। परन्तु इस शक्ति के शत्रु पर प्रयोग की बात के अतिरिक्त भी तो समस्या उत्पन्न हो गयी थी। एक तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्य में अनाचार की वृद्धि हो रही थी और दूसरे उसके जीवन-काल में ही उसके पुत्र ने उसे राज्य से पृथक् कर दिया था।

"इस विषय पर विचार करने के लिए वह अपने आगारों को चला गया, परन्तु उसकी डुग्गी पिटवाने का प्रभाव हुआ था। डुग्गी राजधानी के एक छोटे-से भाग में ही हो सकी थी। पूर्ण नगर में डुग्गी होने से पहले ही डुग्गी करने वाला पकड़ लिया गया था। उस सीमित क्षेत्र में भी कुछ लोग ऐसे थे जिन्होंने डुग्गी सुनी थी और अपना कष्ट बताने राज्यप्रासाद में आ गये थे।

"जब सुकेश अपनी पत्नी के आगारों से निकलकर अपने आगारों को जा रहा था तो राज्यप्रासाद के द्वार पर बहुत जनों के एकत्रित होने का समाचार मिला। मार्ग में ही द्वारपाल ने सामने उपस्थित हो बताया, 'कुछ लोग श्रीमान् से मिलने के लिये आये हैं।'

'क्या चाहते हैं?'

'कहते हैं कि नगर में डुग्गी पीटी गयी है कि यदि राज्य में किसी को कोई कष्ट हो तो आपकी सेवा में उपस्थित हो बताये। एतदर्थ पचास के लगभग लोग द्वार पर उपस्थित हैं।'

"सुकेश प्रासाद की बाहरी बैठक की ओर लौट पड़ा। उसने इन नागरिकों के कष्ट को सुनने का विचार बना लिया। उसने बैठक में पहुंच द्वारपाल को यह आज्ञा दे दी कि बाहर खड़े जनों को एक-एक कर भीतर भेज दो। हम इनसे मिलेंगे।

"द्वारपाल कुछ क्षण उपरान्त ही अकेला लौट आया और बताने लगा कि नगर के मुख्याधिकारी ने घुड़सवार भेज इन एकत्रित हुए लोगों पर छोड़ दिये हैं और वे सब घरों को भाग गये हैं। बहुत घोड़ों के पाँव-तले कुचलने से घायल हो गये हैं। एक का तो प्राणान्त हो गया है।

"इस समाचार से सुकेश को बहुत आघात पहुँचा। उसको समझ आया कि देवलोक में लोग वृद्ध होने से पूर्व ही वानप्रस्थ और संन्यास ले लेते हैं। वे ठीक ही करते हैं। यद्यपि वह अपने में वानप्रस्थ लेने की रुचि नहीं रखता था, परन्तु वर्तमान अनादर की अवस्था को वह सहन नहीं कर सका। उसने विचार किया कि वह किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन में जाकर अपना शेष जीवन वहीं व्यतीत करे। परन्तु वहाँ क्या कार्य करे ? उसे विदित नहीं था। देवलोक में तो वानप्रस्थी परमात्मा की उपासना करते हैं। वह उपासना का ढंग नहीं जानता था। उसके देश में कोई ऋषि-आश्रम भी नहीं था जिसमें जाकर रह सके और वहाँ उपासना का ढंग सीख सके। अतः वह पुनः देवलोक में जाकर रहने का विचार बना बैठा।

''इतना विचार कर उसने देववती को अपने आगारों में बुलाया और उसे अपना विचार बताया। देववती इस विचार को सुन स्तब्ध मुख देखती रह गयी। उसे मौन देख सुकेश ने कहा, 'मैं कैलाश ग्राम को लौट जाना चाहता हूँ और वहाँ किसी ऋषि-आश्रम में रहता हुआ परमात्मा की उपासना करूँगा।'

'परन्तु ऐसा क्यों करेंगे ?'

'यहाँ अब मेरा शासन नहीं रहा। मैं जो भी आज्ञा देता हूँ यहाँ का मुख्याधिकारी उसका विरोध करता है। सब सेना उसके अधीन है और वह मुझे मेरी आज्ञा का अनौचित्य न बताकर उसके विरोध के लिये सैनिक भेज देता है। इससे मैं यह समझा हूँ कि अब इस देश में मेरा राज्य नहीं रहा। इस कारण मैं इसको छोड़ देना चाहता हूँ।'

'तो ऋषि-आश्रम में जाकर रहने की क्या आवश्यकता है ? चलिये, किसी अन्य स्थान पर चलें और वहाँ अपना नया राज्य निर्माण करें। अभी तो आप बूढ़े नहीं हुए और चाहें तो एक नवीन राज्य स्थापित कर सकते हैं।'

'मुझे अब राज्य में रुचि नहीं रही।'

'तो फिर यहाँ पर ही रहिये और दूसरों को राज्य करने दीजिये। इस सुहावने और सुखप्रद देश को छोड़कर उस शीतमय देश में जाकर रहने में क्या लाभ होगा ?'

'वहाँ कामनायें नियन्त्रण में रहती हैं और यहाँ का जलवायु कामनाओं को उभारता है।'

'परन्तु श्रीमान् ! कामनायें मन का विषय नहीं है क्या ? भला स्थान बदलने से अथवा बाहरी गर्मी-सर्दी से उसका क्या सम्बन्ध हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है ?'

'मैंने जहाँ राज्य किया है वहाँ एक द्वारपाल से भी नीची स्थिति में रहते मुझे आत्मग्लानि होती है।'

'इसी से तो कहती हूँ कि चलिये, कहीं अन्यत्र स्वतन्त्र राज्य स्थापित करें। यदि आपकी इच्छा हुई तो आप वहाँ एक नया विवाह भी कर सकते हैं और वहाँ के राज्य के नवीन उत्तराधिकारी उत्पन्न कर सकते हैं।'

'जिससे फिर समय पाकर वहाँ से निकाल दिया जाऊँ ? मुझे अब उत्तराधिकारियों को उत्पन्न करने में भी रुचि नहीं रही।'

'तो आप यहीं रहिये और मैं देखूँगी कि आपको किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट न हो।'

"सुकेश की बुद्धि पिछले तेईस-चौबीस वर्ष के राक्षस देश में रहते हुए कुण्ठित हो रही थी। उसने भूमण्डल में घूमते हुए कभी जीवन की समस्याओं पर विचार ही नहीं किया था। अतः भोग-प्रिय पत्नी की बातों का वह उत्तर नहीं दे सका।

"पति को निरुत्तर हो मौन देख देववती ने उठते हुए कहा, 'आज मेरे यहाँ दूर देश की एक नर्तकी आयी हुई है और उसका रसमय नृत्य देखने के लिये मैं लालायित हो रही हूँ। यदि इच्छा हो तो आप भी आइये। उसे देखियेगा तो मन बहल जायेगा।'"

: ३ :

"सुकेश के मन में वैराग्य उत्पन्न नहीं हुआ था। वह तो अपने को राज्य-पद से च्युत किये जाने का रोष था। अपना रोष देववती के प्रिय पुत्रों पर न निकाल सकने के कारण वहाँ से पलायन करने की बात विचार कर रहा था। इस कारण वह अपनी योजना चला नहीं सका था। वह देववती के आगारों में गया तो वहाँ एक दूर द्वीप से आयी कुम्भी नामक नर्तकी नृत्य के लिये आई हुई थी। नर्तकी के नूतन नृत्य एवं इस सुन्दर युवती की भाव-पूर्ण नृत्य-मुद्राओं के मनोरम दृश्य में वह अपना मानसिक कष्ट भूल गया। अब वह दिनानुदिन उस रस-मय वातावरण में राज्य और पुत्रों के अनाचार को विस्मरण कर पड़ा रहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इस पर भी स्थिति सामान्य नहीं रही।

"माल्यवान गाँव और नगर भस्म करता हुआ चला जा रहा था। महादेव की दी हुई शक्ति इतनी उपयुक्त और सहज प्रयोग की जाने वाली सिद्ध हुई कि वह यह समझने लगा कि वह इन्द्र-पद पा गया है। उसका विरोध करने वाला कोई नहीं रहा। एक समय तो उसके मन में विचार आया कि उस शक्ति के आश्रय तो वह देवलोक पर भी अधिकार कर सकता है। इस बार उसने जो विनाशकारी कार्य किये उससे तो पूर्ण जम्बू द्वीप में हलचल मच गयी।

"परन्तु माल्यवान देवलोक की समर पर जा नहीं सका। वह इस कारण कि उसकी शक्ति ने कार्य करना छोड़ दिया था। वास्तव में उसमें की अग्नि शान्त हो गयी थी अथवा उस शक्ति के तुणीर में शक्ति-शर समाप्त हो गये थे। इससे निराश हो वह वापस अपनी राजधानी को लौट आया।

"माल्यवान लौटा तो उसे अपने पिता में एक नवीन प्रकृति का ज्ञान हुआ। पहले जब कभी देववती को पति की संगत की इच्छा होती थी तो वह पति के आगारों में जाया करती थी और अब तो पिता माता के आगारों का स्थायी निवासी हो गया था।

"माल्यवान अपने समर में की गयी लूट को अधिकारियों के पास छोड़ माता के समीप पिता को बैठा देख विस्मित रह गया। देववती ने पुत्र को देख कहा, 'आओ, माल्य ! सुनाओ कब आये हो ?'

"माल्यवान ने आगार में आ माता-पिता दोनों के चरण-स्पर्श किये और सम्मुख बैठ कहा, 'मुझे अब पिताजी के चरण-स्पर्श करने उनके आगारों में जाना नहीं पड़ेगा। उनके दर्शन का सौभाग्य यहीं प्राप्त हो गया है।'

'हाँ। तुम्हारे पिता जीवन से कुछ उदास हो विरक्त भावना ग्रहण कर रहे थे। मैंने अभी इनकी आयु वैराग्य की न देख इनको यहीं बुला लिया है और मुझे प्रसन्नता है कि मैं इनमें राग उत्पन्न करने में सफल हो रही हूँ।'

"अब बातों का सूत्र सुकेश ने अपने हाथों में लेकर कहा, 'मुझे यह जान कि तुमने बिना मुझको बताये और किसी प्रकार की सूचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिये मुझे राज्यच्युत कर दिया है, मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया था। अब तुम्हारी माँ ने समझाया है कि वैराग्य और विरक्तता अस्वाभाविक हैं। मुझे भी कुछ ऐसे ही समझ आने लगा है।'

'परन्तु पिताजी ! आपकी शक्ति तो अब कार्य करती ही नहीं।'

'दिखाओ तो। वैसे तो जो वस्तु बनी है वह नष्ट भी होगी, परन्तु वह इतनी जल्दी सर्वथा क्रियाहीन हो गयी है; इसकी आशा नहीं थी।'

''माल्यवान ने वह शक्ति दिखायी तो सुकेश भी समझ नहीं सका कि क्या हो गया है? इस शक्ति को देख सुकेश ने पूछ लिया, 'कितनों को इसका रसास्वादन कराया है?'

'पिताजी ! एक गाँव तो यहीं भून डाला था और अपने राज्य की वृद्धि में यह अति सहायक सिद्ध हुई है। मेरा विचार था कि इस शक्ति से तो मैं पूर्ण देवलोक को फूंक दूंगा और वहाँ की सब अप्सराओं को यहाँ ले आऊँगा।'

'यहाँ लाकर क्या करते?'

'अपने नगरों को सुन्दर स्त्रियों से सुशोभित करता।'

'परन्तु उनको खाने-पहनने को भी तो देना पड़ता।'

'वह भी मैं वहाँ से लूट लाता।'

'यह लूट का माल कब तक चलता?'

'जब तक दूसरे क्षेत्रों के पुरुष-वर्ग परिश्रम कर अन्न उत्पन्न कर लेते।'

'परन्तु इसका एक दिन अन्त होगा। उनके स्त्री-वर्ग को तुम यहाँ ले आते हो। वहाँ जनसंख्या कम हो रही है और यहाँ वेश्याओं की इतनी भरमार हो रही है कि पुरुष-वर्ग निर्वीर्य हो रहे हैं।'

'देखो, देववती !' सुकेश ने अपने पुत्र की माँ को सम्बोधन कर कहा, 'अब तुम अपने बच्चों का विवाह कर दो जिससे इनके भी सन्तान हो जाये और ये सन्तान का अर्थ समझ सकें।'

'यह तो मैं स्वयं ही माताजी से कहने वाला हूँ। मेरा विवाह किसी गन्धर्व कन्या से करें।' माल्यवान ने कहा।

'परन्तु माल्यवान ! तुम्हारी इस लूट-मार से तो सब त्राहि-त्राहि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने लगे हैं और इसका परिणाम यह होगा कि एक दिन यह प्रजा तुम्हारी ही हत्या कर देगी।'

'मेरी सेना इतनी बड़ी है कि वह भूमण्डल को विजय कर नियंत्रण में रख सकती है। जहाँ भी जाती है टिड्डी-दल की भाँति विनाश कर देती है। उस सेना के रहते कोई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।'

"सुकेश सन्तुष्ट नहीं हुआ, परन्तु वह समझा नहीं सका कि किये कर्म का फल क्या होगा? लूट-खसूट सदैव नहीं चल सकती और इसका परिणाम भयंकर होगा।

"बात यह थी कि वह नहीं जानता था कि इस शरीर में एक ऐसे तत्त्व की विद्यमानता है जो मरने के उपरान्त भी रहता है और कर्मों का फल भोगता है। साथ ही उसने बाल्यकाल में देवलोक में सुना था कि मनुष्यों से भी अधिक बलशाली और उन पर शासक एक परमात्मा है। यहाँ आकर उसे उसके विषय में ज्ञान नहीं रहा था। इस कारण उसे माल्यवान की युक्ति में दोष दिखायी नहीं दिया कि उसकी सेना जहाँ जायेगी, विनाश उत्पन्न कर देगी।

"माल्यवान और उसके छोटे भाइयों का विवाह कर दिया गया। माल्यवान की पत्नी का नाम सुन्दरी था। सुमाली की पत्नी का नाम केतुमती था और माली की पत्नी का नाम वसुधा था।

"तीनों भाइयों का विवाह हुआ तो सब सन्तानोत्पत्ति में रस लेने लगे।

"अब राक्षसों की समर उनके सैनिक करने लगे। ये सैनिक तो अपने स्वामियों से भी अधिक क्रूर सिद्ध हुए। उन्होंने जम्बू द्वीप का दक्षिणी भाग जो विन्ध्याचल पर्वत के दक्षिण में था, सब उजाड़ कर वन बना दिया। वहाँ राक्षस, दैत्य और असुर बसने लगे और सब भले लोग भाग कर विन्ध्याचल से उत्तर में हिमालय तक फैल गये।

"वहाँ भी वे त्रस्त ही रहते थे कि राक्षस कहीं वहाँ भी न आ जायें और वहाँ पर भी विनाश लीला न करने लगें जो उन्होंने दक्षिणपथ में मचा रखी है।

"इन दक्षिणी निर्वासितों में से कुछ लोग राक्षसों की समस्या पर विचार करने लगे थे। इस विचार का केन्द्र गंगा-यमुना के संगम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयागराज में बन गया।

"वहाँ महर्षि भारद्वाज का आश्रम था। वहीं नित्य इस समस्या पर चर्चा होती थी। नित्य दक्षिण से भाग कर आये लोग उस आश्रम में ही एकत्रित होते थे।

"एक दिन एक व्यक्ति शरभंग अपने परिवार सहित वहाँ आश्रम में पहुँचा और महर्षि भारद्वाज के सम्मुख उपस्थित हो अपनी करुण-कथा सुनाने लगा। उसने बताया—

'भगवन्! मैं किष्किंधा का रहने वाला हूँ। दो मास पूर्व वहाँ राक्षस सेना का आक्रमण हुआ और सेना ने गाँव की सब स्त्रियों के साथ बलात्कार किया; तदनन्तर उनके स्तन काट कर ले गये हैं।'

'किसलिये?'

'सुना है कि उनको भून कर खाते हैं।'

"भारद्वाज ऋषि यह सुन अवाक् रह गया। शरभंग ने अपने कथन के प्रमाण में अपने परिवार की दस स्त्रियों को छाती नंगी कर दिखाने को कहा। उन स्त्रियों की वह कुरूप अवस्था देख महर्षि के रोंगटे खड़े हो गये। महर्षि ने पूछा, 'ऐसा व्यवहार किष्किंधा में कितनी स्त्रियों के साथ किया गया है?'

'सब युवा स्त्रियों से। उनमें से कितनी ही इन घावों से मर गयी हैं। मेरे परिवार में से भी तीन का देहान्त हो गया है।'

'यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है।'

'इतने मात्र से मुझे सन्तोष नहीं हो सकता भगवन्।'

'तो तुम क्या चाहते हो?'

'इन घृणित कर्म करने वालों को दण्ड।'

'यह कौन दे सकता है?'

'जिनके पास सामर्थ्य है।'

'किनके पास सामर्थ्य है?'

'सामर्थ्यवानों में एक आप भी तो हैं।'

'मैं अपने ढंग से कार्य कर रहा हूँ। पितामह ब्रह्मा ने यह आज्ञा दी है कि हम लोग पूर्ण विन्ध्याचल के उत्तर में आश्रम स्थापित कर इधर के लोगों को सभ्यता का पाठ पढ़ायें।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'इससे कुछ नहीं होगा। मेरा पिछले एक सौ वर्ष का अनुभव है। यह तब तक नहीं हो सकता जब तक कि आप यहाँ एक सुदृढ़ राज्य स्थापित नहीं करते।'

'महाराज ! आपका कार्य तो राज्य स्थापित होने के उपरान्त होना चाहिये। यदि आप बिना राज्य के आश्रम बनायेंगे तो ये आश्रम भी लूट लिये जायेंगे और आपको भी वे लोग भून-भून कर खा जायेंगे।'

"भारद्वाज देख रहा था कि राक्षसों के उत्पात बढ़ते चले जा रहे हैं और इस विस्थापित व्यक्ति का कथन सत्य ही प्रतीत होता है कि बिना राजसी संरक्षण के आश्रम स्थापित करना बुद्धिमत्ता नहीं।

'तो तुम क्या कहते हो ?'

'मैं तो आपसे यही निवेदन करने यहाँ आया हूँ कि आप हमारे इन विस्थापितों के मण्डल का नेतृत्व करें और हमें शिवजी महादेव के दरबार में ले चलें। वह यदि अपना दैवी त्रिशूल लेकर अकेले ही इधर आ जायें तो यहाँ एक सुदृढ़ राज्य स्थापित हो सकता है और फिर इस प्रकार के अत्याचारों की रोक-थाम हो सकती है।

'आपके यहाँ वन में बैठ अग्निहोत्र करने से यह समस्या सुलझ नहीं सकती।'

'परन्तु पितामह का विचार यह है कि विचार-परिवर्तन राज्य स्थापित करने से पृथक् कर्म है। यह तो राज्य के बिना ही चलना चाहिये।'

'भगवन् ! मैं इस बात का विरोध नहीं कर रहा। मैं तो आपके विचार-प्रचार में राज्य के हस्तक्षेप की बात नहीं कह रहा। मैं तो प्रचार-कार्य करने वालों की रक्षा की बात कह रहा हूँ।'

'यह बहुत ही कठिन है। राज्य जिनकी रक्षा करेगा, उनका सहायक मान लिया जायेगा। इस प्रकार राज्य एक प्रकार की विचार-धारा का पोषक समझ लिया जायेगा।'

'नहीं महाराज ! यह बात नहीं। संरक्षण तो सबका समान रूप में होना चाहिये, परन्तु आक्रामक कार्य का विरोध होना चाहिये। इसी न्याय की स्थापना हो सकती है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महर्षि भारद्वाज के इस बात के लिये तैयार करने में कि वह चलकर शिवजी महाराज के दरबार में उपस्थित हों, शरभंग को कई दिन लगे।

"जब वह चलने को तैयार हुए तो पूर्ण उत्तरी क्षेत्रों में उत्साह और प्रसन्नता की तरंग उठ खड़ी हुई।

"जहाँ-जहाँ इस बात का समाचार पहुँचा, दक्षिण से भागकर आये उत्पीड़ित लोग महर्षि के आश्रम में एकत्रित होने लगे। विस्थापितों के अतिरिक्त भी गन्धर्व, किन्नर, मानव, दैत्य इत्यादि जातियों के लोग इस मण्डल में सम्मिलित हो गये।"

: ४ :

बाबा की कथा के इस अंश पर श्रोतागणों में बहुतों को संशय उत्पन्न हो उठे थे और एक दिन तो कथा के लिये नियत पूर्ण समय में शंका-समाधान ही होते रहे। उस दिन भृगुदत्त ने ही पूछना आरम्भ किया, "बाल्मीकि रामायण में यह अंश तो प्रक्षिप्त प्रतीत होता है। आपका क्या विचार है?"

"मैं जो कथा आपको बता रहा हूँ, यह महर्षि बाल्मीकि के नाम से नहीं सुना रहा। मैं अनेक स्रोतों से जानी कथा आपको बता रहा हूँ और यह किसी प्रकार से अनहोनी बात भी नहीं है।"

"मैं यह नहीं कह रहा। मेरे इस संशय को उपस्थित करने का आशय यह है कि आज के काल में रामायण के इस अंश को प्रक्षिप्त मान इसमें से निकाला जा सकता है। इससे दक्षिण और उत्तर में वैमनस्य उत्पन्न हो सकता है।"

इस पर विष्णुशरण मुस्कराता हुआ मुख देखता रहा। भृगुदत्त इस मुस्कराहट का अर्थ नहीं समझा। अतः उसने अपने आशय को दूसरे शब्दों में दोहरा दिया। उसने कहा, "इस समय द्रविड़ मुन्नेत्र कड़घम नामक संस्था ने दक्षिण और उत्तर में भेद-भाव को बढ़ावा देने का यत्न आरम्भ किया हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके अन्तर्रात्मा में दक्षिण को भारत से सर्वथा पृथक् राज्य बनाने की इच्छा है और वह संस्था प्रत्येक बात को दक्षिण-उत्तर में द्वेष-वृद्धि में प्रयोग करते रहते हैं। बाल्मीकि रामायण का यह भाग उनके इस कुकृत्य में सहायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा।"

आखिर विष्णुशरण ने बताया, "पण्डिती ! यह आप नहीं बोल रहे। यह आपके मस्तिष्क में महात्मा गांधी प्रभृति वैष्णव बोल रहे प्रतीत होते हैं।

"किसी घटना के सत्य-झूठ होने का सम्बन्ध उसके अर्थ लेने से कैसे हो गया ? जो घटना घटी है। वह तो घटी ही है। उस घटना का अर्थ भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न लेते हैं। उन अर्थों के विषय में विचार हो सकता है, परन्तु उस घटना का सत्य और असत्य होने का इससे क्या सम्बन्ध है कि उससे कोई रुष्ट होकर उसका दुरुपयोग करता है ?

"मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि किसी पुस्तक के किसी अंश को इस कारण प्रक्षिप्त नहीं माना जा सकता कि कुछ दक्षिण-वासी इस अंश का भिन्न अर्थ लेते हैं।

"ऐसी एक बात आज भी कही जा रही है। वह यह कि मुसलमानी राज्यों ने हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के साथ भारी अन्यायाचरण किया था। आज के मुसलमान उन शासकों को हम-मजहब मान उनके कुकृत्यों की निन्दा करने पर क्रोध में आ बलवे करने लगते हैं। इन बलवों से भयभीत हिन्दू नेतागण यह कहने लगे हैं कि उस इतिहास का वर्णन ही बन्द कर दिया जाये, और कुछ तो यह भी कहने लगे हैं कि वह इतिहास सत्य है ही नहीं।

"वह सत्य है अथवा झूठ है ? उसका क्या अर्थ है ? यह वैमनस्य का विषय नहीं, अन्वेषण का विषय है। झगड़े का नहीं।

"इसी प्रकार यह राक्षस जाति की बात है। यह अन्वेषण का विषय है। इतिहासकार राक्षसों को दक्षिण का रहने वाला नहीं मानते। उनको देवलोक के प्राणी ही मानते हैं। जैसे कनाडा और आस्ट्रेलिया के निवासी युरोपियन ही हैं। इसी प्रकार रक्ष अर्थात् राक्षस देवलोक के रहने वाले थे। इसके अतिरिक्त वे इतने क्रूर थे अथवा नहीं थे, इसका निर्णय द्रविड़ मुन्नेत्र कड़घम संस्था के सदस्यों के अपने समझने से नहीं हो सकता। मानव प्राणी एक ऐसा प्राणी है जो सर्वपक्षीय है और सर्वसत्ता है। इसके उदाहरण संसार में अन्य स्थानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर भी देखे गये हैं।

"आधुनिक काल में भी ऐसी ही घटनायें हुई हैं। सन् १९३९–४५ के विश्वव्यापी युद्ध में जर्मन शासक हिटलर ने पोलैण्ड के एक करोड़ यहूदियों की हत्या कर दी थी। इसी युद्ध में जर्मनी के आक्रमण से रूस के क्षेत्र युक्रेन में कुछ ही दिनों में दस लाख नागरिकों को मार डाला था। अभी-अभी पिछले ही वर्ष चीन में गृह-युद्ध हुआ था और यह कहा जाता है कि लाखों ही चीनी उस युद्ध में मारे गये थे।

"जहाँ तक शिव शक्ति का प्रश्न है वह अमेरिका ने हिरोशिमा और नागा साकी में ऐटम बम्ब का प्रयोग कर सम्भव सिद्ध कर दिया है।

"भृगुदत्तजी! जो कुछ कथा है, वह न तो असम्भव है और न ही दक्षिण के झगड़े की सूचक है। वर्तमान द्रविड़ कड़घम क्या उस राक्षस जाति के हैं जिसके माल्यवान, सुमाली और माली प्रतीक माने जाते हैं?"

इस पर महिमा ने पूछ लिया, "बाबा! क्या मानव उन्नति के लिये यह उचित नहीं कि ऐसी घटनाओं को भूला जाये? इनका बार-बार उल्लेख तो इनकी पुनरावृत्ति की सम्भावना उत्पन्न करता है।"

"महिमा बैठी! क्या हिटलर ने माल्यवान इत्यादि की कथा पढ़कर यहूदियों की व्यापक हत्या का आयोजन किया था? क्या चीन के माओ त्से तुंग ने बाल्मीकि रामायण का उत्तर काण्ड पढ़कर कोरिया पर और वियतनाम में आक्रमण की योजना बनायी थी?

"क्या हलाकू खाँ ने रामायण पढ़ी थी जो उसने मध्य एशिया में घोर उपद्रव मचाया था अथवा क्या सन् १९४६-४७ में पाकिस्तान के निर्माण करने वालों ने जो व्यापक हत्या-काण्ड किये थे, वे रामायण को पढ़कर किये थे?

"यह बात नहीं। मनुष्य में कुछ अकांक्षायें होती हैं। ये जब उग्र हो जाती हैं तो मनुष्य उनकी पूर्ति के लिये यत्न करता है। इस यत्न में वह उचित-अनुचित को भूल जाता है। ये महत्वाकांक्षायें ही सब प्रकार के उपद्रवों और अत्याचारों का स्रोत हैं।"

"तब तो महर्षि भारद्वाज का कहना ठीक था कि उन महत्वा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कांक्षाओं को शान्त करने का उपाय करना चाहिये। इन युद्धों से स्थायी शान्ति न हुई है और न हो सकेगी।

"परन्तु ये महत्वाकांक्षायें इतिहास पढ़ने अथवा सुनने से तो उत्पन्न नहीं होतीं। इनका स्रोत मनुष्य के भीतर है। यह ठीक है कि इन मानसिक विकारीं के लिये सत्संग और सत् कथा की आवश्यकता होती है, परन्तु यहाँ भी तो सत्संग और सत् कथा ही की जा रही है। जो सत्य नहीं, वह सत् कथा हो भी नहीं सकती।

"मनुष्य की अपनी न्यूनताओं का ज्ञान कराना ही तो सत् कथा है। साथ ही युद्ध अथवा दुष्कृत करने वालों को दण्ड देना ही भले लोगों की रक्षा के अर्थ है। जब किसी हत्यारे को फाँसी दी जाती है तो इसलिये नहीं होती कि हत्यारे से बदला लिया जा रहा है, वरंच इस कारण कि हत्यारा किसी अन्य की हत्या न करता फिरे।

"यही बात महर्षि भारद्वाज को समझ आयी थी। यों तो जब राक्षसों ने उत्तर की ओर बढ़ना आरम्भ किया तो पितामह ने यह योजना बनायी थी कि पूर्ण विन्ध्याचल क्षेत्र में ऋषि-आश्रम स्थापित कर दिये जायें जिससे यह मार-काट की स्थिति देवलोक की ओर संक्रमण न कर सके।

"परन्तु शरभंग का यह कथन सत्य था कि वे आश्रम भी तो तब ही चल सकते हैं जब राज्य का इनके लिये संरक्षण हो।"

महिमा का अभी भी पूर्ण रूप में समाधान नहीं हुआ था। उसने कह दिया, "बाहर से किसी देश की जनता की रक्षा के लिये जाना कभी पसन्द नहीं किया जाता। उचित तो यही है कि देश के भीतर ही पाप का विरोध करने की सामर्थ्य उत्पन्न की जाये।"

विष्णुशरण हँस पड़ा। हँसते हुए उसने कहा, "जैसे अमेरिका का हस्तक्षेप कोरिया और वियतनाम में अनुचित है?"

"हाँ बाबा।"

"यह बात कौन कहते हैं? क्या यह सत्य नहीं कि इसके कहने वाले वे कम्युनिस्ट ही हैं जो स्वयं इन देशों में हत्याकाण्ड करने पहुँचे हुए हैं?"

"क्या चैकोस्लोवाकिया अथवा हंगरी में वहाँ के लोगों के अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतभेद में रूस की सेनाओं ने जाकर व्यापक अत्याचार नहीं किये ? अतः रूस अथवा उसके समर्थक भला यह कैसे कह सकते हैं कि अमेरिका अथवा इंगलैंड किसी देश में वहाँ की उत्पीड़ित जनता की सहायता के लिये न जायें ?

"देखो महिमा ! मैं तो पूर्ण पृथ्वी पर मानव जाति को एक ही मानता हूँ और जहाँ दुष्टता हो वहाँ सब भले लोगों को एक होकर दुष्टता का दमन करना चाहिये ।

"यह कहाँ की युक्ति है कि हिटलर, मुसोलिनी और फ्रांको तो एक हो पूर्ण भूमण्डल को त्रस्त कर सकें और यदि इंगलैंड, पौलैंड की सहायता के लिये युद्ध में सम्मिलित हों तो उसे युद्ध-पोषक कहा जाये ?

"यह मानसिक अवस्था बूढ़े मनुष्यों में अथवा मृतप्राय जातियों में उत्पन्न हो जाती है । कभी युवक जो सब प्रकार के अनर्थ करते रहते हैं, बूढ़ों को यह कहते देखे जाते हैं कि, 'पिताजी ! आपको तो अब भगवत्-भजन करना चाहिये । आपके लिये सांसारिक बातों में रुचि लेनी ठीक नहीं । जद यही युवक रात को डाके डालने चल पड़ें तो तुम उनके सत् उपदेशों को ठीक मानोगी क्या ?

"वास्तव में तत्कालीन महादेव शिव उस समय बूढ़े हो चुके थे । अपने यौवन काल में उन्होंने देवताओं के लिये बहुत युद्ध लड़े थे, परन्तु इस समय वृद्ध हो जाने से उनको सुकेश के पुत्रों के कुकृत्य दिखायी नहीं दे रहे थे ।

"इसके लिये पितामह सजग था, परन्तु उसका व्यवहार वैसा ही था जैसा कि इस काल में गांधीजी का तथा उसके अनुयाइयों का रहा है ।"

"परन्तु बाबा !" महिमा ने पूछ लिया, "इस मार-काट के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं जिससे कि जगत् में शान्ति स्थापित हो सके ?"

"इतिहास का यही पाठ है कि जब तक मानव मानव है अर्थात् इसमें बुद्धि यन्त्र विद्यमान है तब तक युद्ध बन्द नहीं हो सकता । यह

—१२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य में तामसी और राजसी स्वभाव का खेल है। ये स्वभाव पूर्व-जन्म के कर्मों से प्राप्त होते हैं। सबके कर्म समान नहीं होते; इस कारण सबके स्वभाव भी समान नहीं होते। इसलिये झगड़े होते हैं।"

"इस पर भी सदुपदेश, सुशिक्षा और संस्कार एक सीमा तक व्यक्तियों पर प्रभाव डाल सकते हैं परन्तु ये हीन स्वभाव तो जन्म से मिलते रहते हैं। भूमण्डल पर सदा ही दुष्ट-प्रकृति के लोग उत्पन्न होते रहते हैं और उनका दमन करने का भी प्रबन्ध तैयार रखना चाहिये।"

"इससे अनन्त काल तक ये युद्ध चला करेंगे और लाखों की संख्या में हत्याकाण्ड होते रहेंगे।"

"हाँ। मनुष्य में त्रुटियाँ सदा विद्यमान रहती हैं, अत: उनमें संघर्ष भी होता ही रहेगा। जब त्रुटियाँ जातीयस्तर पर आ जाती हैं तो संघर्ष का रूप युद्ध हो जाता है।"

: ५ :

"दक्षिण से विस्थापितों का प्रतिनिधि-मण्डल और उस प्रतिनिधि-मण्डल से लाखों की संख्या में दु:खी नर-नारी कैलाशपति के पास पहुँचे। इस प्रतिनिधि-मण्डल के नेता महर्षि भारद्वाज थे।

"कैलाश-लोक में इतनी बड़ी भीड़ को देख शिवजी चिन्ता अनुभव करने लगे और इनको शीघ्रातिशीघ्र वापस करने के लिये उन्होंने उनके तुरन्त भेंट की।

"महर्षि भारद्वाज ने शिवजी को आशीर्वाद दे अपने साथ आये दक्षिणपद के लोगों के कष्ट का वर्णन किया।

"शिवजी ने सब बात सुनी और कह दिया, 'इन लोगों ने राज्य-कर नहीं दिया होगा।'

'देव ! ऐसी बात नहीं। कर देने से पूर्व ही इनका सर्वस्व लूट लिया जाता है और जब इनके पास कर देने को कुछ नहीं रहता तो इनके स्त्री-वर्ग को उसके प्रतिकार में ले लिया जाता है। इस पर जब ये लोग आपत्ति करते हैं तो इनकी हत्या की जाती है। इनका घर-बार लूट लिया जाता है और फिर गाँव-के-गाँव जलाकर भस्म कर दिये जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'देव ! इस समय दक्षिणापथ की जनसंख्या दस प्रतिशत रह गयी है। सब युवा स्त्रियाँ सागर द्वीपों में हाँक कर ले जायी जाती हैं और वहाँ उनका प्रयोग वर्ष-दो वर्ष तक किया जाता है। जब वे प्रयोग में रसयुक्त नहीं रहतीं तो उनको सागर में मछलियों के खाने के लिये बहा दिया जाता है।'

'ये सब बातें ठीक हो सकती हैं। परन्तु इतनी दूर जाकर हम किसी प्रकार का समर नहीं चला सकते।'

'तो कौन चलायेगा ?'

'यह इनको स्वयं चलाना चाहिये।'

'तो भगवन् ! जैसे आपने एक शक्ति सुकेश को दी थी वैसी कुछ एक शक्तियाँ इन लोगों को भी दे दें। तब ये उस शक्ति का विरोध शक्ति से कर सकेंगे।'

'वैसा घातक अस्त्र इनको नहीं दिया जा सकता।'

'परन्तु आपने किसी दूसरे को तो दिया है ?'

'वह पार्वती ने दिया है। मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं।'

'तो ये लोग क्या करें ?'

'ये अपना संगठन बना अपना राज्य स्थापित कर लें और इनको कष्ट पहुँचाने वालों का राज्य-शक्ति विरोध करे।'

'इन पर दया करिये और इनका उद्धार करिये, भगवन्।'

'अच्छी बात है। इस विषय पर विचार करेंगे। अभी तुम लोग यहाँ रहो।'

"लाखों लोग कैलाश लोक में चिरकाल तक नहीं रह सके। विशेष रूप में उनका शीतकाल में वहाँ रहना असम्भव था। वे उष्ण देशों में रहने वाले थे। अतः सामान्य जनता तो धीरे-धीरे वापस लौटने लगी। प्रतिनिधि मण्डल के लोग भी एक-एक दो-दो कर मैदानों में आने लगे थे।

"शिवजी समाधिस्थ हो गये थे और अतिथियों से मिल भी नहीं सकते थे।

"महर्षि भारद्वाज और बहुत थोड़े-से प्रतिनिधि-मण्डल के सदस्य ही वहाँ शीत-ऋतु में टिके रहे। वे शिवजी की समाधि टूटने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीक्षा करते रहे।

"माल्यवान का सम्बन्ध अपने पिता के द्वारा देवलोक से बना हुआ था। जब उसे पता चला कि कुछ लोग भगवान् शिवजी के पास उसकी शिकायत लेकर गये हैं तो उसने अपने पिता सुकेश को कैलास-क्षेत्र में भेज दिया। सुकेश वहाँ पहुँचा तो शिवजी समाधिस्थ हो चुके थे। अतः सुकेश माता पार्वती से मिलने चला गया।

"पार्वती ने उसको आसन पर बैठने का संकेत कर पूछा, 'सुकेश! किसलिये आये हो?'

"पार्वती को ज्ञात था कि महर्षि भारद्वाज दक्षिण से भाग कर आये कुछ लोगों के साथ वहाँ टिके हुए हैं। उसे उनके देवलोक में आने का कारण भी ज्ञात था। इस पर भी उसने पूछना ही उपयुक्त समझा।

"सुकेश ने बताया, 'माताजी! मेरे राज्य के कुछ विद्रोही यहाँ आये हुए हैं। मैं यह जानने आया हूँ कि वे किस हेतु यहाँ आये हैं? साथ ही उनके विषय की अपनी सफाई यहाँ उपस्थित करने आया हूँ।'

"पार्वती ने मुस्कराते हुए कहा, 'तो तुम अपने पिता-तुल्य संरक्षक से असत्य भाषण करने आये हो?'

'नहीं माताजी! मैं वस्तुस्थिति का वर्णन करने आया हूँ।'

'इसका अर्थ यह है कि तुम उनको अज्ञानी मानते हो। वह अपने योग-बल से सब-कुछ जानते हैं।'

'यह ठीक है, परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि जो कुछ भी मैंने किया है, अथवा जो कुछ भी मेरे पुत्रों ने किया है, वहाँ के धर्मानुकूल है। राजनीति में स्थानीय धर्म का पालन ही करना होता है। हमारे राक्षस देश का एक धर्म है और जो कुछ भी प्रजा का उत्पीड़न किया जा रहा है, वह वहाँ के धर्मानुसार ही किया जा रहा है।

'हमारे देश में अधिकांश प्रजा वन जन्तु है। वानर हैं, रीछ हैं, सिद्ध हैं और व्याघ्र हैं। इन वन प्राणियों के साथ वन प्राणियों का-सा व्यवहार ही किया जा रहा है। साथ ही हम सभ्य राक्षसों की बढ़ती हुई जनसंख्या के बसने के लिये स्थान बना रहे हैं। जब तक वनों को हिंसक पशुओं से खाली न किया जाये, सभ्य प्राणियों को वहाँ कैसे बसाया जा सकता है?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पार्वती ने पूछ लिया, 'तो इन वन जन्तुओं ने वहाँ जाकर बसने वाले राक्षसों पर किसी प्रकार का अत्याचार किया है ?'

'यही बताने के लिये तो उपस्थित हुआ हूँ।'

'मेरी सम्मति यह है कि तुम अपने पिता की समाधि टूटने से पूर्व ही यहाँ से चल दो, अन्यथा तुम्हारे लिये शुभ नहीं होगा।'

'तो आप मेरी सफाई पिताजी से कर देंगी ?'

'मैं तुम्हारी सफाई तो नहीं, परन्तु तुम्हारा संरक्षण अवश्य कर रही हूँ। इस पर भी यह उचित होगा कि यदि तुम माल्यवान इत्यादि को सचेत कर दो कि उनके उच्छृंखल व्यवहार की सीमा आती जाती है। उस सीमा के उल्लंघन होते ही उनका विनाश अवश्यम्भावी है।'

"इससे सुकेश भयभीत वहाँ से लौट गया।

"अपनी राजधानी में पहुँच सुकेश ने माल्यवान को बताया, 'मैं तुम्हारे कार्यों को छिपाने देवलोक में गया था, परन्तु माँ पार्वती के मुख को देख मैं समझ गया कि वह हमारे विषय में सब-कुछ जानती हैं। इस कारण मैंने तुम्हारे कर्मों को छिपाने के स्थान उनकी सफाई देना ही ठीक समझा। मैंने यह बताया था कि हमारे देश की धर्म-व्यवस्था ऐसी ही है, परन्तु मेरी इस सफाई ने भी माताजी को भ्रम में नहीं डाला। वह मेरी बात को मानी नहीं और उन्होंने कहा है कि जो-कुछ भी कर रहे हो, वह सीमान्तर रहना चाहिये। अन्यथा यह हमारे लिये शुभ नहीं होगा।'

'क्या शुभ नहीं होगा ?'

'यह तो उन्होंने बताया नहीं। परन्तु मैंने एक कथा सुन रखी है। वह अमृत-मंथन के समय की है। हमारे पूर्वजों और आदित्यों ने मिलकर समुद्र-मंथन का कार्य किया था। इस कार्य में कई सौ वर्ष लग गये। दोनों की कई सन्ततियाँ निकल गयीं। इस बीच में दैत्य लोग अधीर हो गये और उन्होंने आदित्यों की सहचारिता का लाभ उठा अपना पारिश्रमिक साथ-साथ ही लेना उचित समझा और उसका भोग करते रहे। आदित्य निर्धनता का जीवन व्यतीत करते हुए परि-श्रम करते रहे। उन्होंने समुद्र-मंथन के प्रतिकार में पारिश्रमिक नहीं माँगा। आदित्यों की अकिंचनता की अवस्था देख दैत्यों के राजा बलि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने देवलोक पर अधिकार जमा लिया और पूर्ण त्रिलोकी का भोग करना आरम्भ कर दिया।

'आदित्यों ने बहुत चतुराई से राज्य वापस लिया। त्रिलोकी को बन्धन-मुक्त कर स्वन्त्रता प्रदान की। जब समुद्र-मंथन का अन्तिम परिणाम निकला तो दैत्यों ने आदित्यों का घेराव किया और अमृत पान करने का हठ करने लगे। अब फिर आदित्यों ने दैत्यों की दुर्बलता, वासना की प्रवृत्ति, का लाभ उठाया और स्वयं अमृत पान कर गये। इस पर दैत्यों ने उन पर आक्रमण किया तो आदित्यों ने दैत्यों का वह विनाश किया कि उनको पुनः स्वत्व प्राप्त करने में सहस्रों वर्ष लग गये।

'अब हम कुछ सम्भले हैं और तुमने पुनः विनाशकारी कार्य आरम्भ कर दिया है।'

'नहीं पिताजी! हम उतने मूर्ख सिद्ध नहीं होंगे जितने कि हमारे पूर्वज दैत्य सिद्ध हुए थे। समर के समय हम अपने वासनामय व्यवहार का त्याग कर युद्ध-कार्य में संलग्न हो जाते हैं। जीवन में भोग-विलास भी अपना स्थान रखते हैं।'

'देख लो! मैंने तुमको सचेत कर दिया है। हमारे पास केवल एक दिव्य-शक्ति थी। वह तुमने इन लोगों पर प्रयोग कर उसकी शक्ति को समाप्त कर दिया है। इनको अन्य शस्त्रास्त्रों से भी परास्त किया जा सकता था, परन्तु तुमने उन पर ही शक्ति व्यय कर दी। यह अपनी सामर्थ्य को भोग-विलास में व्यय करने के तुल्य है। अर्थात् तुमने उसका अपव्यय किया था। अब कहीं यही आदित्य अपने दिव्यास्त्रों के साथ युद्ध करने निकल आये तो तुम जीवित बच नहीं सकोगे।'

''यद्यपि माल्यवान अपने पिता को हीन बुद्धि मानता था; इस पर भी उसने देवताओं पर अपनी शक्ति का प्रभाव डालने के लिये अपनी राजधानी का निर्माण कार्य आरम्भ कर दिया। उसने राजधानी नई बनवानी आरम्भ कर दी और अपने तथा अन्य परिवार के सदस्यों की सुरक्षा के लिये एक बहुत बड़ा सुन्दर और सुदृढ़ भवन बनवाने की योजना चालू कर दी।

''यह नगर था लंका और उसमें सुशोभित था उसका राज्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रासाद। इसे संसार में अद्वितीय नगरी और भवन माना जाने लगा। लंका एक सुदृढ़ दुर्ग की भाँति बनाया गया था। जब यह दुर्ग बन गया तो देवता भी समझ गए कि राक्षस अब अजेय हो गये हैं।"

: ६ :

"परन्तु यह वैसी ही बात थी जैसी कि द्वितीय जर्मन युद्ध के पूर्व फ्रांस के लोग मैगिनो लाइन को अपराजय मानते थे।

"शिवजी की समाधि कई वर्ष के उपरान्त खुली। इस समय तक अधिकांश विस्थापित निराश और उत्साह-हीन हो देवलोक से लौट आये थे। महर्षि भारद्वाज भी समाधि खुलने पर पुनः वहाँ आने की बात विचारकर वहाँ से चले आये थे।"

भृगुदत्त की हँसी निकल गयी। बाबा ने अपना कथन समाप्त कर विस्मय में भृगुदत्त के मुख पर देखते हुए पूछ लिया, "क्या विचार उत्पन्न हुआ है, पण्डित जी?"

"बाबा! इतिहास अपने को दोहराता रहता है। इस युग में भी एक लगभग वैसी ही बात हो रही है। वियतनाम में युद्ध हो रहा है और दोनों पक्ष संधि करने पैरिस में बैठे हैं। कई वर्ष व्यतीत हो गये और उनकी संधि-चर्चा समाप्त नहीं हुई। इस सब काल में उत्तरी वियतनामी, चीन एवं रूस की सहायता से निरन्तर आक्रमण कर रहे हैं और अब तो कम्बोडिया पर भी आक्रमण आरम्भ हो गया है।

"परन्तु पैरिस में संधि-वार्त्ता चल रही है। संयुक्त राष्ट्रसंघ इस संधि से आशायें लगाये बैठा है।"

"हाँ।" विष्णुशरण ने विचार-मग्न हो आँखें मूँद लीं। बाबा को मौन देख महिमा ने पूछ लिया, "पिताजी! आज के युग में शिवजी का अभिनय राष्ट्र संघ कर रहा है अथवा पैरिस में बैठे संधि-वार्त्ता करने वाले?"

भृगुदत्त का कहना था, "मैं समझ रहा हूँ कि शिवजी महाराज का अभिनय संयुक्त राष्ट्र संघ कर रहा है। राष्ट्रसंघ के अधिकारी और इसके सदस्य सब जानते हैं कि दोषी कौन है? परन्तु स्वार्थ-वश कुछ न करने पर विवश हो रहे हैं। सब युद्ध से डरते हैं और सब आशा कर रहे हैं कि समय पाकर काल स्वयं ही समस्या को सुलझा देगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब पुनः महिमा ने पूछ लिया, "तो आपका विचार है कि शिवजी महाराज भी स्वार्थ से कुण्ठित हो रहे थे ?"

"हाँ।" उत्तर विष्णुशरण ने दिया, "कथा यह है कि शिवजी का मोह था पार्वती में और पार्वती का मोह था सुकेश में। इस कारण सुकेश के पुत्रों को सन्मार्ग नहीं दिखाया जा सका।

"यही बात इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ की है। इसके महासचिव ऊथांत आधुनिकता के मोह में कम्युनिज़म पर प्रेम की दृष्टि रखते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ एक ओर कम्युनिज़म के मोह में फँसा है और दूसरी ओर रूस और चीन की शक्तियों से भयभीत हो इनसे युद्ध करने से डरते हैं।

"आज संयुक्त राष्ट्र संघ में दो भावनाओं का बोलबाला है। एक तो कम्युनिज़म से मोह और दूसरा ऐटम बम्बों का भय। यह भय रूस के ऐटम बम्बों से अधिक है और अमेरिका के हाथ में इनके होने का इतना भय नहीं। परिणाम यह हो रहा है कि संयुक्त राष्ट्र कम्युनिस्टों की बातों को सुन कानों में अँगुली दे समाधि पर बैठ गया है।

"जब माल्यवान और उसके भाइयों ने देखा कि देवता लोग भी इन वनवासियों की सहायता करना उचित नहीं समझते अथवा राक्षसों से युद्ध करने से डरते हैं तो वे और भी अधिक उच्छृंखल हो गये। उन्होंने निस्सहाय राक्षसेतर जनता का शोषण और भी अधिक करना आरम्भ कर दिया।

"लंका नगरी के एक सुदृढ़ दुर्ग के वन जाने से माल्यवान इत्यादि का अपनी अपराजेयता पर अकाट्य विश्वास हो गया और उन्होंने सब प्रकार के अनाचार करने आरम्भ कर दिये।

"अब तो इन अत्याचारों को देख और पार्वती के सतर्क करने को स्मरण कर सुकेश भी त्राहि-त्राहि करने लगा।

"यह समाचार सुकेश को देववती ने ही दिया, 'आज देश-भर में यह घोषणा की गयी है कि कोई भी व्यक्ति अपने पास एक मास के व्यय योग्य धन से अधिक नहीं रख सकता।'

'क्यों ? इसकी क्या आवश्यकता है ?'

'महाराज ! यह आज्ञा मुझ पर भी लागू हो रही है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'परन्तु मैं पूछता हूँ कि इसकी क्या आवश्यकता है ? हमारे कोष धन-धान्य से भरपूर हैं। हमारे सेवक पहले ही धन-सम्पद से लदे हुए हैं।'

'मैं चाहती हूँ कि आप अपने पुत्र को बुलाकर पूछिये। साथ ही इस आज्ञा से कोई मुक्त भी है अथवा नहीं ?'

''सुकेश वहीं अपनी पत्नी के आगार में बैठ गया। उसने दासी को भेज माल्यवान को बुला भेजा।

''माल्यवान आया और माँ के चरण-स्पर्श कर पिता के समीप बैठ गया और माता से पूछने लगा, 'माँ ! किसलिये बुलाया है ?'

'तुम्हारा आदेश हुआ है कि किसी भी व्यक्ति के पास महीने-भर के खाने योग्य से अधिक न हो। यह आदेश राज्य-भवन में भी घोषित किया गया है ? मैं इसका अर्थ समझना चाहती हूँ।'

'माँ ! अर्थ तो सरल ही है। सब लोग इसका अर्थ समझते हैं। राज्य को धन की आवश्यकता है और यह अन्य लोगों के पास व्यर्थ पड़ा हुआ है। मैं उस धन को सक्रिय करना चाहता हूँ।'

'क्या करोगे उससे ?'

'मैं देवलोक और गन्धर्व लोक को विजय करना चाहता हूँ। उसके लिये बीस कोटि सेना भरती करना चाहता हूँ। इसके लिये अपार धन की आवश्यकता है।'

'परन्तु माल्य !' सुकेश ने बात में हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'तुम्हारी सब सेना एक ही क्षण में फूंक डाली जायेगी।'

'पिताजी ! ऐसा कुछ नहीं होगा। यदि हुआ भी तो मैं इतनी सेना प्रस्तुत करूँगा कि उस सेना को समाप्त करते-करते देवताओं के दिव्यास्त्रों की अग्नि ठंडी पड़ जायेगी। दावानल को शान्त करने के लिये मेघ बन जाऊँगा।'

''सुकेश पुत्र का मुख देखता रह गया। इस पर देववती ने पूछ लिया, 'पर राज्य-भवन के रहने वालों का भी धन छीन लोगे ?'

'माँ ! क्या तुम समझती हो कि यह राज्य-भवन मेरे राज्य में नहीं है ?'

'तो मुझे भी अपना पूर्ण धन राज्य को दे देना पड़ेगा ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'निस्सन्देह ! माँ, तुम भी तो राज्य के आश्रय सुख-भोग करती रही हो और दूर-दूर देशों की अमूल्य वस्तुओं का भण्डार बनाती रही हो।'

'बेटा ! इससे तो राज्य में उपद्रव होने लगेंगे।'

'उसे मेरे सैनिक शान्त कर देंगे।'

'परन्तु जब सैनिकों को भी अपना धन देना पड़ा तो वह उपद्रव शान्त करने की अपेक्षा स्वयं उपद्रव मचाने लगेंगे।'

'नहीं माँ। तुम समझी नहीं। मैं अपने राज्य से बाहर जब लूट मचाता हूँ तो उस लूट में सैनिकों को भागीदार बनाता हूँ। इससे वे मेरा आदेश आँखें मूँद कर पालन करते रहते हैं।'

'बहुत गहरे पानी में तैर रहे हो। डूब जाओगे और साथ में हमें भी ले डूबोगे।'

'माँ ! तुम डर रही हो।'

'हाँ।'

'किस बात का डर है ?'

'मृत्य का।'

'परन्तु मरना तो सबको है। कोई पहले मरेगा कोई पीछे। जो अवश्यम्भावी है उससे डरने की क्या आवश्यकता है ?'

''अब पुनः सुकेश ने कहा, 'परन्तु पहले और पीछे में अन्तर नहीं समझते क्या ? शीघ्र मर जाने से सुख-भोग में न्यूनता नहीं आ जाती क्या ?'

'यह तो है। परन्तु पिताजी, अधिक सुख-भोग के लिये तो मनुष्य जीवन की बाजी लगा देते हैं। यही मैं कर रहा हूँ। यह केवल जातीय स्तर पर है।'

''सुकेश में पुनः देवलोक के संस्कार जाग्रत होने लगे थे। उसने कहा, 'एक बात तुम नहीं समझते। वह है धर्म-युक्त व्यवहार की। इस बात का विचार भी छोड़ दें कि जीवन चलता है अथवा नहीं और जीवन की अवधि कितनी है तब भी प्रत्येक कार्य में औचित्य भी तो देखना होता है।'

'कैसे देखा जा सकता है यह ? पिताजी, मैंने एक कसौटी इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये विचार की है। वह है सुख-भोग में वृद्धि की लालसा। जिससे यह लालसा पूरी हो वह उचित है और इसके विपरीत अनुचित।'

'इससे तो घोर अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी।'

'पिताजी ! वह अव्यवस्था ही समय पाकर व्यवस्था प्रतीत होने लगेगी।

'उदाहरण के रूप में भाई-बहन सन्तानोत्पत्ति नहीं करते। क्यों ? मुझे इसका कारण यह समझ में आता है कि यह सम्बन्ध इतना सुखकारक नहीं जितना कि दूर की लड़की से सन्तानोत्पत्ति करना है। यह एक मनःस्थिति है। यदि कुछ काल तक यह सम्बन्ध होने लगे तो यह भी सुखकर लगेगा।'

"सुकेश काँप उठा। वह उठकर चुपचाप उस आगार से बाहर निकल गया। देववती भी माल्यवान को वहाँ बैठा छोड़ अपने पति के पीछे आगार से बाहर निकल आयी। सुकेश अपने आगारों में जा विचार करने लगा कि क्या करे ? उसके मन में वही विचार पुनः जाग्रत हो उठा था जो कई वर्ष पूर्व उठा था जब उसने शक्ति का प्रयोग अपने राज्य के नागरिकों पर ही होते देखा था।"

: ७ :

"कई वर्ष तक देवलोक में कैलाशपति का आतिथ्य स्वीकार कर भारद्वाज देवलोक से लौट आये। विस्थापित लोग तो वहाँ से पहले ही चले आये थे। शरभंग देवलोक में सबसे पहले जाने वालों में था। यह उसका ही सुझाव था कि महादेव शिवजी से सहायता के लिये कहा जाये। उसे शिवजी से निराशा भी सबसे पहले हुई और सबसे पहले लौटने वालों में वही था।

"देवलोक से लौटते हुए सरस्वती नदी के किनारे बहुत-से ऋषि-महर्षियों के आश्रम देख वह भी वहीं ठहर गया। वहाँ उन दिनों धौम्य ऋषि की बहुत धूम थी। धौम्य अभी युवा ही थे और परिवार-सहित अपना पृथक् आश्रम बनाकर रहते थे। घटनावश शरभंग उसी के आश्रम में जा पहुँचा। जब कुछ दिन वहाँ रहते हो गये तो ऋषि ने इस नये आये व्यक्ति से पूछ लिया, 'सौम्य ! कहाँ से आये हो ?'

'भगवन् ! देवलोक कैलाशपति के यहाँ से।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'वहाँ क्या कार्य करते थे ?'

'मैं दक्षिणापथ का रहने वाला हूँ ।'

'वहाँ किस काम से गये थे ?'

"शरभंग ने अपनी पूर्ण कथा सुना दी । कथा सुन धौम्य ऋषि ने पूछ लिया, 'स्त्री-वर्ग कहाँ है ?'

'भारद्वाज आश्रम प्रयागराज में ।'

'शिव तुम्हारी सहायता नहीं करेगा । वह जान-बूझकर समाधिस्थ हो गया है ।'

'तो उसने हमसे और महर्षि भारद्वाज से छलना की है ?'

'नहीं सौम्य ! छलना नहीं, पलायन किया है । पार्वती सुकेश से बहुत स्नेह रखती है । वह उसके लड़कों को मरने देना नहीं चाहती । भगवान् शिव, भोले बाबा, पार्वती की इच्छा का उल्लंघन नहीं कर सकते । साथ ही वह भारद्वाज को इन्कार नहीं कर सकते । इस द्विविधा से बचने के लिये उन्होंने समाधि में जाना स्वीकार कर लिया है ।'

'तो हम प्रजागणों का कोई सहारा नहीं ?'

'है । तुम पितामह ब्रह्मा के पास जाओ । ऐसी स्थिति में वे ही सहायक हो सकते हैं ।'

"शरभंग पहले भी भारद्वाज की सहायता से कैलाश गिरि पर पहुँचा था । ब्रह्मपुरी तो और भी दूर और दुरूह मार्ग पर थी । इस कारण शरभंग धौम्य की सम्मति सुन चुप रह गया ।

"धौम्य मन में विचार करता था कि यह आतुर व्यक्ति ब्रह्मलोक का मार्ग पूछेगा, तब इसे मार्ग बता दिया जायेगा अथवा वह स्वयं साथ जायेगा, परन्तु शरभंग देवलोक से इतना निराश हुआ था कि उसका उत्साह भंग हो गया था और वह इनसे याचना करना व्यर्थ समझने लगा था ।

"शरभंग कुछ वर्ष तक वहाँ रहा । धौम्य के आश्रम में ही उसे यह पता चला था कि महर्षि भारद्वाज वहाँ से निराश लौट आये हैं ।

"इस पर उसने धौम्य ऋषि से ब्रह्मलोक का मार्ग जानने की इच्छा प्रकट की । धौम्य का कहना था कि यदि तुम्हें वहाँ जाना ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तो आगामी वर्ष प्रतिपदा के दिन ब्रह्मलोक में यज्ञ होने वाला है। उस समय वहाँ जाओगे तो अन्य देवताओं से भी सहायता की आशा कर सकते हो।

"शरभंग अभी धौम्य आश्रम में ही था कि एक बहुत बड़ी संख्या में दक्षिण के लोग उत्तरी भारत में आ आकर बसने लगे।

"इस समय पर धौम्य ऋषि के आश्रम में ही एक यज्ञ का आयोजन किया गया। उसमें सब प्रकार के लोग सम्मिलित हुए। सब वर्ण के, सब राज्यों के और सब वयस के।

"यज्ञ के उपरान्त एक बहुत बड़ा सम्मेलन किया गया। उस सम्मेलन में दक्षिणी द्वीपों के राज्य के अत्याचार की चर्चा हुई।

"धौम्य ऋषि ने दक्षिण राज्य में अनार्य प्रवृत्तियों के प्राबल्य हो जाने पर वक्तव्य दिया और उसके उपरान्त इस समस्या का सुझाव प्रस्तुत करते हुए कहा, 'सुकेश और उसके लड़कों ने घोर तपस्या कर अपने साधनों और भुजाओं में ईश्वरीय शक्ति का संचय कर रखा है। इस कारण उसके विपरीत जन-साधारण कुछ नहीं कर सकता।

'यदि जनता को राजा के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये कहा गया तो विशाल हत्या-काण्ड हो जायेगा और परिणाम कुछ नहीं होगा। अतः किसी ऐसे नेता का आह्वान करना चाहिये जो सुकेश इत्यादि से अधिक तपस्वी हो।'

'भगवन्! हमें वह उपाय बताइए जिससे कि हमारा उद्धार करने वाला हमें मिल सके?' शरभंग ने विनती करते हुए कहा।

"धौम्य ने एक क्षण तक विचार कर कहा, 'माल्यवान इत्यादि से भी बड़ा तपस्वी एक आदित्य है। उसने अमृत पान किया है और वह लोकपाल भी है।'

'तो भगवन्, बताइये! वह कौन है? हम उसकी ही सेवा में उपस्थित होंगे।'

'ठीक है। वह पितामह ब्रह्मा की भाँति ब्राह्मण प्रवृत्ति का भी नहीं है।'

'परन्तु आपने तो मुझे यह सुझाव दिया था कि मैं ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित हो उनसे सहायता माँगू?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हाँ, कहा तो था। परन्तु बाद में विचार करने पर पता चला कि वह वही बात कह देंगे जो मैं अभी सम्मेलन के आरम्भ में कह रहा था। उनका विधान है कि जो किसी वस्तु की योग्यता नहीं रखता, उसे वह वस्तु प्राप्त नहीं होनी चाहिये। कभी किसी कारणवश वह वस्तु उसे प्राप्त हो भी जाये तो वह उसका दुरुपयोग ही करता है।

'इसी कारण पितामह तुमको कह देते कि जाओ तपस्या करो। अपने में योग्यता उत्पन्न करो तो तुम्हें योग्य राजा मिल जायेगा। इसी कारण तो उन्होंने विन्ध्याचल पर आश्रमों की एक शृंखला खड़ी कर दी है।

'अब मेरी समझ में आया है कि वह उपाय ठीक तो है, परन्तु जब तपस्या करने वालों की रक्षा नहीं की जायेगी तो तपस्या पूर्ण कैसे होगी? अतः उन आश्रमों में स्वरक्षा का प्रबन्ध होना चाहिये।

'यदि ये आश्रम कुछ सौ वर्षों तक बने रहे तब इनमें से भी तपस्वी उत्पन्न होंगे और वह असुरों का दमन कर सकेंगे।'

"शरभंग के मन में एक ऐसा आश्रम खोलने का विचार उत्पन्न हो गया था जिसमें अमृत का पान कराया जाये। साथ ही उस अमृत की रक्षा के लिये क्षत्रिय उत्पन्न किये जायें।

"परन्तु समस्या तो यह थी कि ऐसा आश्रम स्थापित करने में समय लगेगा। तब तक पूर्ण देश में असुर छा जायेंगे।

'धौम्य ऋषि का कहना था, 'इस समय तो केवल एक ही व्यक्ति है जो तुम लोगों की सहायता कर सकता है। वह क्षीर सागर निवासी विष्णु है। वह स्थान यहाँ से दूर है। इस पर भी वहाँ का मार्ग इतना दुर्गम नहीं जितना कि ब्रह्म लोक का है। आप वहाँ चलिये। यदि वे इस संकट के निवारण में सहायक बनना स्वीकार कर लें तो निस्संन्देह तुम लोगों का उद्धार हो सकेगा।'

"पूर्ण सम्मेलन में उपस्थित, इस योजना को सुन क्षीर सागर के तट पर स्थित विष्णुधाम को चलने के लिये तैयार हो गये।"

इस पर भृगुदत्त ने पूछ लिया, "परन्तु आज लोकतन्त्र का युग है। अब तो राजाओं और देवताओं की आवश्यकता अनुभव नहीं होती। जनता आन्दोलन करती है और राज्य उलट-पुलट हो जाते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हाँ। परन्तु जन-आन्दोलन भी तो वहीं सफल होते हैं जहाँ कोई तपस्वी नेता मिल जाता है।

"कभी-कभी यह भी होता है कि नेता तो तपस्वी होता है, परन्तु उसकी तपस्या का फल मिथ्या मार्ग पर चल पड़ता है।

'ऐसा हिरण्यकशिपु के समय हुआ था। ऐसा ही विद्युतकेश और माल्यवान भाइयों के विषय में हुआ है। इन सबने तपस्या की थी। उस तपस्या से इनके मुखों पर अमित ओज, शरीर में अपूर्व बल और बुद्धि में तीक्ष्णता आयी थी, परन्तु उनको अमृत अर्थात् ज्ञान का पान नहीं हुआ था। इस कारण उनकी तपस्या का फल मिथ्या मार्ग पर चल पड़ा था और परिणाम अति भयंकर हुए थे।

"यह एक शाश्वत नियम है। बिना तपस्या के नेतृत्व नहीं मिलता। परन्तु तपस्या तो एक साधन मात्र है। यह साधन नहीं। इस कारण जो केवल तपस्या के बल पर चल पड़ते हैं, वे पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं और परिणाम शुभ होने के स्थान अशुभ होते हैं।

"इस युग में एक तपस्वी हो चुका है, परन्तु उसकी तपस्या से प्राप्त फल मिथ्या दिशा में प्रयुक्त हुआ था।"

"बाबा! किससे अभिप्राय है आपका?" महिमा ने पूछा।

"मेरा अभिप्राय महात्मा गांधी से है।"

"और जवाहरलाल से नहीं है?"

"जवाहरलाल तो एक तपस्वी का शिष्य अथवा पुत्र कहा जा सकता है। वह गुरु अथवा पिता का उत्तराधिकारी उनकी गद्दी का फल भोगता रहा है।"

इस पर भृगुदत्त ने पूछ लिया, "बाबा! महात्माजी में मिथ्यात्व कहाँ था?"

"उसने वाणी में तेज प्राप्त किया था, परन्तु वह उस अमृत का पान नहीं कर सका था जो देवताओं के मंथन से प्राप्त किया था।

"मेरा अभिप्राय है कि उसने धर्म और संस्कारों के तत्त्व को प्राप्त नहीं किया था। परिणाम यह हुआ है कि न तो उनकी सन्तान धर्म और संस्कृति पर आस्था रख सकी और न ही उसका शिष्य वर्ग। उसकी सन्तान में एक तो हिन्दू धर्म को छोड़ गया और दूसरा मद्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांस का सेवन कर भोगों में रत हो गया। शिष्यों में सब नास्तिक, हिन्दू-धर्म विरोधी, भीरु और सांसारिक सुख-भोगों में रस लेने लगे।

"त्याग और तपस्या से महात्माजी एक भूमण्डलीय व्यक्तित्व प्राप्त कर सके, परन्तु जो उपलब्ध हुआ वह शारीरिक दासता के स्थान मानसिक दासता प्राप्त हुई। अथवा यह भी कहा जा सकता है कि इंग्लैण्ड की दासता के स्थान युरोप और रूस की दासता प्राप्त हो गयी।

"यही बात धौम्य ऋषि ने शरभंग को समझायी थी कि केवल शारीरिक दासता ही बन्धन नहीं है, परन्तु उसके साथ मानसिक दासता भी बन्धन है। यह शारीरिक दासता से अधिक अनिष्ट करने वाली है।

"इस पर भी दोनों से मुक्ति प्राप्त करने के लिये राज्य के दण्ड की आवश्यकता होती है। ब्रह्मा ने मानसिक दासता से मुक्ति के लिये आश्रमों की स्थापना की, परन्तु आश्रम विन्ध्याचल से आगे जा नहीं सके।"

: ८ :

कथा के उपरान्त भृगुदत्त ने विष्णुशरण से पृथक् में बात करने की इच्छा प्रकट की। बाबा और भृगुदत्त उसी कमरे में रह गये और शेष परिवार के सदस्य खाने के कमरे में चाय पीने चले गये।

एकान्त में भृगुदत्त ने कहा, "अमृत का श्रीनगर से पत्र आया है। वह 'स्टेट होटल' में ठहरा हुआ है। पत्र गरिमा के नाम है और उसमें लिखा है कि वह उसके पास वहाँ आ जाये। यदि वह आ जाये तो वह उसे लेकर अमेरिका अथवा रूस चला जायेगा और वहाँ सुख-चैन से जीवन व्यतीत करेगा।"

बाबा ने पूछा, "यह पत्र गरिमा ने आपको दिखाया है?"

"पत्र मेरे पते पर आया था। मैं अमृत के लेख को पहचानता हूँ। इस कारण मैंने पत्र खोलकर पढ़ लिया है।"

"मेरा विचार है कि पत्र गरिमा को दे देना चाहिये और उसे स्वेच्छा से विचार करने देना चाहिये।"

"मेरा विचार था कि महिमा को अमृतलाल की माँ के साथ वहाँ भेज देना चाहिये।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह भी उनके विचार करने की बात है। देखिये, पण्डित जी! आप पिता होने के नाते पुत्री का पत्र खोलकर पढ़ सकते हैं, परन्तु महिमा तथा अमृत की माँ को पत्र का ज्ञान तब ही होना चाहिये जब गरिमा बताना उचित समझे।

"तब महिमा के विचार का विषय हो सकता है। मैं गरिमा को इतना मूर्ख नहीं समझता कि वह अपना हानि-लाभ न समझ सके। उसे स्वयं निश्चय करने दीजिये। अतः वह पत्र आपको गरिमा को ही देना चाहिये।"

पत्र खुला था, इस कारण भृगुदत्त को गरिमा को बताना पड़ा, "पत्र पर हाथ से लिखे पते से मैं जान गया था कि अमृत का पत्र है। तुम्हें उसने क्या लिखा है, यह जानने की इच्छा स्वाभाविक ही थी। अतः पत्र खोल मैंने पढ़ लिया है। वास्तव में पत्र का विषय तुम्हारे अपने विचार करने का है। इस कारण तुम्हें ही दे रहा हूँ।"

गरिमा ने पत्र लेकर पढ़ा। यह बात महिमा के साथ वाले कमरे में जहाँ आजकल गरिमा रहती थी, हो रही थी। भृगुदत्त के पास भगवती भी बैठी थी। पत्र पढ़कर गरिमा ने कहा, "मैं इस पत्र का उत्तर देना नहीं चाहती।"

"परन्तु उसने उत्तर नहीं माँगा। उसने कुछ कर्म करने की इच्छा व्यक्त की है।"

"हाँ। मेरा उसकी इच्छा पूर्ण करने का विचार नहीं। यही इसका उत्तर न देने का आशय है।" इस पर भगवती ने कह दिया, "यदि तुम चाहो तो यह पत्र अपनी बड़ी बहन को दिखा दो। कदाचित् वह इसका प्रयोग करना चाहे।"

"क्या प्रयोग कर सकती है वह?"

"इसमें लिखे पते पर स्वयं जा सकती है अथवा अपना कोई दूत भेजना चाहे तो भेज सकती है।"

"ठीक है माँ! मैं दिखा दूंगी।"

माता-पिता के चले जाने पर गरिमा महिमा के कमरे में जा उसके सामने अमृत का पत्र रखकर बोली, "दीदी! इसे पढ़ लो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महिमा ने पत्र पढ़कर कहा, "मुझे पढ़ने को किसलिये दिया है ?"

"कदाचित् इसमें लिखे पते का तुम लाभ उठाना चाहो।"

इस सुझाव पर महिमा ने कहा, "मैं तो इस पत्र के आने के ज्ञान का कुछ लाभ समझती नहीं। हाँ, उनकी माताजी को यदि कुछ लाभ हो तो उनको दिखा दो।"

"दीदी ! यह तुम ही दिखा दो।"

महिमा उस पत्र को लिये हुए अपनी सास के कमरे में जा पहुँची। सुन्दरी स्वयं कुछ निश्चय न कर बाबा से सम्मति करने चली गयी। वहाँ सुरेश्वर बैठा था। घर के तीनों बड़ों की गोष्ठी में विचार उपस्थित हुआ तो विष्णुशरण ने कह दिया, "मुझे इस पत्र का ज्ञान है। मेरी सम्मति यह है कि पहले गरिमा को निश्चय करना चाहिये कि वह इसके विषय में क्या करना चाहती है ? तदनन्तर महिमा का विचार भी पता लगना चाहिये। तब ही तुम इस पत्र पर विचार कर सकती हो।"

सुन्दरी ने बताया, "गरिमा तो इस पत्र के विषय में कुछ भी करने का विचार नहीं रखती। इस पते से किसी प्रकार का लाभ उठाने में महिमा की रुचि नहीं। वह न तो इस पते पर उसे लिखना चाहती है और न ही स्वयं वहाँ जाना।"

"और तुम क्या करना चाहती हो ?"

"यदि गरिमा को आपत्ति न हो तो मैं एक पत्र लिखना चाहती हूँ कि गरिमा ने पत्र में लिखा पता मुझे बताया है और उस पते पर मैं लिखकर उसे यही सम्मति देना चाहती हूँ कि वह भले लड़कों की भाँति घर लौट आये और अपनी पत्नी से सुलह कर ले।"

"क्यों सुरेश्वर ! तुम क्या चाहते हो ?"

"मैं उसके पीछे-पीछे भागना पसन्द नहीं करता। यदि महिमा कहे और उसके पास जाना चाहे तो उसके संरक्षण के लिये मैं अथवा भगवती उसके साथ जा सकते हैं।"

"ठीक है। महिमा को स्वेच्छा से निर्णय करने दो।"

यह बात यहीं समाप्त हो गयी। महिमा का दृढ़ संकल्प था कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अमृत की मिन्नत-खुशामद नहीं करेगी। उसने एक अन्य संकल्प भी किया था कि वह बिना तीन-चार सन्तान उत्पन्न किये सन्तान निरोध के उपाय भी प्रयोग नहीं करेगी। इसके साथ उसके मन में भारत के प्राचीन इतिहास की बाबा द्वारा विवेचना सुनने और लिखने की उत्कट इच्छा उत्पन्न हो गयी थी। अतः अब वह इस कथा के समाप्त होने तक बिलासपुर में रहना चाहती थी।

अगले दिन गरिमा और महिमा से पूछने पर भृगुदत्त को पता चल गया कि अमृत को मिलने के लिये श्रीनगर में जाने को कोई भी तैयार नहीं हुआ। इस स्थिति में उनको सुख अनुभव नहीं हो रहा था, परन्तु वे समझ नहीं सके कि महिमा की इच्छा के बिना वे क्या करें? विष्णुशरण ने यही सम्मति दी थी कि परमात्मा अमृत को सुमति दे। ऐसी प्रार्थना करने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं।

इस दिन विष्णुशरण ने देवलोक के मुख्य-मुख्य व्यक्तियों के विषय में अपनी कल्पना बतानी आरम्भ कर दी।

उसने बताया, "इन महापुरुषों के विषय में एक बात समझने की आवश्यकता है। देवता शब्द तीन प्रकार से प्रयुक्त हुआ है। एक तो देवता प्रकृति में दिव्य पदार्थों को कहते हैं। देवता 'दिवि' धातु से बना है। दिवि के अर्थ हैं प्रकाशमान। अर्थात् सब प्रकाशमान प्रकृति के पदार्थों को देवता कहते हैं। जैसे कि सूर्य, चन्द्र, तारागण इत्यादि।

"दूसरे, देवता आदित्यों का नाम है। आदित्य कश्यप और दिति की सन्तान थे। ये ग्यारह थे। एक इनका छोटा भाई भी था। उसका नाम वामन था। यह बारहवाँ था।

"तीसरे, देवता हैं विद्वान् मनुष्य जो अपने ज्ञान से प्रकाशमान हैं। उनको भी देवता के नाम से सम्बोधन किया जाता है।

"इन तीनों प्रकार के देवताओं में दिव्यता परमात्मा की शक्ति की होती है।

"अतः जहाँ कहीं इतिहास में देवता शब्द आये तो इनका अर्थ या तो दिति के पुत्रों से होता है अथवा विद्वान् मनुष्यों से मानना चाहिये।

"जब खगोल अथवा ज्योतिष-शास्त्र में देवता शब्द प्रयुक्त किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया हो तो सूर्य, चन्द्रादि प्रकाशमान नक्षत्रों अथवा ग्रहों से लेना चाहिये।

"कभी-कभी जीवात्मा अथवा परमात्मा के लिये भी देवता शब्द का प्रयोग हुआ है।"

इस पर महिमा ने पूछ लिया, "बाबा! शिवजी को महादेव क्यों कहा जाता है?"

"महादेव दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। परमात्मा के अर्थों में। यह इस कारण कि ब्रह्माण्ड के सब दिव्य पदार्थों में यह सर्वश्रेष्ठ दिव्य-पदार्थ है। इस कारण यह महादेव है।

"परन्तु एक अमैथुनीय सृष्टि के व्यक्ति का नाम भी महादेव इस कारण पड़ा था कि वह सदा सबका कल्याण करने के लिये विख्यात हो गया था।

"यह तो मैं पहले ही बता चुका हूँ कि इन्द्र, विष्णु, वरुण, शिव इत्यादि वंश-परम्परा के नाम हैं। इन महापुरुषों के नाम से वंश चल पड़े थे और वंश की बड़ी सन्तान पिता के नाम से विख्यात होती थी। यही प्रथा वर्तमान काल में शंकराचार्य की गद्दी पर बैठने वाले के लिये चलायी जा रही है।

"यही कारण है कि हिरण्यकशिपु के काल में भी विष्णु, शिव और इन्द्र, ब्रह्मा इत्यादि मिलते हैं और अमृत के लिये समुद्र-मंथन के समय भी तथा राम के काल में भी थे एवं युधिष्ठिर इत्यादि के काल में भी मिलते हैं।

"इस पर भी इनकी परम्परा टूटती दिखायी देती है। इसका उदाहरण राम और युधिष्ठिर के काल के इतिहास में बताऊँगा।

"अभी तो यही समझ लेना चाहिये कि दिति के ग्यारहवें पुत्र विष्णु की सन्तान में ही कोई विष्णु थे जिसने हिरण्यकशिपु को मारा था और अमृत के लिये हुए युद्ध वाला विष्णु दूसरा था। यद्यपि वह प्रथम विष्णु की ही सन्तान था।

"तदनन्तर राम युग का विष्णु दूसरा था जिसने माल्यवान इत्यादि से युद्ध किया था। इन कालों में लाखों वर्षों का अन्तर है।

"धौम्य ऋषि को उस सम्मेलन में जो सरस्वती के तट पर उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्रम में हुआ था, बात करते-करते स्मरण आ गया कि विष्णु लोकपाल है और वह तेजस्वरूप, क्षात्र-स्वभाव वाला और दिव्यास्त्रों से युक्त है। अतः उस सम्मेलन में निश्चय किया गया कि प्रमुख व्यक्तियों का एक प्रतिनिधि मण्डल विष्णु के पास जाये जो उसे स्थिति से अवगत कराये और उससे सहायता की माँग करे।"

: ९ :

"धौम्य ऋषि के आश्रम में प्रतिनिधि मण्डल के बनने तथा प्रस्थान करने से पूर्व ही सुकेश लंका नगरी छोड़ वनों में जा एकान्तवास करने लगा था। देववती भी उसके साथ जाने को तैयार नहीं हुई।

"माल्ययान इत्यादि पिता के घर और नगर छोड़ जाने से और भी उच्छृङ्खल हो गये। जब इनको पता चला कि शिव ने इनके विरुद्ध किसी प्रकार की कार्यवाही करने से इन्कार कर दिया है तो इनकी यह धारणा बन गई कि अब कोई भी देवता इनके कामों का विरोध नहीं कर सकेगा। यदि किसी देवता ने कभी विरोध की इच्छा प्रकट भी की तो वह महादेव से डरते हुए इनका अनिष्ट करने नहीं आयेगा। इसका अर्थ इन राक्षसों ने यह लगाया कि वे अब भूमण्डल के स्वामी हो गये हैं। अब माल्यवान अपने विमान पर बैठा हुआ निस्संकोच सब देशों पर विचरता था। जहाँ चाहता था विमान से उतरता था और जो वस्तु चाहता था, उठा लाता था।

"एक बार माली विमान में विचरता हुआ सरस्वती के तटवर्ती प्रदेश पर भ्रमण कर रहा था कि उसे वहाँ एक बहुत बड़ा जन-समूह एकत्रित दिखायी दिया। उसने वहाँ विमान उतारा और उस जन-समूह के समीप गया और एक व्यक्ति से पूछने लगा, 'यहाँ क्या है?'

"उस व्यक्ति ने इसे विमान से उतरते देखा था। अतः वह इसे कोई उच्च कोटि का देवता मान झुककर नमस्कार कर बोला, 'श्रीमान्! यह धौम्य ऋषि का आश्रम है।'

'यहाँ क्या हो रहा है?'

'एक बृहत् यज्ञ किया जा रहा है।'

'यज्ञ में क्या होता है और इसका क्या प्रयोजन है?'

'यज्ञ किसी ऐसे कार्य को कहते हैं जिसका फल समान रूप से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण जनता को मिले। किसी एक के लाभ के लिये किया कर्म यज्ञ नहीं होता।'

"माली के लिये यह एक नवीन बात थी। उसने पूछा, 'क्या कर्म किया जा रहा है जिसका लाभ सब समाज को होने वाला है?'

'भगवन्! स्वयं जाकर क्यों नहीं देख लेते?" ये लोग आश्रम से बाहर खड़े बातचीत कर रहे थे।

"माली ने भी यही उचित समझा कि स्वयं चलकर देखना चाहिये। वह उसी व्यक्ति के साथ-साथ चलकर वहाँ जा पहुँचा जहाँ बहुत बड़े कुण्ड में हवन हो रहा था। उसमें बड़ी-बड़ी समिधायें जल रही थीं और उस कुण्ड के चारों ओर बैठ पचास के लगभग भव्य मूर्तियाँ कुछ गान कर रही थीं और बीच-बीच में वे लोग 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करते थे तो कई लोग उस कुण्ड में बड़े-बड़े लम्बे डण्डी वाले करछों से घी और अन्य द्रव्य अग्नि में डालते थे। इस घी के अग्नि में पड़ने से बहुत ऊँची-ऊँची लपटें निकलती थीं और आकाश में विलीन हो जाती थीं।

"माली काफी देर तक वहाँ खड़ा यह सब देखता रहा। उसे इसका सिर-पैर समझ नहीं आया। अब उसने पुनः अपने समीप खड़े उसी व्यक्ति से पूछा, 'ये लोग क्या बोल रहे हैं?'

'ये वेद मन्त्र हैं।'

'वे क्या होते हैं?'

'परमात्मा के ज्ञान के वाक्य हैं।'

'इनके पढ़ने से क्या होगा?"

'हम भगवान् श्री हरि का आह्वान कर रहे हैं। इस समय भूमण्डल पर राक्षसों के अत्याचार से त्राहि-त्राहि मची हुई है। ऋषि लोग भगवान् श्रीहरि का आह्वान कर रहे हैं कि वह इन राक्षसों का नाश करें।'

'यह श्रीहरि कहाँ रहते हैं?'

'बैकुण्ठ में।'

'वह कहाँ है?'

'भू, द्यु और अन्तरिक्ष सब स्थानों पर है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माली खिलखिलाकर हँस पड़ा। समीप खड़ मानव ने प्रश्न-भरी दृष्टि में इस विलक्षण व्यक्ति की ओर देखा तो उसने कह दिया, 'देखो भद्र! आह्वान उसका किया जाता है तो समीप न हो। दूर खड़ा हो अथवा रहता हो। जो सब स्थान पर है, उसके आह्वान के लिये इतना ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने की क्या आवश्यकता है?'

"माली की बात सुन साथ खड़ा व्यक्ति उत्तर नहीं दे सका। उसे यह बात ठीक ही समझ आयी थी। इस कारण उसने युक्ति का उत्तर देने की अपेक्षा वेद मन्त्र बोलने वालों में मुख्य व्यक्ति की ओर संकेत कर कह दिया, 'आज के ब्रह्मा वह हैं। उनसे जाकर पूछ लो।'

'क्या नाम है उनका?'

'नाम तो है धौम्य मुनि। वह इस यज्ञ और समारोह के ब्रह्मा हैं।'

'परन्तु वह तो इस समय तुम्हारे श्रीहरि का आह्वान कर रहे हैं।'

'हाँ। मध्याह्न होने वाला है और उस समय भोजन के लिये अवकाश होगा। इस विश्रान्ति के समय उनसे मिलकर पूछ सकते हैं।'

"माली समझा कि ये लोग किसी प्रकार का आयोजन कर रहे हैं जिसका सम्बन्ध राक्षसों से है। ये समझते हैं कि कोई बहुत बड़ा योद्धा श्रीहरि आयेगा और इनको कष्ट देने वाले राक्षसों का नाश कर देगा। इतना समझ वह एक ओर खड़ा हो धौम्य मुनि के अवकाश पाने की प्रतीक्षा करने लगा।

"ठीक जब सूर्य सिर पर पहुँचा तो दूर घंटा बजने लगा। ऋषिगणों ने मंत्र बोलने बन्द किये और आहुतियाँ डालने वालों ने सब सामान एक ओर रखा और भोजन के लिये उठ खड़े हुए।

"माली आगे बढ़ा और धौम्य ऋषि के सम्मुख हाथ जोड़ खड़ा हो गया। वह बोला, 'भगवन्! मैं दूर देश से अपने विमान में भ्रमण करता हुआ आया हूँ और इधर से जा रहा था कि यहाँ बहुत बड़ा जन-समूह देख उतर गया हूँ यह जानने के लिए कि यहाँ क्या हो रहा है?'

'तो देखा है?' धौम्य ऋषि ने पूछ लिया।

'जी देखा तो है, परन्तु समझा नहीं।'

'बात यह है कि दक्षिण में तीन भाई हैं। सबसे बड़ा माल्वान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, दूसरा माली है और तीसरा सुमाली है। ये बहुत बली हैं और आततायी भी हैं। लाखों की संख्या में लोग उस देश से भागे हुए इधर उत्तरापथ में आ रहे हैं। इनके साथ वहाँ बहुत अन्याय हुआ है।

'यहाँ हम इनका कष्ट निवारण करने के लिये यह यज्ञ कर रहे हैं। पिछले एक मास से हम भगवान् श्रीहरि का आह्वान कर रहे हैं। अभी तक हमारी आवाज़ उन तक पहुँची नहीं। वही इन दुष्ट राक्षसों के विनाश का उपाय बतायेंगे।'

'वह कितनी दूर रहते हैं जो उनको अभी तक आपकी आवाज़ सुनायी नहीं दी ?'

'वे सब स्थान पर विद्यमान हैं, परन्तु हमारे चित्त अभी एकाग्र नहीं हुए जो उन तक नहीं पहुँचे।'

'चित एकाग्र कैसे होता है ?'

'यहाँ कुछ दिन रहो। तुम स्वयं जान जाओगे।'

"माली ने अपना परिचय गलत दिया था। वह यह बात जान चुका था कि यहाँ उनके विनाश का ही आयोजन हो रहा है।

"उसने धौम्य ऋषि से पूछ लिया, 'आप ब्रह्मा हैं ?'

'हाँ। सर्वसम्मति से इस यज्ञ का मैं ब्रह्मा नियुक्त हुआ हूँ और यह काम मुझे ही दिया गया है कि श्रीहरि से जानूँ कि इन राक्षसों का किस प्रकार विनाश हो ?'

"वैसे तो माली समझता था कि उन्होंने जो कुछ किया है, वह उनके विनाश करने में कारण नहीं हो सकता। वह बलशालियों का यह अधिकार समझता था कि वे पूर्ण पृथ्वी का भोग करें। एक बात वह समझा था कि यह स्थान उनके राज्य की पहुँच से दूर है, अन्यथा वह यहाँ राक्षसों की एक सेना भेज इन सबको सदा के लिये चुप करा देता।

"अतः वह इस विषय में अपने भाइयों से परामर्श करने के लिये लौट जाना चहता था। वह मन में विचार कर रहा था कि राक्षस इस देश पर आक्रमण कर दें तो यहाँ का सब आयोजन ध्वस्त हो जायेगा। वह यह देखना चाहता था कि इनका श्रीहरि कब और कहाँ से आता है और इनको क्या सम्मति देता है, परन्तु उसको जिस व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने विमान से उतरते देखा था, वह अपने साथियों को उसके विषय में बताने लगा था और धीरे-धीरे वहाँ के एकत्रित लोगों में उसका एक विमानाधिपति होना विख्यात होने लगा था। जब वह धौम्य ऋषि से बात कर रहा था तो लोग उसको देखने के लिये एकत्रित होने लगे थे।

"उसने इस बात की सम्भावना पर विचार किया था कि यदि ये लोग जान गये कि वह कौन है तो ये उसे मार डालने का यत्न करेंगे। वह अकेला ही दस-बीस से तो लड़ सकता था, परन्तु वहाँ तो सहस्रों लोग एकत्रित थे। अतः वह समझ गया कि वहाँ उसका अकेला पकड़ा जाना उसके लिये घातक होगा। इस कारण धौम्य ऋषि से बात कर वह लौट पड़ा।"

: १० :

एक बार महिमा ने जब यह समझ लिया कि अब उसकी पति से चिरकाल के लिये पृथकता हो गयी है तो उसे चित्त में एक विशेष प्रकार की शान्ति अनुभव होने लगी। उस दिन कथा के उपरान्त भृगुदत्त ने महिमा को शान्त और सन्तुष्ट अनुभव किया। वह और भगवती उसके साथ ही महिमा के कमरे में जा पहुँचे। भगवती ने वहाँ बैठ महिमा से पूछा, "अब क्या होगा ?"

महिमा मुस्करायी और बोली, "माँ ! अभी रात का खाना खाने में तीन घण्टे हैं। मैं बाबा की कही कथा को लिखूँगी। आज कथा कुछ लम्बी थी, अतः खाना खाने के उपरान्त भी लिखूँगी। प्रायः गरिमा भी मेरे साथ आ मेरी सहायक हो जाती है। अभी तक तो हम दोनों रात देर तक बैठ बातें किया करती थीं, परन्तु कल से हमने यह निश्चय किया है कि हम अब इधर-उधर की बातें नहीं किया करेंगी। आज भी वैसा ही करेंगी।

"हम कल दस बजे के लगभग सोयी थीं और प्रातः चार बजे उठ पड़ी थीं। पाँच बजे तक शौचादि से निवृत्त हो आज मैंने अपना चिर विस्मृत कार्य सितार-वादन आरम्भ कर दिया। सितार की ध्वनि सुन गरिमा भी जाग कर मेरे कमरे में आ गयी थी और दिन चढ़ने के बाद तो माताजी भी सितार सुनने आ गयीं। सात बजे तक मैं सितार का अभ्यास करती रही हूँ। तत्पश्चात् बाबा को पता लगा तो, उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा व्यक्त की है कि मैं प्रात:काल उनके कमरे में आकर सितार-वादन किया करूँ। अत: कल प्रात: मैं बाबा को पाँच बजे उनके कमरे में सितार-वादन का वचन दे चुकी हूँ।

"सात बजे के उपरान्त मैं रामचरित मानस पढ़ा करती हूँ। इस प्रकार नौ बज जाते हैं। तब हमारा अल्पाहार का समय हो जाता है।

"अल्पाहार के उपरान्त हम प्राय: भ्रमण के लिए अपने फलोद्यान में चली जाती हैं। इस प्रकार मध्याह्न के भोजन का समय हो जाता है। तदुपरान्त कुछ विश्राम कर बाबा की कथा सुनने की तैयारी हो जाती है।"

भगवती ने पूछा, "महिमा ! यह मेरे प्रश्न का उत्तर है क्या ?"

"माँ ! मैं समझती हूँ, परन्तु मैं उस विषय पर विचार करने की न तो आवश्यकता समझती हूँ और न ही अवसर। मैं यह समझ गयी हूँ कि मेरे कर्मफल में ऐसा ही लिखा था, सो हो गया।"

"पर इस प्रकार जीवन-भर चल सकेगा क्या ?"

"जब नहीं चल सकेगा तो देख लूँगी।"

"तब तक बूढ़ी हो जाओगी।"

"और वैसे बूढ़ी नहीं होऊँगी क्या ?" महिमा ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

माँ के विचार से सामान्य जीवन का विकल्प नहीं था। इस कारण मौन हो वह मुख देखती रह गयी।

महिमा ने माँ के कहने की कुछ देर तक प्रतीक्षा कर कह दिया, "माँ ! तुम चिन्ता न करो। मैंने अब अपनी डोर परमात्मा के हाथ में दे दी है और अपने को उसके आश्रय छोड़ निश्चिन्त हो अपना जीवन चलाने लगी हूँ।"

इसके उपरान्त सामान्य जीवन चलने लगा। जब कुछ दिन तक सितार-वादन चलता रहा तो विष्णुशरण ने पूछा, "महिमा बेटी ! तुम गाती नहीं ?"

"गाया करती थी। मेरे माता-पिता तो कहा करते थे कि मैं बहुत ही मीठा गाती हूँ, परन्तु आपके पुत्र कहते थे कि मेरा स्वर रूखा और कानों को अप्रिय है। इस कारण मैंने गाना छोड़ दिया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परन्तु मैं समझता हूँ कि अमृत को कभी भी संगीत में रुचि नहीं रही। वह क्या जाने कि संगीत क्या होता है ?"

"वे कहते थे कि वाद्य-यंत्रों की ध्वनि के समान मानव-ध्वनि मधुर नहीं हो सकती।"

"देखो महिमा ! मेरा यह मत है कि ईश्वर के बनाये यंत्र का मुकाबला कोई भी मानव-निर्मित यंत्र नहीं कर सकता। मानव-निर्मित वाद्य-यंत्रों को भी तो स्वर करने का अभ्यास करना पड़ता है। ठीक वैसे ही ईश्वर निर्मित यंत्र को भी स्वर करना होता है। मैं तो यह समझता हूँ कि स्वर हो जाने पर यह मानव-निर्मित यंत्रों से सदा अधिक मधुरता और हृदय-स्पर्शी ध्वनि उत्पन्न कर सकता है।"

महिमा यह बात समझ नहीं सकी थी। इस कारण वह टुकर-टुकर मुख देखती रह गयी। तब बाबा ने समझाया, "अच्छा, यह बताओ कि सितार और फिर सितार से अधिक वीणा क्यों मधुर स्वर उत्पन्न करती है ?"

"सितार में कई तार होते हैं और मुख्य तार के साथ उन तारों में से कोई-न-कोई प्रतिध्वनित होने लगती है। वीणा में इससे भी अधिक होते हैं।

"इस पर भी सदा दो तारें एक समय बजती हैं। प्रायः अन्य वाद्य-यंत्रों में एक ही तार बजती है। साथ ही ध्वनि की उत्कृष्टता वाद्य-यंत्र की बनावट पर भी होती है।"

"परन्तु ईश्वर कृत यंत्र जो मानव शरीर में लगा है, वह तो एक समय कई-कई निम्न ध्वनियाँ[1] निकाल सकता है। इसी कारण मानव-ध्वनि कैसी भी हो, वह इन यंत्रों से अधिक मधुर होती है। हाँ, यह अवश्य है कि उसको स्वर करने के ठीक ढंग से अभ्यास करना पड़ता है।

"एक तार वाला यंत्र शीघ्र स्वर हो जाता है। सितार स्वर उससे अधिक कठिन है और वीणा को स्वर करना तो उससे भी अधिक कठिन है। इसी प्रकार ईश्वर कृत इस मानव यंत्र, जिसमें कई-कई तारें एकसाथ बजती हैं, स्वर करने में उनसे अधिक कठिनाई होती है।

---

1. Under-tones.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"रही बात ध्वनि की श्रेष्ठता। वह वाद्य-यंत्र के आकार-विस्तार की भाँति मानव-शरीर के आकार-विस्तार पर निर्भर करता है। यदि तुम अपने गले का अभ्यास करना चाहो तो तुम्हारे गले के वाद्य-यंत्र को ठीक आकार-विस्तार देने के लिये मैं भोजन-व्यवस्था कर सकता हूँ।

"मैं जब छोटी अवस्था में कथा किया करता था तो साथ गाया भी करता था। उस समय विशेष प्रकार का भोजन और रहन-सहन रखने से मेरा गला अति मधुर और ऊँची ध्वनि उत्पन्न कर सकता था। यह तो पिछले दस वर्ष से मैंने गाना छोड़ा तो कथा करना भी छूट गया।"

"बाबा!" महिमा ने कहा, "आपका कथा-वाचन तो बिना गाने के भी अति रसमय होता है।"

"परन्तु जो रस संगीत से बनता था, वह केवल कथा-वाचन से नहीं बनता।"

"तो मैं गाने का भी अभ्यास करना आरम्भ कर दूँ ?"

"मेरी तो यही सम्मति है।"

इसके उपरान्त महिमा ने गाना भी आरम्भ कर दिया। पहले रात के समय अपने कमरे में फिर प्रातः बाबा के कमरे में।

इस काम में भी बाबा ने अपने लम्बे अनुभव का लाभ महिमा को दिया। उसने एक दिन बताया, "हमारे प्राचीन ग्रन्थों में साधन के लिये उद्गीथ गान की बहुत महिमा कही है।"

"वह क्या होता है ?"

"उद्गीत और उद्गीथ दो शब्द हैं। उद्गीत का अर्थ है कि ऊँचे स्वर से गाना और उद्गीथ का अभिप्राय है कि 'ओं' स्वर का उच्चारण। ओं में वृहति यंत्र से स्वर निकलता है और इस स्वर को रूप देने में केवल ओष्ठ ही प्रयुक्त होते हैं। यही मानव वाद्य-यंत्र को सुस्वर करने में सहायक होते हैं।

"देखो महिमा! एक बार मानव वाद्य-यंत्र स्वर हुआ तो सुनने वालों की बात छोड़ो, गाने वाले का भी पूर्ण स्नायु-मण्डल उसी स्वर में विकम्पित होने लगता है और यह कहा है कि सामान्य मनुष्यों से सैकड़ों गुणा अधिक आनन्द का रस उसे मिलता है। मैंने यह अनुभव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है और इस आनन्द का स्मरण अब भी होता है तो मैं अपने को कृत्य-कृत्य मानने लगता हूँ।"

"बाबा ! आप अब क्यों नहीं गाते ?"

"अमृत के माता-पिता देर से जागा करते हैं। मेरे गाने से इनके सुख-स्वप्न भंग हो जाते थे। इस कारण मैंने संगीत करना छोड़ दिया। अपने आनन्द के लिये किसी भी दूसरे के सुख में विघ्न बनना उचित प्रतीत नहीं हुआ।"

सुन्दरी और सुरेश्वर सामने ही बैठे थे। महिमा ने प्रश्न-भरी दृष्टि से अपने सास-श्वसुर की ओर देखा तो सुन्दरी ने ही दोषी का-सा मुख बनाये आँखें नीची किये कह दिया, "यह दोष मेरा ही है। आज से लगभग दस वर्ष पूर्व एक रात की बात है। हम रात-भर तो कल्लोल करते रहे थे और जब हमारे सोने का समय हुआ तो बाबा के भजन का समय हो गया। इनका स्वर भी बहुत बलमय है, हम सो नहीं सके। विवश स्नान इत्यादि से अवकाश पा, बाबा के कमरे में आ गये। ये तब भी ओं और राम नाम का गान कर रहे थे।

"जब समाप्त कर चुके तो मैंने इनसे पूछा, 'बाबा ! यह परमात्मा से वार्तालाप तो किसी अन्य समय भी हो सकता है। प्रभात का समय तो किसी अन्य काम के लिये छोड़ दिया जाये तो ठीक नहीं क्या ?'

"यह कुछ देर आँखें मूंद विचार करते रहे। तदनन्तर बोले, 'बेटा ! तुम ठीक कहती हो। मैं इसके लिये कोई दूसरा समय नियत कर लूंगा।' उसके उपरान्त इनका संगीत प्रातःकाल बन्द हुआ तो फिर सर्वथा ही अवरुद्ध हो गया।"

विष्णुशरण ने कह दिया, "मेरा संगीत तो अभी भी चलता है, परन्तु वह मन-ही-मन चलता है और अभी भी तम्हारे आने से पूर्व चला करता है। इससे वंचित तो सुरेश्वर और सुन्दरी ही हुए हैं। अब तुम इनके अभाव को पूर्ण करने लगी हो।

"परन्तु तुम्हारे स्वर में अभी वह माधुर्य और बल नहीं आया जो तुम्हारी आयु में आना सम्भव है। इसमें अभी समय लगेगा। साथ ही उद्गीथ गान से जो स्वर संधान होता है, वह किसी अन्य स्वर से नहीं होता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बाबा !" महिमा का कहना था, "आप मेरा पथ-प्रदर्शन क्यों नहीं करते ?"

"कर तो रहा हूँ ।"

"स्वयं गाकर किया करें तो मैं कृत-कृत्य अनुभव करूँगी ।"

समय व्यतीत होने लगा । एक मास व्यतीत हुआ तो चण्डीगढ़ से शम्भुदत्त का पत्र आया । लिखा था—

"जीजाजी कश्मीर से लौट आये हैं, परन्तु अपने साथ वहाँ से एक लड़की ले आये हैं । लड़की पंजाबी प्रतीत होती है । नाम सुमन है । मैं कल जीजाजी की कोठी पर यह पता करने गया था कि वह लौट आये हैं अथवा नहीं ?

"जब मैंने कोठी में प्रवेश किया तो अमृतजी अपनी नवीन पत्नी के साथ कोठी की लान में टहल रहे थे । मुझे देख पहले तो अमृतजी के माथे पर त्योरी चढ़ गयी, परन्तु एक क्षण में ही उसने अपने को नियन्त्रण में कर लिया और मुस्कराते हुए मेरी ओर बढ़कर मुझसे हाथ मिलाया और बोले, 'आइये, आपका सुमन देवी से परिचय करा दूँ ।'

"मैं उनके साथ चल लड़की के सामने जा पहुँचा । हाथ जोड़ उसे नमस्ते कही तो अमृतजी ने परिचय करा दिया । मेरी ओर देखकर कहा, 'शम्भुजी ! यह हैं सुमनदेवी । मेरी दूसरी पत्नी । यह वहाँ के एक उच्चाधिकारी की लड़की हैं । इनके पिता का नाम है भोलानाथ वर्मा । वन विभाग में सचिव हैं ।'

"इस पर मैंने कहा, 'मैं यह जानने आया था कि आप कब आये हैं ?'

'कल मध्याह्नोत्तर ही आया हूँ । हवाई जहाज़ से तीन बजे ऐयरो-ड्रोम पर पहुँचा था और कल यहाँ कॉरपोरेशन के कार्य पर पहुँचूँगा ।'

"अमृतजी के इस कथन से मैं यह समझा हूँ कि वह बिलासपुर आने वाले नहीं हैं ।

—शम्भुदत्त ।"

शम्भुदत्त का यह पत्र भृगुदत्त कथा के समय ही लेकर आया था ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्थ परिच्छेद

स्वादिष्ट-से-स्वादिष्ट मिठाई भी यदि नित्य अथवा अधिक बार खायी जाये तो वह फीकी और रस-विहीन लगती है। यह मनुष्य-स्वभाव है। यही बात उन पत्नियों की होती है जो केवल मात्र भोग-सामग्री के रूप में ही पति के उपयोग में आती हैं।

यह बात महिमा को डेढ़ वर्ष के विवाहित जीवन के उपरान्त पता लगने लगी थी। विवाह होते ही सन्तान-निरोध के उपायों के प्रयोग से कुछ समय उपरान्त उसे और उसके पति को कुछ ऐसा ही समझ आया था। विवाहित जीवन की पहली ही रात चण्डीगढ़ में पहुँचकर प्राप्त हुई और उसी रात इस विषय पर पति-पत्नी में बात हो गयी।

अमृत का कहना था, "देवी ! जब से मैंने तुमको देखा है, मैं इस रात की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

"तो मिल गयी है न वह रात ? अब आप क्या कहते हैं ?"

"अभी मिली नहीं और साथ मिलने के पूर्व ही इसके खोये जाने का भय मन में समा रहा है।"

"क्या मतलब ? जो आया है वह जायेगा ही। जो मिला है वह खोया भी जायेगा। इसमें भय की क्या बात है ? भय तो तब करना चाहिये जब कुछ अनहोनी होने वाली हो।"

"एक बात है जो अनहोनी होने वाली है। मेरा अभिप्राय है कि जो नहीं होना चाहिये और होने की सम्भावना है।"

"तनिक स्पष्ट रूप से कहिये।"

"मेरा अभिप्राय है कि सन्तान होने की सम्भावना है। इसको रोकना चाहिये।"

"कैसे रोकेंगे ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर अमृत ने उसे प्रजनन-क्रिया और उसे रोकने के लिये आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों का वृत्तान्त बता दिया।

तदनन्तर इन उपकरणों का प्रयोग नित्य होने लगा। ऐसा चलते हुए एक वर्ष और पाँच मास हो चुके थे। दिन-प्रतिदिन यह जीवन नीरस और रंग-विहीन होता चला जाता था। महिमा पहले ऊबी थी। यों तो अमृत भी ऊब गया था और यह इस जीवन को रंगीन बनाने के लिये गरिमा से सम्बन्ध बनाने का यत्न कर चुका था।

एक दिन उसने सीमा से अधिक हाथ बढ़ाया था और गरिमा चण्डीगढ़ से लौट गयी थी। उसके उपरान्त अमृत ने गरिमा से क्षमा माँग ली थी और फिर पत्र-व्यवहार में धीरे-धीरे आदम और हव्वा की पुरानी कहानी दोहरायी गयी। वर्जित फल खाने का प्रलोभन दोनों के मन में बैठा तो दोनों अपना-अपना जाल बिछाने लगे।

महिमा एकाएक यह समझी कि वह तो खाली चक्की पीस रही है? यह नीरस की मूर्ति हो गयी और उसे इससे छुट्टी पाने का एक साधन सूझा। उसने प्रस्ताव कर दिया, "आपके माता-पिता से मिलने को चित्त करता है।"

"उनसे तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?" अमृत ने पूछ लिया।

"जो आपका है।"

"मुझे तो उन्होंने जन्म दिया है।"

"और मुझे आपकी अर्धांगिनी होने से उनकी जन्म दी हुई मानी जानी चाहिये।"

"तो तुम मेरी बहिन हुई?"

दोनों हँस पड़े। महिमा ने विचार कर कह दिया, "जन्म दिये बिना भी तो माता-पिता बन जाते हैं। जैसे परमात्मा सबका पिता है।"

"वह मेरा पिता नहीं।"

"तो आपका जन्म क्या दूसरों से भिन्न प्रकार से हुआ है?"

"भिन्न प्रकार से नहीं, वरंच भिन्न माता-पिता से।"

"परन्तु और तो प्रायः सब परमात्मा को सबका माता और पिता मानते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वे भूठ कहते हैं।"

"पर मैं तो भूठ नहीं कहती। मैं तो आपके माता-पिता को अपना माता-पिता मानती हूँ।"

अमृत हँस पड़ा और पूछने लगा, "तो उनसे मिलने चलोगी?"

"हाँ, कुछ दिन उनकी सेवा में रहूँगी।"

"तो कुछ दिन की छुट्टी लेकर चलते हैं।" अमृत को महिमा की बहन गरिमा की याद आ गयी थी। उसने उसे पत्र लिख दिया कि वह कुछ दिन के लिये चण्डीगढ़ आ रहा है। तुरन्त गरिमा का उत्तर आया कि उसे बहुत प्रसन्नता होगी।

इस प्रकार दोनों के मन में बैठा शैतान कार्य करने लगा। महिमा को गरिमा का उसके पति से सम्बन्ध भला तो प्रतीत नहीं हुआ, परन्तु एक प्रकार से सुखप्रद प्रतीत हुआ। उसकी नित्य-प्रति की क्रिया में अन्तर आया। इसके साथ ही उसे सन्तान पाने की लालसा जाग्रत होने लगी।

जब गरिमा से अमृत के सम्बन्ध का ज्ञान घर के कुछ एक अन्य प्राणियों को हुआ तो अमृत को ऐसा लगा कि वे सब गरिमा को उससे छीनकर लिये जा रहे हैं। इससे घर वालों से और महिमा एवं गरिमा दोनों से तिरस्कृत वह घर छोड़ कर चल दिया। चण्डीगढ़ से कश्मीर जाते हुए वह आशा करने लगा था कि वहाँ जाकर गरिमा का आह्वान करेगा तो वह माता-पिता को छोड़ ऐसे चली आयेगी जैसे चुम्बक की ओर लौहकण आ जाता है।

गत: श्रीनगर में स्टेट होटल में रहते हुए उसने गरिमा को पत्र लिख दिया और अपने पत्र की किसी प्रकार की प्रतिक्रिया न देख वह निराश हो रहा था कि प्रफुल्लित फूल की भाँति सुमन उसकी गोद में आ गिरी।

वह किसी अफसर की लड़की नहीं थी। एक बहुत ही साधारण वन विभाग के क्लर्क की पढ़ी-लिखी लड़की अमृत के सम्पर्क में आयी तो उसके साथ ही चण्डीगढ़ चली आयी।

चण्डीगढ़ पहुँच अमृतलाल किसी-न-किसी प्रकार महिमा को वहाँ

—१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की स्थिति से अवगत कराने का उपाय विचार कर ही रहा था कि शम्भुदत्त कोठी में आ पहुँचा। उसे देख पहले तो अमृत को बुरा प्रतीत हुआ। वह उस नये स्वरूप की सूचना शम्भुदत्त के स्थान सीधा महिमा को भेजने की योजना बना रहा था, परन्तु शीघ्र ही अमृत ने यह विचार किया कि बिना यत्न के ही कार्य सिद्ध हो रहा है। यद्यपि योजना में कुछ अन्तर की आवश्यकता अनुभव हुई थी। अतः उसने तुरन्त ही अपनी योजना बदल आगे हो महिमा के भाई से हाथ मिलाया और फिर सुमन से उसका परिचय करा दिया।

अमृत ने शम्भुदत्त से चाय-पानी पूछा और तब उसे ऐसे विदा कर दिया जैसे कि कुछ विशेष बात नहीं हुई। शम्भुदत्त के जाने के उपरान्त सुमन ने कहा, "आपने इनका परिचय नहीं कराया।"

"आवश्यकता नहीं थी। यह पुनः यहाँ नहीं आयेगा। यह मेरी पहली पत्नी महिमा का बड़ा भाई है। यहाँ चण्डीगढ़ में ही काम करता है।"

"ओह! परन्तु एक समस्या तो सुलझ गयी है। हम यह विचार कर रहे थे कि कैसे मेरा यहाँ होना आपकी विवाहिता को भेजा जाये जिससे वह आपको विवाह-मुक्त करे और मैं विवाह कर सकूं।"

"मैं भी यही विचार कर रहा हूँ कि अब घटनायें द्रुत गति से चलेंगी। यह भी सम्भव है कि किसी प्रकार से यहाँ मेरे अफसरों के समक्ष मेरी शिकायत की जाये और मैं नौकरी से पृथक् कर दिया जाऊँ, परन्तु मैंने इसका विकल्प विचार किया हुआ है।"

"इस पर भी मेरी इच्छा होती है कि मैं आपकी पत्नी को उस समय देखूं जब उसे मेरे विषय में समाचार मिले।"

"क्या होगा इससे?"

"उसकी घबराहट तथा शोक-मुद्रा लेकर मज़ा आयेगा।"

"यह तो अब सम्भव नहीं। यदि मेरे बस की बात होती तो मैं केवल अपने यहाँ लौटने का समाचार उसके पास पहुंचाता और वह यहाँ मेरे पास रहने आती और तब तुम्हें उसकी दशा देखने का सौभाग्य प्राप्त हो जाता।

"खैर, अब तो आज रात तक उसे सब-कुछ पता चल जायेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और तब उस ओर से नोटिस-बाज़ी और अन्य तलाक पूर्व की प्रक्रियायें होने लगेंगी।"

इस प्रकार अमृतलाल बिलासपुर वालों की ओर से अपने नवीन विवाह की प्रतिक्रिया के लक्षण देखने की प्रतीक्षा करने लगा। किन्तु प्रतिक्रिया के किसी प्रकार के लक्षण दिखायी नहीं दिये।

: २ :

शम्भुदत्त का पत्र बिलासपुर में भृगुदत्त को मिला तो वह पत्र लेकर महिमा से मिलने चला आया। भृगुदत्त नित्य कथा सुनने आया करता था। भगवती कभी बीच में नहीं भी आती थी। घर पर बच्चों के काम से उसे अवकाश नहीं होता था। उस दिन वह भी आयी। उनका विचार था कि अब समय आ गया है कि किसी प्रकार की विचारित योजना चलायी जाये।

वे कथा के समय से पूर्व ही आये थे और महिमा अभी कथा पर जाने के लिये तैयार हो ही रही थी कि भगवती महिमा के कमरे में आ पहुँची। उसने शम्भुदत्त का पत्र उसे दिया और पूछा, "अब बताओ?"

महिमा ने पत्र पढ़ा और कहा, "मैं कुछ ऐसी ही आशा कर रही थी। जो व्यक्ति औरत को केवल मात्र विषय-भोग की सामग्री मानता हो, उससे इसके अतिरिक्त अन्य कुछ आशा भी तो नहीं की जा सकती थी।"

"अब तुम क्या करना चाहती हो?"

"माँ!" महिमा ने माँ का मुख देखते हुए पूछ लिया, "जो कुछ अब कर रही हूँ, उसमें तुम्हें किसी प्रकार की आपत्ति है?"

"तुम क्या कर रही हो? कुछ पता भी तो चले।" भगवती का मन असन्तोष से भर रहा था और वह उसे प्रकट कर रही थी।

"तपस्या और उत्क्रमण का प्रयास।"

"वह क्या होता है?"

"अपनी वर्तमान परिस्थिति से उन्नत स्थिति प्राप्त करने का प्रयत्न।"

"इससे तुम्हारे विवाहित जीवन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ने वाला ।"

"वह तो समाप्त हो रहा प्रतीत होता है। परन्तु माँ ! वह तो सबके जीवन में एक समय आरम्भ होता है और फिर जीवन रहते ही समाप्त हो जाता है। विवाहित जीवन का एक अन्य कार्य भी होता है। मैं समझती हूँ कि वह हमने आरम्भ ही नहीं किया था ।"

"अपने बाबाजी से सम्मति कर लो। मैं समझती हूँ कि वह तुम्हें कुछ सक्रिय कार्य करने की सम्मति देंगे ।"

"माँ ! तुम ही सम्मति कर लो। सम्मति कर मुझे बताना । मैं भी देख लूंगी कि कुछ करने योग्य काम है अथवा नहीं ।"

"मैं जानती हूँ कि वह तुमसे कहेंगे कि तुम अपनी इच्छा बताओ ।"

"मेरी इच्छा तो है कि कुछ न करूँ। मैंने एक दिन बाबा से पूछा था। मेरा प्रश्न था कि कहीं मुझे जीवन-भर इस घर में इस प्रकार रहना पड़े, जैसे आजकल रह रही हूँ, तो आप इसे कैसा पसन्द करेंगे ? मेरी सास भी उस समय वहाँ ही बैठी थी।

"बाबा का कहना था, 'महिमा ! मैं अब शीघ्र ही यहाँ से जाने की तैयारी में हूँ। इस कारण मैं तुम्हारे जीवन-भर की बात तो कह नहीं सकता। यह तो तुम्हें स्वयं विचार करना होगा। हाँ, इसमें मुख्य आश्रय स्थान तुम्हारी सास और श्वसुर हैं। मैं यत्न करूँगा कि वे तुम्हारी विचारित योजना में सहायक हों।'

"मैंने कहा था, 'बाबा ! मैं तो अपना जीवन किसी लोक-कल्याण कार्य में व्यय करना चाहती हूँ। परन्तु उस लोक-कल्याण करने की तैयारी भी तो करनी होगी। इस सब में समय लगेगा। कह नहीं सकती कि तब तक के लिये कितना निवास, वस्त्र, एवं भोजन की आवश्यकता रहेगी ?'

"बाबा ने मेरी सास को ही उत्तर देने के लिये कहा और मेरी सास ने कहा, 'हमारा एक ही लड़का है और वह उच्छृङ्खल हो गया है। उसका जो कुछ भी हमारे से लेना बनेगा, वह उसकी पत्नी का ही होगा। यदि वह उच्छृङ्खलता छोड़ सन्मार्ग का अवलम्बन करे तो पति-पत्नी दोनों ही हमारे साधनों का भोग कर सकेंगे; अन्यथा महिमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भी, यदि चाहे तो, वह सब कुछ मिल सकता है।

"इस आश्वासन के उपरान्त मैंने तो यहाँ इसी घर में तपस्या और उत्क्रमण के लिये जीवन व्यतीत करने का विचार बना लिया था। आज किसी प्रकार से नयी परिस्थिति नहीं हुई। इसी प्रकार की स्थिति की आशंका मेरे मन में थी और वह आज साकार सामने उपस्थित हो गयी है।"

"अच्छी बात है। मैं ही बात करूँगी। तुम यहाँ बाबा की बातों को सुन-सुन कुछ सीमा से अधिक भावुक हो रही हो।"

अमृत का पत्र विष्णुशरण की कथा के उपरान्त पाँच बड़ों के सम्मुख उपस्थित हो गया। विष्णुशरण के अतिरिक्त अमृत के माता-पिता और महिमा के माता-पिता थे। शम्भुदत्त का पत्र पढ़कर सुनाया गया और विचार होने लगा। विष्णुशरण का प्रश्न था, "यह पत्र महिमा को दिखाया गया है अथवा नहीं?"

"उसने पूर्ण पत्र पढ़ा है और कहा है कि इस समाचार से उसकी दिनचर्या में किसी प्रकार का अन्तर लाने की आवश्यकता अनुभव नहीं होती।"

"परन्तु बेटा भगवती! उसको बताया है कि वह क्या-क्या कर सकती है और उसके करने से उसे क्या लाभ एवं हानि होने वाली है?"

"मैं तो यह जानती हूँ कि वह सब-कुछ समझती है। इस पर भी वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ की भाँति समझ नहीं सकी कि क्या करना चाहिये?"

"देखो भगवती! वह तलाक के लिये याचिका कोर्ट में उपस्थित कर सकती है। वह गुज़ारे के लिये प्रार्थना कर सकती है। वह पृथकता के लिये भी प्रार्थना कर सकती है। मैं समझता हूँ कि वर्तमान अवस्था में जो कुछ भी वह चाहे प्राप्त हो सकता है। तदनन्तर उसके नवीन विवाह का भी प्रबन्ध हो सकता है।"

भगवती ने कहा, "बाबा! आप उसे जो उचित समझें समझायें।"

"और बेटा भगवती! उसके लिये तुम क्या ठीक समझती हो?"

"आजकल के बच्चों के विचार करने की दिशा को देखते हुए मैं समझती हूँ कि उसे तलाक के लिये यत्न करना चाहिये। तदनन्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवीन विवाह की इच्छा करनी चाहिये।"

"तो बेटी ! तुम्हें उसे यह सम्मति देनी चाहिये थी।"

"मैं घर से तो यही विचार कर आयी थी, परन्तु मेरे मुख से यह सब बात निकली ही नहीं। इसी कारण मैं बाबा से सहायता की आशा से आयी हूँ।"

विष्णुशरण हँस पड़ा। वह हँसते-हँसते एकाएक गम्भीर हो बोला, "भगवती ! तुमको यह तो विचार करना चाहिये था कि तुम उसके सम्मुख अपने मन की बात क्यों नहीं कह सकी ?"

"अब आपकी कथा के पूर्ण समय में यही विचार कर रही थी कि मैंने उसे सब बात क्यों नहीं बतायी ? मैं तो कारण समझ नहीं सकी कि क्यों कह नहीं सकी अथवा क्यों मन की बात कहने में मुझे झेंप आ गयी थी।"

"तो सुनो, मैं अपना अनुमान बताता हूँ कि क्यों तुम अपनी लड़की को वह बात नहीं कह सकी जो तुम घर से विचार कर आयी थी ? विचारित बात थी वर्तमान युग की पुकार। और वह तुम्हारे संस्कारों से मेल नहीं खाती। तुम बचपन से विवाह को एक अटूट सम्बन्ध मानती रही हो और भगवान् जाने तुम्हारा पति के साथ कितनी बार मतभेद और व्यवहार-भेद हुआ होगा परन्तु उससे तुमने कभी विवाह सम्बन्ध तोड़ने का विचार भी नहीं किया होगा। ऐसा प्रायः सबके जीवन में होता रहता है।

"हम हिन्दू संस्कारों में पले हुए व्यक्ति कठोर-से-कठोर दबाव पड़ने पर भी विवाह सम्बन्ध को तोड़ने की बात नहीं सोचते रहे। इस कारण हमें अपनी लड़की को यह सम्मति देने में झेंप आनी स्वाभाविक है।

"यह बुद्धि और संस्कारों का विवाद है। इस कारण मेरी सम्मति यह है कि महिमा को ही इन दोनों के विवाद में निश्चय करने दें। उसके मन में भी यह विवाद उठा होगा। हिन्दू ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हो तथा बीस वर्ष तक उसमें रहने के संस्कार वर्तमान शिक्षा और डेढ़ वर्ष तक पति के घर के वातावरण ने मिटाये प्रतीत नहीं हुए। इसमें मेरी सम्मति यह है कि हमें उसे वह द्वार दिखा देना चाहिये जो मूर्ख अमृत ने उसके लिए खोल दिया है। साथ ही उसे आश्वासन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना चाहिये कि जब भी और कुछ भी वह करना चाहेगी, हम उसमें उसकी यथा शक्ति सहायता करेंगे।

"इसमें इस घर में रहने और हम बड़ों के चल बसने के उपरान्त वह क्या आशा कर सकती है, उसे बताया जा चुका है। वह इस नयी परिस्थिति में भी रहना चाहे तो रह सकेगी।"

"परन्तु।" अब भृगुदत्त ने बात में हस्तक्षेप करते हुए पूछ लिया, "बाबा! अमृत भी तो इस घर पर किसी प्रकार का दावा रखता है। उसका विचार कर ही बात कहनी और करनी चाहिये। मैं यह कल्पना कर रहा था कि महिमा कचहरी में तलाक की याचिका उपस्थित करेगी और उस पर दुश्चरित्र होने का आरोप लगायेगी। इसके सिद्ध होने पर उसकी नौकरी पर भी प्रभाव पड़ेगा। कहीं वह बेकार हो गया और उसे घर की आय पर आश्रित होने की आवश्यकता पड़ी तो क्या होगा?"

इस पर सुरेश्वर ने कहा, "इस वर्तमान परिस्थति में मैं अपनी पूर्ण सम्पत्ति का इच्छा-पत्र अभी लिख देता हूँ और उसमें यह लिख देता हूँ कि यदि महिमा वर्तमान स्थिति में ही रहना पसन्द करेगी तो वह सब सम्पत्ति जो अमृत को मिलने वाली है, वह महिमा को मिले।"

यद्यपि भृगुदत्त को यह सब कुछ सुखकर अनुभव हो रहा था, परन्तु उसका मन भीतर-ही-भीतर यह कह रहा था कि इस मूर्ख युवक को इतने से अकल नहीं आयेगी। इससे कुछ अधिक होना चाहिये। साथ ही वह यह विचार कर रहा था कि यदि तलाक के लिये याचिका न की गयी तो सम्भवतः वह अपने पद पर कार्य करता रहेगा और उसमें उन्नति करता रहेगा। यह उसके मन की बात ही थी, परन्तु वह इस बात को कह नहीं सका। ऐसा करने से वह मन में बदले की भावना रखने वाला समझा जा सकता था। इस कारण वह मौन हो गया।

इस पर विष्णुशरण ने कह दिया, "मैं समझता हूँ, भगवती बेटी को चाहिये कि वह अपना सुभाव महिमा के सामने रखे, और उसे स्वतन्त्रता से विचार कर निर्णय करने दे। अपने व्यवहार का निर्णय कर उसे हमसे उसमें सहायता माँगनी चाहिये।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार बात पुनः महिमा के पास जा पहुँची। कथा के उपरान्त सब बच्चों को चाय पर भेज कर ही यह पाँच बड़ों की गोष्ठी हो रही थी। अतः भगवती और भृगुदत्त उठ चाय के कमरे में चले गये। सुरेश्वर और सुन्दरी भी चाय पीने के कमरे में जा रहे थे। एकाएक सुन्दरी लौट आयी और बाबा के सामने बैठ बोली, "बाबा! आज के समाचार से मेरे मन में अमृत के विषय में भारी चिन्ता उत्पन्न हो रही है।"

"हाँ। चिन्ता का विषय तो है ही। परन्तु मुझे कुछ ऐसा समझ आ रहा है कि अमृत सागर में मिलकर विलीन हो गया है। उसे पुनः प्राप्त करने के लिये सागर का मंथन करना पड़ेगा। कह नहीं सकता कि इस सागर को मंथन करने के लिये और उसमें से अमृत निकालने के लिये कितना परिश्रम करना पड़ेगा और कितना समय लगेगा?"

"बाबा! बहुत कठिन समस्या आ उपस्थित हुई है।"

"हाँ। परन्तु तुम क्या करना चाहती हो? बताओ, इस कठिनाई में से निकलने के लिये क्या करना चाहती हो?"

"मैं तो केवल यह कह रही हूँ कि अमृत वापस मिलना चाहिये। इस मलिन और क्षारमय सागर में तो वह गल-सड़कर जन्म-जन्मान्तर के लिये घोर कष्ट में ग्रस्त हो जायेगा।"

"ठीक है। सागर-मंथन के लिये साधन और सहायक तो ढूँढने पड़ेंगे। परन्तु इससे महिमा की समस्या पृथक् है। मेरी बुद्धि में तो यही बात आती है कि महिमा को हमारी सहायता और सहयोग का आश्वासन मिलना चाहिये और इस प्रकार आश्वस्त हो उसे अपना मार्ग स्वयं चुनना चाहिये।"

चाय के उपरान्त भगवती पुनः महिमा से पृथक् में बात करने चली गयी।

महिमा ने वह सब बात सुनी जो बाबा ने कही थी और जो भगवती ने मार्ग-दर्शन किया था। सब सुनकर उसने कह दिया, "माँ! तुमको अब मेरे विषय में कुछ भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। मैं अब अपने को पहले से अधिक स्वतन्त्र हो गयी अनुभव करती हूँ। एक बन्धन था जो आप लोगों ने निर्माण किया था। उसका उद्देश्य चाहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भी रहा हो, परन्तु था तो वह बन्धन ही और पीछे जाकर वह बन्धन उद्देश्यहीन प्रतीत होने लगा था।

"वह उद्देश्य गया और उसके साथ ही अब बन्धन भी गया है। यह सन्तोष का विषय ही होना चाहिये।"

"क्या जीवन-भर इस प्रकार चल सकेगा?"

"नहीं चल सकेगा तो नहीं चलेगा। मुझे इससे कुछ अधिक मोह नहीं रहा।"

माँ ने समझाने का यत्न किया और कहा, "वचन भंग करने वाले को दण्ड देना चाहिये।"

"ठीक है। जब दण्ड देने की सामर्थ्य होगी तो दूँगी। इस समय तो उसे देने चलूँगी तो अपने को और अपनों को ही दण्डित करने लगूँगी। माँ, मैं अपने को एक त्यक्ता पत्नी और नवीन विवाह की प्रत्याशी घोषित करने की इच्छा नहीं रखती। न ही मैं उनके माता-पिता को जो मुझ पर संरक्षण का हाथ रखे हुए हैं, किसी प्रकार का क्लेश पहुँचाना चाहती हूँ।"

भगवती का अपना मस्तिष्क लड़की के विचार सुन ठण्डा हो गया। एक बात उसने माँ को कही जिसने पूर्ण वार्तालाप का उपसंहार प्रस्तुत कर दिया। उसने कहा, "माँ! मैं कामाभिभूत नहीं हूँ जो पति के न मिलने से पागल हो हाट-हाट पर पति की खोज करती फिरूँगी।"

: ३ :

"माली सरस्वती नदी के तट पर धौम्य ऋषि के आश्रम में भारी समारोह और उस समरोह का उद्देश्य सुन लंकापुरी को लौट गया। वहाँ उसने अपने अन्य दोनों भाईयों को धौम्य आश्रम पर श्रीहरि परमात्मा के आह्वान की बात बतायी तो माल्यवान ने पूछ लिया, 'कितने लोग थे वहाँ?'

'चार पाँच सहस्र रहे होंगे। वे एक बड़े से कुण्ड में लकड़ियाँ जला उसमें कलछों से घी डाल-डाल अग्नि को तीव्र कर रहे थे और साथ बहुत से लोग स्वर सहित कुछ गाते थे।

'वहाँ पर एक व्यक्ति से पूछने पर पता चला कि वे ईश्वर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आह्वान कर रहे थे कि वह हमारा हनन कर उनका उद्धार कर सकें।'

"यह सुन तो माल्यवान खिलखिलाकर हँस पड़ा। हँसते हुए उसने कहा, 'माली ! चार-पाँच सहस्र नहीं, कई लाख भी ऐसे लोग, जो अपने मुसीबत टालने के लिये किसी दूसरे का मुख देखते हैं, कुछ नहीं कर सकते। जो स्वयं अपनी सहायता नहीं कर सकते, उनकी कोई भी सहायता नहीं करेगा।

'साथ ही परमात्मा की बातें मैंने भी सुनी हैं, परन्तु आज तक उसके दर्शन नहीं हुए। हमारी लाखों की संख्या में सशस्त्र सेना का आज कोई विरोध नहीं कर सकता। मैं तो देवलोक पर भी आक्रमण की योजना बना रहा हूँ। मन में आता है कि देवलोक की सब सुन्दर अप्सराओं के गले में रस्सा डालकर यहाँ लंकापुरी में ले आऊँ और उनको अपने सैनिकों में बाँट दूँ।

'परन्तु मैं अपने पिता के संरक्षक महादेव को रुष्ट करना नहीं चाहता। इतना तो मैं जानता हूँ कि अभी तक वह हमारे विरुद्ध नहीं है। परन्तु वह कहीं रुष्ट हो गये तो कठिनाई उपस्थित होगी। उनकी एक शक्ति से हमने कई लाख प्रजा को मार भस्म कर डाला था और हमारे पिता ने यह बताया था कि उनके पास वैसी शक्तियाँ कितनी ही हैं और साथ ही उससे भी बढ़िया अस्त्र उनके पास हैं। इसी कारण वह महादेव कहलाते हैं।

'यदि उनका भय न होता तो आज से बहुत पूर्व में देवलोक को विजय कर चुका होता।'

'भैया !' माली ने गम्भीर हो कहा, 'धौम्य ऋषि के आश्रम में कहीं महादेव का ही आह्वान न किया जा रहा हो। बात यह है कि वे सब बड़े ज़ोर से कुछ बोल रहे थे।

'वह धौम्य ऋषि बता रहे थे कि सबने एक मत होकर उनको ब्रह्मा नियुक्त किया है और यज्ञ के ब्रह्मा का ईश्वर से सम्पर्क बन गया तो क्या होगा ? कहा नहीं जा सकता।'

'कुछ नहीं होगा।' माल्यवान ने कहा।

"यद्यपि माल्यवान ने ऋषि-आश्रम पर यज्ञ और परमात्मा के आह्वान की अवहेलना की थी और हँसी उड़ायी थी, परन्तु वह एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुशल शासक होने के नाते अपने भाई की सूचना पर निष्क्रिय नहीं रह सका। उसने अपने भेदिये सरस्वती तट पर उस यज्ञ के परिणामों को जानने के लिये भेज दिये।

"भेदियों को यह आज्ञा थी कि वे समाचार लायें कि उनके यज्ञ का क्या परिणाम हुआ है और वे राक्षसों का संकट टालने के लिये क्या करने वाले हैं ? इसके साथ ही माल्यवान ने अपनी सेना को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित करना आरम्भ कर दिया। वह एक बात से भयभीत था कि इन ऋषियों और उनके शिष्यों के आर्त्तनाद को सुन कहीं महादेव अथवा इन्द्र इन लोगों पर दया कर इन्हें किसी प्रकार का दिव्यास्त्र न दे दें जो वे चुपचाप आकर पूर्ण लंका नगरी को ही फूँक दें। माल्यवान शिव की महान् शक्ति का प्रभाव देख चुका था। कि जो शस्त्रों की तीव्रता से हो सकता है, वह सैनिकों की संख्या बढ़ाने से टाला भी जा सकता है। वह लाखों को समाप्त कर भी शक्ति को निस्तेज करने की आशा कर रहा था।

"इस पर भी वह दूसरे पक्ष की पूर्व सूचना चाहता था। उसके भेदियों को सरस्वती तट पर जा जाँच-पड़ताल करने और लौटने में छः मास लग गये।

"भेदियों ने वापस आकर सूचना दी, 'महाराज ! धौम्य ऋषि का आश्रम सूना पड़ा है। पहले वर्ष वहाँ एक बहुत बड़ा यज्ञ किया गया था और फिर सब एकत्रित लोग पश्चिम की ओर चले गये हैं। वहाँ पर अन्य आश्रमवासी ठीक-ठीक तो नहीं बता सके, परन्तु उनका अनुमान था कि वे किसी लोकपाल से सहायता लेने गये हैं।'

"इस पर माल्यवान ने अपने भेदियों को द्रुतगामी अश्वों पर सरस्वती नदी से पश्चिम की ओर खोज करने भेज दिया।

"माल्यवान के दूत पश्चिम दिशा को जाते-जाते क्षीर सागर के तट पर जा पहुँचे। सागर में एक द्वीप में भगवान् विष्णु का प्रासाद था और प्रासाद की रक्षा के लिये सहस्रों सुभट्टों की सहायता से शेषनाग नाम का नाग जातीय योद्धा नियुक्त था। वह अपने सहस्रों सुभट्टों से सुरक्षा की छतरी महाराज भगवान् विष्णु और उनके परिवार पर छाये रखता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जब धौम्य ऋषि के नेतृत्व में दक्षिण के विस्थापितों का प्रतिनिधि मण्डल क्षीर सागर तट पर पहुँचा तो विष्णु को सूचना भेजी गयी और ऋषि को पाँच विस्थापितों के साथ द्वीप पर आने की स्वीकृति मिल गयी।

"धौम्य ऋषि ने ब्राह्मणोचित्त आशीर्वाद दिया और अपने साथियों की याचिका उपस्थित कर दी। ऋषि ने कहा, 'महाराज ! कई सौ वर्ष पूर्व पितामह ब्रह्मा की स्वीकृति से देवलोक के कुछ रक्ष और यक्ष दक्षिण के द्वीपों में जाकर बस गये थे। उन लोगों ने वहाँ पर अपने परिवार चलाये और फिर राज्य संगठित कर लिया। दक्षिण सागर के प्रायः द्वीपों पर उनके आधिपत्य हैं। आरम्भ में तो ये राजा बहुत ही धर्मात्मा और सद्चरित्र थे, परन्तु भगवान् शिव नें इनके एक बालक की पालना की थी। नाम था सुकेश। वह देवलोक के ज्ञान-विज्ञान के आश्रय अपने राज्य की उन्नति करने में सफल हो गया। उसने जम्बू द्वीप के विन्ध्य पर्वत से दक्षिण तक अपने राज्य का विस्तार कर लिया। यद्यपि उसका राज्य नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ राज्यों में नहीं था; इस पर भी राज्य के लोग धन-धान्य से परिपूर्ण और अत्याचार तथा दुर्व्यवहार से मुक्त थे। परन्तु उसकी पत्नी कला एक गांधार कन्या थी और वह अपनी माता के देश से बिना भगवान् हरि के संरक्षण के ले आयी गई और उस पति-विहीन कला नें दक्षिण द्वीपों के राज्य में अत्याचार, दुराचार, लूट-खसूट और व्यभिचार की अपार सृष्टि कर दी है। राजा भी प्रजा समान ही आचार-विचार का हो रहा है।

"परिणाम यह हो रहा है कि विन्ध्य में दक्षिण के लाखों लोग अपनी जान बचाने के लिये विन्ध्य से उत्तर की ओर चले आये हैं। इनको पकड़-पकड़ कर दास बना लंका में ले जाया जाता है और वहाँ इनसे कठोर परिश्रम-युक्त काम लिया जाता है और इनके स्त्री-वर्ग से वेश्यावृत्ति करायी जाती है।

'उस क्षेत्र में लाखों की संख्या में सैनिक हैं और उनसे किसी भी भले व्यक्ति की धन-सम्पदा एवं स्त्रियां सुरक्षित नहीं हैं।'

'तो ये लोग यहाँ किसलिये आये हैं ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"धौम्य ऋषि ने बताया, 'एक ओर संगठित राज्य है और दूसरी ओर ये शस्त्रास्त्रहीन व्यक्ति हैं। इन पर घोर कठिनाई आन पड़ी है और सुसंगठित राज्य का ये लोग विरोध नहीं कर सके।'

'ये अपना राजा नियुक्त कर स्वयं युद्ध की तैयारी क्यों नहीं कर लेते ?'

'भगवन् ! इनको ज्ञान-विज्ञान से वंचित किया जा रहा है। अतः इस निर्धन, बेघर और साधन-विहीन लोगों में कोई राज्योचित्त लक्षणों से युक्त व्यक्ति उत्पन्न ही नहीं होता।'

'तब तो इन लोगों को पितामह के पास जाना चाहिये जो इनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध करने के लिये ऋषियों को भेज दें।'

'महाराज ! उनके पास इस विषय की याचिका की गयी है और उन्हीं की प्रेरणा से पूर्ण विन्ध्य पर्वत के साथ-साथ आश्रम खोले गये हैं, परन्तु यह शिक्षा और संस्कार तो एक-दो दिन में फलीभूत नहीं हो सकते। अभी तो उन आश्रमों से दीक्षित लोग सीमित संख्या में ही निकले हैं। साथ ही उन शिक्षितों को स्थापित होने का अवसर ही नहीं दिया जाता है।'

'परन्तु ऋषिवर ! हम क्या कर सकते हैं ?'

'ये लोग महर्षि भारद्वाज के नेतृत्व में भगवान् शिव के दरबार में उपस्थित हुए थे, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि माता पार्वती का स्नेह सुकेश से अभी भी बहुत प्रबल सिद्ध हुआ है और भगवान् शिव पार्वतीजी को रुष्ट करने के भय से इन दुःखिया लोगों के लिये कुछ नहीं कर सके। महर्षि भारद्वाज तथा ये लोग वहाँ से निराश लौट आये हैं।

'अब ये आपकी सेवा में उपस्थित हुए हैं और आशा करते हैं कि आप इनके कष्ट निवारण करने का कोई उपाय करेंगे।'

'कैसे कष्ट निवारण किया जा सकता है ?'

'महाराज ! यह नियम है। यथा राजा तथा प्रजा। हमारा विश्वास है कि यदि लंका नरेश को इस संसार से चलता कर दिया जाये तो प्रजा को सन्मार्ग दिखाना सहज है।'

'ऋषिवर ! क्या हम हत्यारे का कार्य निभायें। नहीं, यह हमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर सकते ।'

'परन्तु भगवन् ! राजा की हत्या तो सम्भव नहीं जब तक उसके लक्ष-लक्ष सैनिकों को मृत्यु का द्वार न दिखाया जाये । इसके लिये युद्ध की आवश्यकता होती है और सैनिक संगठन के विपरीत युद्ध जन-साधारण नहीं कर सकता । इसके लिये श्रीमान् जैसे नरेशों की सहायता की आवश्यकता रहती है ।'

'परन्तु वह स्थान इतनी दूर है कि वहाँ जाकर युद्ध का अभियान चलाया नहीं जा सकता । आप लोग वहाँ पर विरोधी आन्दोलन उठायें । आप वहाँ संगठन तैयार करें तब हम यहाँ से धन और शस्त्रास्त्र की सहायता कर सकते हैं ।'

"धौम्य ने बहुत अनुनय-विनय की, परन्तु भौगोलिक एवं सामरिक कठिनाइयों का वर्णन कर भगवान् विष्णु ने याचिका अस्वीकार कर दी ।

"प्रतिनिधि मण्डल में घोर निराशा छा गयी । ये लोग द्वीप से लौट आये और सागर तट पर ठहरे हुए अपनी लम्बी यात्रा के निरर्थक जाने पर शोक मनाने लगे ।

"धौम्य ऋषि को एक बात सूझी । उसने अपनी पत्नी सुरुचि से सम्मति की और उसकी ओर से एक याचिका कर महारानी लक्ष्मी की सेवा में भेजी गयी ।

"इस याचिका में यह कहा गया कि कुछ स्त्रियाँ एक सहस्र योजन की यात्रा कर यहाँ आयी हैं और महारानीजी के दर्शन करने की उत्कट इच्छा करती हैं ।

"लक्ष्मी दर्शन देने के लिए मानीं तो सुरुचि ने अपने साथ एक सौ ऐसी स्त्रियाँ चलने के लिये तैयार कीं राक्षस लोग जिनके स्तन काट कर ले गये थे ।"

: ४ :

"स्त्रियों का यह प्रतिनिधि मण्डल द्वीप पर जा राज्य-प्रासाद में महारानी लक्ष्मी के सामने उपस्थित हुआ और औपचारिक वेदना तथा भेंट-पूजा के उपरान्त सुरुचि ने साथ आयी स्त्रियों का परिचय करा दिया । उनमें से कुछ धनीमानी सेठों की स्त्रियाँ तथा लड़कियाँ थीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कुछ वहाँ के विद्वानों के घर से थीं।

'ये लोग किस कारण इतनी दूर आये हैं?' एक स्वाभाविक प्रश्न था।

"इस पर सुरुचि ने उनके इतनी लम्बी यात्रा पर आने का उद्देश्य बता दिया।

'तो इनको वहाँ बहुत कष्ट था?' सरल चित्त लक्ष्मी का प्रश्न था।

"सुरुचि ने कुछ उद्विग्न हो कहा, 'महारानीजी! यदि आप कहें तो इनके कष्ट का एक बहुत ही छोटा-सा चिह्न आपको दिखाया जा सकता है।'

"लक्ष्मी अभी विचार ही कर रही थी कि वह क्या चिह्न हो सकता है कि सुरुचि के संकेत करने पर स्त्रियों ने अपनी छातियाँ नंगी कर दिखा दीं। उनकी छातियों पर स्तनों के कट जाने के स्थान पर बड़े-बड़े घावों के चिह्न देखकर लक्ष्मी को विस्मय हुआ और उसने पूछ लिया, 'यह क्या है?'

'इन पर अत्याचार करने वालों ने इनके स्तन काट लिये हैं। प्राय: सब पर बलात्कार किया गया और फिर इनके स्तन काट कर ले गए हैं।',

'किसलिये?'

'महारानीजी! वे इनको भून-भून कर खाते हैं। ऐसा लाखों स्त्रियों के साथ किया गया है और उनको इस मातृ कार्य से वंचित कर दिया गया है।'

"लक्ष्मी को इन स्त्रियों के शरीर पर स्तनों के स्थान पर बड़े-बड़े घावों के चिह्न देख रोमांच हो आया। उसने पूछा, 'तो यह भगवान् को दिखाया गया है?'

'महारानीजी!' सुरुचि का उत्तर था, 'स्त्री सुलभ लज्जा के कारण ये एक पुरुष के सामने अपनी इस विकृत्ति का प्रदर्शन नहीं कर सकीं। वैसे मौखिक रूप से इनके कष्ट का वर्णन भगवान् से किया गया है।

'परन्तु महारानीजी! ये सब इस द्वार से निराश लौट रही हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों को इतनी दूर की यात्रा के निष्फल जाने का बहुत दुःख हुआ है, परन्तु जब इस भूमण्डल के देवता ही अपना कर्तव्य पालन करना छोड़ दें तो फिर यहाँ रहने में अर्थ ही क्या रह गया है ? तब यह स्थान रहने योग्य नहीं हो सकता। वह वन-पशुओं का निवास ही रह जाये तो ठीक है।'

"इन स्त्रियों को स्त्री लक्षणों से वंचित देख लक्ष्मी की आँखों में आँसू भर आये थे। कितनी ही देर तक वह इन दुःखिया प्राणियों की असहाय अवस्था पर चिन्तन करती रहीं और फिर एकाएक बोल पड़ीं, 'मेरी सम्मति है कि अभी निराश होने का अवसर नहीं। तुम अब जाओ और कल फिर एक याचिका भगवान् से करना। कदाचित् इस बार वह अस्वीकार नहीं की जायेगी।'

"महर्षि धौम्य की योजना सफल हुई। धौम्य ऋषि ने अगले दिन एक याचिका यह की, 'हम लोग यहाँ से निराश लौटने के समय भगवान् के दर्शन करने की इच्छा करते हैं। हमें दर्शन प्रदान किया जाये।'

"याचिका स्वीकार हुई तो धौम्य कुछ विस्थापित श्रेष्ठ जनों को साथ लेकर राज्यप्रासाद में जा पहुँचा।

"पिछली रात भगवान् विष्णु और उनकी पत्नी लक्ष्मी में एक लम्बा विवाद हुआ था। लक्ष्मी इन विस्थापितों की सहायता के लिये कह रही थी और भगवान् विष्णु समर की कठिनाइयों का वर्णन कर रहे थे।

"सहायता की आवश्यकता, इसके औचित्य और इसके उपायों पर लम्बे वार्तालाप पर बातचीत होती रही। बात अनिर्णीत हो समाप्त होने वाली थी कि लक्ष्मी ने कह दिया, 'एक समय मैं दैत्यों के नगर को छोड़ देवलोक में आ गयी थी। स्मरण है किसलिये ?'

"विष्णु को स्मरण था, परन्तु वह उस घटना की वर्तमान से संगति नहीं बैठा सका। उसने पूछ लिया, 'स्मरण है देवी ! परन्तु इतने वर्षों के उपरान्त यह बात आज किसलिये हो रही है ?'

'इस कारण कि मैं यह स्थान भी छोड़कर जा सकती हूँ। जहाँ धर्म का पालन नहीं होता वहाँ लक्ष्मी का निवास नहीं रह सकता।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पर मैंने कौन-से अधर्म का पालन किया है ?'

'देखिये भगवन् ! संसार में धर्म और अधर्म दो प्रकार के ही कर्म हैं। तीसरी प्रकार का कर्म नहीं होता। अकर्म भी या तो धर्म होता है अथवा अधर्म। आप अकर्म का अवलम्बन कर रहे हैं और यह धर्म की अवहेलना है। निस्सन्देह आप अधर्म कर रहे हैं।

'लक्ष्मी बलपूर्वक अधर्मियों के घर में रखी जा सकती है, परन्तु यह वहाँ रहती हुई अपनी शोभा, ऊर्जा और दिव्यता-विहीन हो जाती है।'

''यह चुनौती विष्णु सहन नहीं कर सका। उसने कहा, 'मैं चाहता हूँ कि इन दीन-दुःखियों का त्राण करूँ, परन्तु कैसे किया जाय, यह मैं समझ नहीं सका।'

'भगवन् ! आप सामर्थ्यवान हैं और फिर देवताओं ने समुद्र-मंथन के समय समुद्र की सब विभूतियाँ आप आदित्यों को सौंप दी थीं। वे आपके प्रासाद के आगार को सजाने के लिए नहीं थीं। समय आने पर प्रयोग के लिये थीं। आप सुदर्शनचक्र के स्वामी भला मुझ अबला से पूछते हैं कि दुष्टों का दमन किस प्रकार हो सकेगा ?'

''विष्णु को चेतना हो गयी। साथ ही वह यह बात जानता था कि उसकी पूर्ण विभूति लक्ष्मी के कारण है और वह हठी स्त्री अपने मन की बात किये बिना नहीं रहेगी।

''अतः वह अपनी प्रिय रानी को प्यार से देखते हुए बोला, 'यदि तुम कहती हो तो ऐसा ही होगा। माल्यवान इस संसार में नहीं रहेगा, परन्तु ऐसा करने के लिये लाखों की हत्या करनी पड़ेगी।'

'परन्तु महाराज ! पापी तो पाप करते ही मर जाता है। जिन स्तनों से दूध पी-पीकर पुरुष पलते हैं, उन्हीं को काट-काट कर और भून-भून कर खा जायें, यह बात तो असह्य है। ऐसा करने वालों का समूल नाश होगा अथवा यह पृथ्वी श्रीविहीन हो जायेगी।'

''विष्णु लक्ष्मी की आँखों से अविरल आँसू बहते देख चंचल हो उठा। वह उठा और हाथ खड़ा कर बोला, 'राक्षसों का नाश होगा ? देवी ! निश्चिन्त रहो।'

—१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अगले दिन विष्णु ने धौम्य ऋषि को बुलाया और कहा, 'हम आपका त्राण करेंगे। अब आप लोग निर्भय हो अपने घरों को लौट जाओ। वे लोग जो राक्षसों के राज्य में रहते हैं, अपने घरों को लौट जावें। उनके उस क्षेत्र में पहुँचने से पहले मैदान साफ होगा।'

"धौम्य ऋषि प्रसन्नता से उछल पड़े और भगवान् विष्णु की जय-जयकार करने लगे। ये लोग इस प्रकार का आश्वासन ले सागर के इस पार आ गये और प्रसन्नता के उद्गार में विष्णु भगवान् की जय-जयकार करते हुए भारतवर्ष की ओर चल पड़ें।

"माल्यवान के भेदिये इन लोगों से तब मिले जब ये भारतवर्ष की ओर लौट रहे थे। उन्होंने धौम्य ऋषि से सब सूचना प्राप्त की और तदनन्तर अपने अश्वों पर सवार हो लंका की ओर भागे। वे चाहते थे कि अपने स्वामी को यह सूचना दे दें।

"भगवान् विष्णु का विचार था कि वह अकेला ही अपने गरुड़ विमान पर सवार होकर सुदर्शनचक्र से युद्ध कर राक्षसों को पराजित करेगा। उस समय उसका अनुमान था कि राक्षसों की एक विशाल सेना से उसका सामना होगा, परन्तु उसे अपने सुदर्शनचक्र का इतना भरोसा था कि वह अपनी विजय पर अविचल विश्वास रखता था।

"जब भगवान् विष्णु के युद्ध पर आने का समाचार माल्यवान इत्यादि को मिला तो माल्यवान ने विचार किया कि युद्ध-भूमि लंका द्वीप नहीं होनी चाहिये। वह लंका से अपने कोटि-कोटि सैनिकों को लेकर विष्णुलोक को ही चल पड़ा। इतना तो वह जानता था कि अपने घर में बैठे-बैठे युद्ध करने से एक ही युद्ध में वारा-न्यारा हो जायेगा।

"तीनों भाई सेना के साथ उत्तर की ओर चल पड़े। वह यह आशा तो करते थे कि युद्ध होगा और इसके लिये लड़ने के लिये सहस्रों योद्धा आयेंगे, परन्तु उनके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब अकेला विष्णु गरुड़ विमान में बैठा हुआ इनकी ओर बढ़ता दिखायी दिया।

"जब राक्षस सेना विष्णुलोक पर आक्रमण करने चली तो सेना की संख्या और आकार-विस्तार देख लोग यह समझे थे कि विष्णु-लोक का भूतल पर से लोप ही हो जायेगा। इससे भले लोगों का चित्त भीतर-ही-भीतर बैठ रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह समाचार कि राक्षसों की सेना विष्णुलोक को जा रही है, कैलाशलोक में भी पहुंचा । शिव ने यह पार्वती को बताया तो वह चिन्ता से ग्रसित पूछने लगी, 'अब उन बेचारों का क्या होगा ?"

'विष्णु इन सबका विनाश कर देगा और यदि ये अपने पापमय कर्मों को छोड़ेंगे नहीं तो स्वर्णमयी लंका राख का ढेर हो जायेगी ।'

'भगवन् ! इनकी रक्षा करनी चाहिए ।'

'किसलिये ?'

'वे मेरे पुत्र समान के पुत्र हैं । मेरा उनसे स्नेह है ।'

'वे अति दुराचारी हैं । मैं तो उस समय ही अपना त्रिशूल लेकर इनकी हत्या कर देता जब दक्षिण के लोग मेरी सहायता माँगने आये थे, परन्तु तुम्हारे विचारों को जान मैंने उनकी हत्या करने के लिए वहाँ जाने से इन्कार कर दिया था । तुमको मैं नाराज़ नहीं कर सका, परन्तु संसार में दूसरे लोग भी हैं जो मेरे जितनी अथवा मुझसे भी अधिक शक्ति के स्वामी हैं ।'

'इनका अनिष्ट होने पर मुझे बहुत दुःख होगा ।'

'परन्तु देवी ! मैं इसमें कुछ भी नहीं कर सकता । मेरी सम्मति मानो तो तुम इन मूर्ख लड़कों को कहला दो कि देवताओं से सन्धि कर लें तो सुख पायेंगे ।'

"पार्वती ने इसी आशय का एक पत्र माल्यवान के नाम लिखकर भेज दिया । पत्र विमान द्वारा गया और उत्तर आया । पार्वती को माल्यवान ने लिखा, 'सन्धि तब हो सकती थी जब उनकी ओर से हमारे विरुद्ध कोई आरोप लगाते तो हम उनके समक्ष अपनी सफाई उपस्थित कर देते और क्षमा माँग लेते । परन्तु इन्होंने न तो हमसे पूछा और न ही हमारा कोई दोष बताया है । इस कारण सुलह और सन्धि करें तो किस प्रकार करें ?

'हमने अपनी सेना लंका से दूर भेज उनको मार्ग में ही रोकने का निश्चय किया है । कारण यह कि हम अपने देश को युद्ध-भूमि बनाना नहीं चाहते ।

'अब मैं सेना को वापस भी नहीं बुला सकता । ऐसा करने से तो सेना मेरे ही विरुद्ध हो जायेगी । वे लोग जो हमारे परिवार के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने प्राणों की बाज़ी लगा बैठे हैं, उनकी बात अस्वीकार नहीं कर सकूंगा।'

"पार्वती ने पत्र भगवान् शिव को सुनाया तो उसने यही कहा, 'जो होना है वह होकर ही रहेगा। भाग्य को टाला नहीं जा सकता।'

'आप इनके लिए कुछ तो करिये।'

'मैं जो कर सकता हूँ, वह कर दिया है। परन्तु उसका कुछ भी लाभ नहीं हुआ। मेरे कार्य की दिशा यही थी कि इनको सन्मार्ग दिखाऊँ। पहले मैंने अवसर दिया था कि ये बालक समझ जायें। इनको ज्ञात होना चाहिये था कि प्रजागण अति कष्ट में हैं जो इन दुर्गम स्थानों पर लाखों की संख्या में यात्रा कर आये हैं। मेरे मौन रहने और उनकी सहायता के लिए उद्यत न होने का अर्थ तुम्हारे बालक समझे नहीं। अब लोगों का विष्णु के पास जाना भी इसी बात का सूचक है कि वे अति आतुर हैं।

'इस पर भी उनके सावधान न होने पर तुम्हारे द्वारा उनको सचेत किया है। इस पर भी ये समझे नहीं।'

'आप विष्णु को कहकर इनको सुधरने के लिये एक अवसर और दीजिये।'

'यह सम्भव नहीं।'

: ५ :

"जब राक्षसों ने विष्णु को अकेले आते देखा तो उसकी हँसी उड़ायी। वह गरुड़ पर सवार था। उसके अपने दिव्य अस्त्र ही उसके पास थे। शंख, गदा, चक्र और शाङ्‌र्ग धनुष-बाण।

'विष्णु ने राक्षसों का टिड्डी-दल देखा तो अपना शंख बजा दिया। इस शंख की गर्जना से एक बार तो राक्षसों के हृदय दहल उठे। शंख के घोर नाद से चारों दिशायें गूंज उठी थीं। यह एक प्रकार का सचेतक था कि वे लौट जायें।

"वैसे तो एक विमान इनके पास भी था। वह विमान भगवान् शिव ने माल्यवान के पिता सुकेश को दिया था, परन्तु उनके पास अब दिव्यास्त्र नहीं थे।

"गरुड़ को देख राक्षस पत्थरों, ईंटों और तीरों से उस पर प्रहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने लगे। विमान पर्याप्त नीचे उड़ रहा था और कोई-कोई तीर, ईंट, पत्थर विमान से आकर लग रहा था; परन्तु यह इतना सुदृढ़ बना हुआ था कि इन प्रहारों का उस पर प्रभाव नहीं हो रहा था।

"विष्णु ने गरुड़ पर बैठे हुए पूर्ण राक्षस सेना का निरीक्षण किया और इनको कई लाख की संख्या में देख उसने इन लोगों को संकेत किया कि वे लौट जायें। यह संकेत शंख-ध्वनि से ही किया गया था। राक्षसों ने विमान को बिना प्रहार किये उनके सिरों पर मँडराते देखा तो समझा कि देवता भयभीत हो गया है। इतनी बड़ी सेना को देख उसने युद्ध का विचार छोड़ दिया है और वह उनको बार-बार शंख बजाकर लौट जाने की प्रार्थना कर रहा है।

"इस पर तो राक्षसों का और भी उत्साह बढ़ गया। ये समझे कि विजय उनके चरण चुम्बन करने चली आ रही है।

"अतः सबसे पहले माली ने ही अपने तीरों से गरुड़ को छलनी करने का यत्न किया। इस पर विष्णु ने गरुड़ को वेग से राक्षस सेना के सिरों के ऊपर दौड़ाया। गरुड़ के पंखों से इतने वेग से वायु चली कि राक्षस उड़-उड़कर आकाश में ऐसे जाने लगे जैसे कि आँधी में तिनके उड़ने लगते हैं।

"जब विष्णु ने देखा कि उसके सचेत करने पर भी ये लोग नहीं लौट रहे तो उसने शाङ्‌र्ग धनुष निकाला और बाण से तीर छोड़ने आरम्भ कर दिये। शाङ्‌र्ग धनुष भी एक प्रकार का दिव्यास्त्र था। यद्यपि यह सुदर्शनचक्र से कम शक्तिशाली था; इस पर भी जब प्रहार होने लगा तो राक्षसों के वरछे-पर-बरछे उतरने लगे। एक-एक बाण से सौ-सौ राक्षसों का स्वर्गगमन होने लगा।

"माल्यवान का विचार था कि शाङ्‌र्ग धनुष के बाणों की संख्या असीम नहीं हो सकती। उसकी सेना इतनी अधिक है कि विष्णु के बाण समाप्त हो जायेंगे और राक्षस समाप्त नहीं होंगे। इस विचार से उत्साहित हो उसने जय-घोष कर दिया और विमान को ही क्षति पहुँचा धराशायी करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। जब-जब भी गरुड़ झपट कर नीचे आता था और राक्षसों को भगवान् विष्णु के बाणों की मार की सीमा में लाता था तो राक्षस लपक-लपक कर अपने शस्त्रों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से उस पर प्रहार करते थे, परन्तु उसके पंखों से चल रही वायु के वेग से राक्षसों की पंक्तियाँ चारों ओर बिखर जाती थीं कुछ आकाश में उड़ जाते थे और जब भूमि पर गिरते तो मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। दूसरी ओर शाङ्‌र्ग धनुष के वाण विशाल जन-संहार कर रहे थे। राक्षसों और विष्णु के युद्ध का समाचार भूमण्डल में फैल गया था और देवता लोग अपने-अपने विमानों में बैठ युद्ध देखने आ पहुँचे थे।

"राक्षस राजाओं को अपने सैनिकों की संख्या का गर्व था और विष्णु के तुणीर में वाणों की सीमित संख्या का अनुमानिक भरोसा था।

"प्रथम दिवस के उपरान्त माल्यवान और उसके भाइयों ने युद्ध-भूमि का निरीक्षण किया तो वे देख अति चकित हुए कि उनकी सेना आधी से अधिक मौत का ग्रास बन चुकी है। माली भी घायल हुआ था। यद्यपि वह युद्ध के अयोग्य नहीं हुआ था। युद्ध-क्षेत्र में राक्षसों के शव इतने अधिक संख्या में बिखरे थे कि उनका वहाँ से हटवाना सम्भव न समझ उनको वहीं खुले में चील और गिद्धों के खाने के लिए छोड़ कुछ, पीछे हट नया मोर्चा बना लिया।

"विष्णु भगवान् अपने क्षीरसागर वाले प्रासाद में लौट गये थे। प्रातः पुनः सूर्य उदय होने से पूर्व ही गरुड़ पहले दिन की थकावट से चूर-चूर हुए राक्षसों को अपने पंखों की गड़गड़ाहट से नींद से जगाने लगा। राक्षस हड़बड़ी में उठे और युद्ध आरम्भ हो गया।

"इस दिन सायं होने से पूर्व ही राक्षसों के पाँव उखड़ गये और वे सब लंका की ओर भागे। इन भागते हुए राक्षसों का विष्णु ने पीछा किया और अधिक-से-अधिक संख्या में इनको मौत के घाट उतारने का यत्न किया।

"राक्षसों के भाग जाने से आकाश में उड़ते हुए देवताओं ने विष्णु पर पुष्प-वर्षा की और भगवान् का जय-घोष किया।

"उस दिन जब भगवान् विष्णु क्षीरसागर की ओर लौटने लगे तो नारद उन के विमान में आ बैठे।

'आइये मुनिजी ! किधर से आगमन हुआ है ?' विष्णु ने अपने अस्त्र-शस्त्र उतारकर रखते हुए पूछा।

"नारदजी ने अपनी वीणा एक ओर टिका और आसन पर विष्णु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सामने बैठते हुए कहा, 'भगवन् ! कैलाशपुरी से आ रहा हूँ ।'

"विष्णु इसका अर्थ समझते हुए बोले, 'वहाँ महादेव, प्रसन्न तो हैं ?'

'बहुत । परन्तु महाराज, उनकी पत्नी पार्वती देवी का एक सन्देश लेकर आया हूँ ।'

'ओह ! बताइये माता पार्वती क्या चाहती हैं ?'

'वह समझती हैं कि राक्षसों को अपनी दुष्टता का पर्याप्त दण्ड मिल गया है । अब उनको शान्ति से जीवन व्यतीत करने दें ।'

'और उनके शान्ति से जीवन व्यतीत करने का आश्वासन राक्षस राजाओं ने माता पार्वती को दिया है ?'

'ऐसी कोई बात नहीं । देवीजी तो केवल दया भाव से प्रेरित हो यह कह रही हैं । उनको विदित है कि आपके तीखे बाणों ने दो दिन में छः लाख से ऊपर राक्षसों को यम-द्वार दिखा दिया है ।'

'परन्तु मुनिजी ! अभी सेना में दस-बारह लाख के लगभग और हैं और बीस से दस लाख रह जाने पर वे भले और सत्चरित्र हो गये हैं क्या ? क्या इतने से वह परमात्मा की सत्ता को स्वीकार करने लगे हैं ?'

"नारद मुख देखता रह गया । उसे मौन देख विष्णु ने अपने संकल्प की बात कह दी । उसने कहा, 'मुनिवर ! लंका अब खाली होगी । ये द्वीप इनके पूर्वजों को ब्रह्माजी ने दिलवाये थे । तब भी बड़े भाई इन्द्र ने इस पर आपत्ति की थी । उनको दैत्यों पर विश्वास नहीं था और इन द्वीपों की उर्वरा भूमि को चरित्रहीन और विचारहीन व्यक्तियों को न देने का आग्रह किया था । ब्रह्माजी ने अपनी उदारता से इन लोगों के दारिद्र्य को देखकर इनके लिये सुख-सुविधा तथा इनको परिश्रम करने के लिये अवसर देने के लिये इन द्वीपों पर निवास दिया था, परन्तु इन्होंने उस सुविधा का दुरुपयोग किया और सामान्य जनता पर अत्याचार किया ।

'ये क्षमा के योग्य नहीं हैं । जिन साधनों से इन्होंने अत्याचार किया वे साधन भी इनके पास नहीं रहने दिये जायेंगे ।'

'भगवन् !' नारद मुनि का कहना था, 'देवी पार्वती का कहना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि क्षमा श्रेष्ठ-जनों का गुण है। इसे आपको छोड़ना नहीं चाहिये।'

'मुनिवर ! क्षमा करने का विधान उनके लिये है जो अपने दुष्ट कर्मों के लिये पश्चात्ताप करते हैं और उसके लिये प्रायश्चित्त करते हैं। इन्होंने अभी ऐसी कोई बात नहीं की।

'माता पार्वती को अपने पौत्रों को सन्देश भिजवाना चाहिये कि वे अपने पूर्व के कर्मों पर खेद प्रकट करें। भविष्य में ऐसा न करने का वचन दें। तत्पश्चात् वे प्रायश्चित्त करें। प्रायश्चित्त तो ब्रह्माजी ही निश्चय करेंगे, परन्तु इतना तो मैं भी कह सकता हूँ कि जिनके घर-बार लूटे हों, उनको सब लूटा माल तथा उनकी सम्पत्ति कम-से-कम उनके निर्वाह योग्य लौटा दें।'

'कहाँ से दिला दें। वह तो सब समुद्र में डूब गयी है। मेरा अभिप्राय है कि व्यय होकर समाज की वेश्याओं, मद्य-निर्माताओं और शृंगार-प्रसाधन निर्माताओं के पास चली गयी है। यह जन-सागर में विलीन हुआ धन कैसे निकाला जा सकता है ? यह तो अब सम्भव नहीं।'

'तो एक बात और हो सकती है कि वे इन द्वीपों को छोड़कर कहीं अन्यत्र चले जायें।'

'कहाँ चले जायें ?'

'पाताल देश में जा सकते हैं। वहाँ अभी मानव पद-चिह्न नहीं पड़े।'

'मैं यह सन्देश लेकर माल्यवान के पास जाता हूँ। यदि वह मान गया तो आप उसे चले जाने का अवसर देंगे ?'

'हाँ। परन्तु उनके ऐसा मान जाने की सूचना कल से पहले मिल जानी चाहिये और उनका इसके लिये प्रस्थान कल तक हो जाना चाहिये।'

"नारद मुनि को विमान से उतार दिया गया और वह इन्द्र के विमान में सवार हो सुकेश के पुत्र माल्यवान के पास जा पहुँचा।

"इस दिन का युद्ध इतना भयंकर हुआ था कि राक्षस पूर्ण रूप से हताश हो चुके थे। लाखों की संख्या में वे दक्षिण भारत के वनों में पेड़ों के नीचे थककर अचेत पड़े थे। सबके मन में यह इच्छा होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी थी कि अब वे लंका को लौट जायेंगे।

"अतः जब मध्य रात्रि के समय नारद माल्यवान के पास पहुँचा और उसने पार्वती का सन्देश विष्णु को तथा विष्णु की उस सन्देश पर प्रतिक्रिया बतायी तो माल्यवान ने कह दिया, 'इस समय मैं दिन-भर की भाग-दौड़ में इतना थका हुआ हूँ कि आपके इस प्रयास का प्रयोजन समझ नहीं सका। आप कृपया रात विश्राम करिये। प्रातः-काल आपसे बात करूँगा।'

'परन्तु राजा माल्यवान ! आज दिन की भाँति तो विष्णु एक सहस्र योजन की यात्रा कर यहाँ आकर युद्ध आरम्भ कर देगा। तब बातचीत किससे करोगे ?'

"इस पर माल्यवान चिन्तित भाव में उसी समय बात करने लगा। नारद ने राक्षसों को क्षमा माँगने के लिये क्या करना होगा बता दिया। मुख्य बात जो लंका छोड़ पाताल चले जाने की थी वह भी कह दी।

"इस प्रस्ताव पर तो माल्यवान क्रोध से भर गया। उसने भी अपना संकल्प बता दिया, 'एक-एक राक्षस मर जायेगा, परन्तु जीवित रहते विष्णु अथवा किसी देवता को लंका में घुसने नहीं देगा।'

"इस प्रकार बात समाप्त हो गयी और नारद लौटकर विष्णु के पास नहीं गया।

"अगले दिन विष्णु पुनः विमान पर आया और उसके विमान को देखते ही राक्षस लंका की ओर भाग खड़े हुए।

'विष्णु ने समझा कि नारद की सम्मति इन लोगों ने मान ली है और वे लंका खाली करने जा रहे हैं।"

: ६ :

अब सुरेश्वर के घर में कार्य सामान्य रूप में चलने लगा था। भृगुदत्त भी लड़की को धैर्य और सन्तोष से ससुराल में रहते हुए देख मौन था। कभी भगवती अपनी लड़की को पति के जीवनकाल में ही विधवाओं की भाँति रहते/देख दुःख अनुभव करती और महिमा को पता चल जाता तो वह माँ को सान्त्वना देती कि वह अपने जीवन से सन्तुष्ट है।

गरिमा को भी अपनी मूर्खता पर पश्चात्ताप लग रहा था। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझती थी कि उसने ही बहन के सुखी जीवन में विष घोल दिया है।

गरिमा का स्कूल खुल चुका था और वह अपने माता-पिता के घर में जाकर रहने लगी थी। अब वह कभी-कभी ही महिमा से मिलने आया करती थी और महिमा अकेली ही बाबा द्वारा कही कथा लिखा करती थी।

कथा भी एक घटना पर आकर समाप्त हो गयी थी। वह महिमा ने इस प्रकार लिखी थी—

"जब विष्णु ने देखा कि राक्षस सिर पर पाँव रखकर भाग रहे हैं तो उसने यह समझा कि नारद की सम्मति मान ली गयी है। अतः इस दिन विष्णु ने अपने धनुष-बाण से प्रहार नहीं किया। विष्णु गरुड़ पर सवार राक्षसों को लंका की ओर लौटते देखता रहा।

"दिन के उपरान्त दिन यही होता रहा। राक्षस लौटते गये और विष्णु नित्य विमान में आकर देखता रहा कि वे लंका छोड़ते हैं अथवा नहीं।

"विष्णु का यह विचार था कि यदि ये लोग पाताल देश में चले जाते हैं तो फिर व्यर्थ में नर-हत्या करनी ठीक नहीं। एक बात वह जानता था कि राक्षसों के नेतागणों में किसी की भी हत्या नहीं हुई। तीनों भाई अभी तक जीवित और स्वस्थ थे। माली प्रथम दिन युद्ध में घायल हुआ था, परन्तु वह घाव साधारण था और अगले ही दिन वह पुनः युद्धभूमि में आ डटा था।

"लगभग एक मास की वापसी यात्रा के उपरान्त वे लंका द्वीप में लंकापुरी के बाहर जा पहुँचे। विष्णु ने विमान पर से यह देखा कि राक्षस लंकापुरी खाली करने की अपेक्षा लंका की मोर्चाबन्दी करने लगे हैं। वे पुरी की रक्षा के लिये बनी प्राचीर को और सुदृढ़ करने लगे थे। वे अन्य द्वीपों से लंका की रक्षा के लिये सैनिक एकत्रित करने लगे।

"यह देख विष्णु ने नारद मुनि को बुलाया और उनसे पूछा कि 'राक्षस लंकापुरी छोड़कर क्यों नहीं जा रहे।' इस पर नारद मुनि ने अपने माल्यवान से हुए वार्तालाप को बता दिया। इसका अर्थ था कि विष्णु लंका पर आक्रमण कर सकता है। उसने नारदजी से इतना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा, 'मुनिवर ! यदि आपने यह बात पहले बतायी होती तो अब तक लंका खाली की जा चुकी होती और उस समय कम संख्या में नर-हत्यायें करने की आवश्यकता होती। अब तो वहाँ प्रलयकाल जैसी अवस्था उत्पन्न करनी पड़ेगी।'

'जो कुछ होता है और हो रहा है, वह सब श्रीहरि परमात्मा के विधि-विधानानुसार ही हो रहा है। उसमें मैं और आप तो केवल साधन मात्र हैं।'

"विष्णु ने अधिक समय व्यर्थ गँवाना उचित नहीं समझा। उसने उसी दिन लंका को प्रस्थान कर दिया। इस बार उसने अपने कार्य को पूर्ण करने के लिये सुदर्शनचक्र का आश्रय लिया और लंका-द्वार पर पहुँचते ही वहाँ लक्ष-लक्ष सैनिकों को लंका की सुरक्षा के लिये किलेबन्दियाँ करने में लीन देख राक्षसों पर सुदर्शनचक्र से आक्रमण कर दिया।

"यह सैकड़ों सूर्यों के प्रकाश और तेज जैसा स्वरूप धारण कर राक्षसों पर आग बरसाने लगा। राक्षसों के झुण्डों-के-झुण्ड ऐसे मर-मर कर ढेर होने लगे कि जैसे मधुमक्खियाँ अग्नि के सम्मुख जल-जल-कर धराशायी होने लगती हैं।

"विष्णु की इच्छा लंका को भस्म करने की नहीं थी, परन्तु लंका से बाहर लाखों राक्षसों की आग से झुलसे शवों के पहाड़ खड़े हो गये। इस नरक तुल्य प्रचण्ड अग्नि का तेज राक्षस सहन नहीं कर सके और वे समुद्र में डुबकियाँ लगा-लगा अग्नि से बचने का यत्न करने लगे, परन्तु जब समुद्र का जल भी उबलने लगा तो राक्षस जल-पोतों पर सवार हो द्वीप छोड़-छोड़ भागने लगे।

"इस युद्ध में माली और सुमाली राक्षसों के आगे होकर लड़े। उन्होंने गरुड़ पर ही आक्रमण कर दिया। जब राक्षस-सैनिकों पर सुदर्शनचक्र अग्निवर्षा कर रहा था तो माली अपने विमान में चढ़कर आकाश में सुदर्शनचक्र से ऊपर चला गया और वहाँ वह गरुड़ पर बाणों से वर्षा करने लगा।

"इस पर विष्णु ने अपना शाङ्गं धनुष निकाला और एक ही बाण से उसको विमान-सहित भूमि पर उस अग्नि में पहुँचा दिया जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुदर्शनचक्र ने प्रदीप्त कर रखी थी।

"लाखों राक्षसों के शव मशालों की भाँति जल रहे थे और उसकी अग्नि-रूपी चिता में माली भस्म हो गया।

"माल्यवान ने जब भाइयों का इस प्रकार अन्त होते देखा तो समुद्र में छलांग लगा कर अपने को प्रलयंकर अग्नि से बचा लिया। जब माल्यवान लंका छोड़ भागा तो बचे-खुचे राक्षस भी लंका छोड़ गये। लंका जन-शून्य हुई तो विष्णु ने सुदर्शनचक्र को वापस कर लिया।

"देवताओं और मानवों ने सुख का साँस लिया।"

: ७ :

जब महिमा इतनी कथा लिख चुकी तो वह विचार करने लगी कि यह कथा का अन्त तो कुछ अच्छा नहीं हुआ। इस पर भी यह कुछ लोगों के लिये सुखकर हुआ था। जहाँ लाखों राक्षस मारे गये थे, वहाँ उनसे कई गुणा अधिक सुख-आराम से अपने स्वाभाविक जीवन को व्यतीत करते हुए आत्मोन्नति में लग गये थे।

विन्ध्याचल पर भी ऋषियों के आश्रम पुनः स्थापित होने लगे थे।

उस रात महिमा कथा के एक पक्ष के लिये असुखद और दूसरे पक्ष के लिये इच्छित परिणाम को देख गम्भीर विचार में मग्न सोयी तो सो नहीं सकी और रात-भर अपनी और उस काल की घटना पर विचार करती हुई करवटें लेती रही।

प्रातः नियमपूर्वक वह बाबा के कमरे में कीर्तन करने गयी और चुपचाप बैठ अपनी सितार पर भैरव अलापने लगी। उसने कुछ देर तक सितार-वादन कर स्वयं गाना आरम्भ कर दिया।

आज वह अपनी मनःस्थिति के अनुकूल ही एक पद गाने लगी—

'उत्तम नर जग जानहिं स्वप्ना।
अहंकार उर राख न अपना॥
ध्यान धरहिं उर काम बिहाई।
ज्ञान माही अभिमान नसाई॥
उर सन्तोष तजि सब माया।
सोच विचार जीव पर दाया॥'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर वह राग की दृष्टि से इसका विस्तार करने लगी थी। आज बाबा ने पहली बार देखा कि उसकी आँखें भीग गयी हैं और वह आँसू बहा रही है। इस पर भी वह अपने संगीत में लीन थी और उसमें त्रुटि नहीं आ रही थी।

एक घण्टा कीर्तन कर महिमा ने सितार रख दी और अपने आँचल से अपनी गालों से आँसू पोंछने लगी। सुन्दरी ने समीप बैठे पूछ लिया, "महिमा बेटी! क्या विचार कर रही हो?"

"माताजी! रात-भर सो नहीं सकी थी। कल बाबा जी की कथा में विष्णु का कार्य सुना था। उसे हिन्दू लोग परमात्मा का ही स्वरूप मानते हैं। तो क्या परमात्मा ही इतना निर्दयी हो सकता है कि बिना विचार किये लाखों की हत्या कर दे? बाबा ने कहा था कि लंका की प्राचीर के बाहर राक्षसों के शवों के पहाड़-समान ढेर लग गये थे। कहीं-कहीं तो ये प्राचीर से भी ऊँचे हो गये थे।

"और मैं भक्त की वाणी में गा रही थी—

उर सन्तोष तजि सब माया।
सोच विचार जीव पर दाया॥

"मन में बार-बार आ रहा था कि क्या दया का यही स्वरूप है?"

विष्णुशरण हँस पड़ा। हँसते हुए बोला, "यह आज महिमा बेटी कैसे भ्रम में फँस गयी है? विष्णु परमात्मा तो नहीं थे; इस पर भी उनमें ईश्वरीय शक्ति की विशेष मात्रा तो माननी ही पड़ेगी। जानती हो न, भगवान् कृष्ण ने भगवद्गीता में यह लिखा है। वह लिखते हैं—

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम्॥

"भगवान् कृष्ण कहते हैं कि जो-जो लोग भी ऐश्वर्य-युक्त, कान्ति-युक्त और शक्ति-युक्त इस संसार में हैं, उस-उस में तू परमात्मा के तेज का अंश ही समझ।

"परन्तु प्रत्येक मनुष्य में बुद्धि नाम की वस्तु भी रहती है। वह परमात्मा के उस तेज और ऐश्वर्य का प्रयोग तो अपनी बुद्धि से ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है। इसी कारण मैं कहता हूँ कि विष्णु में ईश्वरीय तेज था, परन्तु उस तेज का प्रयोग उसके विचार की बात थी। यदि वह उसका प्रयोग न करता तो माल्यवान बीसियों वर्ष तक दनदनाता रहता और लाखों भले नर-नारियों को असह्य कष्ट देता रहता।

"विष्णु की महिमा इसी में है कि वह ईश्वरप्रदत्त शक्ति का प्रयोग विपरीत दिशा में भी कर सकता था अथवा करता ही नहीं। जैसे महादेव शिव ने नहीं किया था।"

"पर बाबा!" महिमा ने पूछ लिया, "इसका श्रेय क्या लक्ष्मी को नहीं था?"

"हाँ, परन्तु लक्ष्मी में भी तो ईश्वरप्रदत्त सौन्दर्य और ओज बोल रहा था। पार्वती भी ओजमयी स्त्री थी, परन्तु वह अपने पालित पुत्र के मोह में उचित और अनुचित में भेद भूल गयी थी। लक्ष्मी ने उसी ईश्वरीय शक्ति का उपयोग देवताओं और मानवों की रक्षा के लिए किया था।"

"तो यह-भी दया थी?"

"हाँ। यह श्रेष्ठों पर दया थी। दुष्टों पर की गयी दया तो पाप होती है और उसका फल भयंकर होता है। यही कारण है कि भगवान् विष्णु के मन्दिरों में लाखों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी घण्टे बजते है।"

"बाबा! अब नींद आ रही है। रात-भर का उद्विग्न मन कुछ तो उस पद ने शान्त किया था। सन्त ने कहा है—

उर संतोष तजि सब माया।
सोच विचार जीव पर दाया॥

"और शेष आपकी व्याख्या ने सन्तोष कर दिया है। चित्त हल्का हो रहा है और चित्त कर रहा है कि रात-भर की नींद अब ले लूं।"

"हाँ......।" विष्णुशरण अपनी बात समाप्त नहीं कर सका कि भृगुदत्त उस समय वहाँ आ पहुँचा और बताने लगा, "बाबा! आज एक नया समाचार मिला है। उसको बताने ही चला आया हूँ।"

"क्या है?" विष्णुशरण ने पूछा।

सुन्दरी और महिमा भी वहीं थीं। वे भी भृगुदत्त का मुख देखने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी थीं।

भृगुदत्त ने बैठते हुए बताया, "शम्भुदत्त का पत्र मिला है। उसने लिखा है—

'अपने नियमानुसार मैं नित्य प्रातःकाल घूमने के लिये उधर ही जाया करता हूँ जिधर जीजाजी का बँगला है। आज गया था तो वहाँ बँगले पर पुलिस बैठी थी और जीजाजी पुलिस अधिकारियों में बैठे थे। उनको हथकड़ी लगी थी। बँगले के बाहर बैठे एक कान्स्टेबल से पूछने पर पता चला कि यह बाबू अमृतलालजी इन्जीनियर का मकान है। वह कल रिश्वत लेते रंगे हाथ पकड़े गये हैं। आज पुलिस इनकी तलाशी ले रही है। इनकी तिजोरी से तीन लाख रुपया प्रत्यक्षतः रिश्वत के निकले हैं।

'आज बाज़ार में यह समाचार फैल रहा है कि इन्जीनियर साहब की बीवी का अपना आवश्यक सामान छोड़कर शेष सब पर सरकारी अधिकार हो गया है। वह इन्जीनियर साहब की दूसरी पत्नी है और इस समय गर्भवती है।'

"ठीक है।" विष्णुशरण ने कह दिया, "यह होना ही था। यद्यपि मैं इस रूप में तो आशा नहीं करता था। आजकल रिश्वत लेने वाले तो सरकारी अधिकारी प्रायः सब ही हैं। विरले ही हैं जो इस पापयुक्त आय से बचे हुए हैं, परन्तु ऐसे युग में किसी का पकड़ा जाना और सरकार का उसके पीछे इस प्रकार पड़ जाना कि दो ही दिन में सम्पत्ति पर अधिकार कर उसकी पत्नी और पति को प्रत्येक प्रकार की सम्पत्ति से वंचित कर देना सत्य ही विलक्षण है। इसमें कुछ अन्य भी कारण हो सकता है।

"खैर, कुछ भी हो। इस सूचना पर हम क्या करें, यही विचारणीय है। क्यों बेटा, महिमा! तुम क्या कहती हो?"

"किस विषय में, बाबा?"

"अमृत की किसी प्रकार से सहायता करनी चाहिये अथवा नहीं?"

"मैंने उनसे अपने मन से सम्बन्ध-विच्छेद किया है। यदि मैंने इसके लिये कानूनी चाराजोई नहीं की तो इस कारण कि मैं पुनः विवाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना नहीं चाहती । इस कारण तलाक देना अनावश्यक था । जिसको तलाक से लाभ होने वाला था, उसकी ओर से इच्छा अथवा याचना व्यक्त नहीं की गयी ।

"इस कारण मेरे लिये यह घटना ऐसे ही है जैसे किसी अपरिचित व्यक्ति के साथ घटती हो । मेरी इसमें कुछ भी रुचि नहीं । वास्तव में इस विषय पर माताजी को विचार करना चाहिये कि वे क्या चाहती हैं ?"

सुन्दरी ने कह दिया, "घर की व्यवस्था सैद्धान्तिक रूप में बाबाजी के हाथ में है । हम तो उनके द्वारा प्रतिपादित नियमोपनियमों का पालन करने-कराने वाले हैं । वर्तमान स्थिति में भी उनको ही बताना चाहिये कि वे क्या चाहते हैं ?"

"बहू !" बाबा ने सुन्दरी से पूछ लिया, "मेरी कथा में तुम्हें पार्वती का व्यवहार पसन्द है अथवा लक्ष्मी का ?"

"मुझे तो लक्ष्मी का व्यवहार ही श्रेष्ठ प्रतीत हुआ है ।"

"तो बेटी ! तुम्हें अपने पति को कहना चाहिये कि वह लंका की यात्रा कर असुरों का दमन करें ।"

"बाबा !" सुरेश्वर ने बातों का सूत्र अपने हाथ में लेते हुए कहा, "मैं विष्णु नहीं । वह तो आप हैं । न तो मेरे पास गरुड़ सवारी के लिये है और न ही असुर दमन के लिये सुदर्शनचक्र ।"

"तब तो हमें अभी और कष्ट भोगना होगा ।"

081
167882
Central Library
167882
Gurukula Kangri (Deemed ... University) Haridwar

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
वर्ग संख्या R 084.9143 GUR-A आगत संख्या 167882

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
C		
C		
Ta		
E.A.R.		
Recomm. by		
Data Ent. by		
Checked		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar